जैन विधान संग्रह

भक्तामर, कल्याण मन्दिर, मंशापूर्ण महावीर,
नवग्रह जिनदेव, स्वयंभू चौबीसी, सम्मेद शिखर,
माँ जिनवाणी, चौंसठ ऋद्धि सिद्धि, कर्मदहन,
पुष्पगिरी तीर्थ, आचार्य परमेष्ठी

दिगम्बराचार्य श्री 108 सौरभसागर जी महाराज

जैन विधान संग्रह

1. श्री भक्तामर विधान
2. श्री कल्याण मन्दिर विधान
3. श्री मंशापूर्ण महावीर विधान
4. श्री नवग्रह जिनदेव विधान
5. श्री स्वयंभू चौबीसी विधान
6. श्री सम्मेद शिखर विधान
7. माँ जिनवाणी विधान
8. चौंसठ ऋद्धि सिद्धि विधान
9. कर्मदहन विधान
10. पुष्पगिरी तीर्थ विधान
11. गणाचार्य पुष्पदंत सागर विधान (आचार्य परमेष्ठी विधान)

लेखक

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभसागर जी

कृति	:	**जैन विधान संग्रह**
शुभाशीष	:	पुष्पगिरि प्रणेता परम पूज्य गणाचार्य श्री 108 पुष्पदंतसागर जी महाराज
कृतिकार	:	परम पूज्य आचार्य श्री 108 सौरभसागर जी महाराज
संस्करण	:	तृतीया, जून 2024 (1000 प्रतियां)
प्रकाशक	:	सौरभांचल प्रकाशन
प्राप्ति स्थल	:	1. **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र,** पुष्पगिरि, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.) फोन : 07270-22870 2. **श्री दिगम्बर जैन तीर्थ सौरभाँचल,** श्री श्रुत स्कन्ध मन्दिर जी.टी. करनाल रोड, गन्नौर (हरियाणा) 3. **श्री दिगम्बर जैन मंशापूर्ण महावीर क्षेत्र** **जीवन आशा हॉस्पिटल** कावड़ मार्ग, गंगनहर, मुरादनगर (गाजियाबाद)
मूल्य	:	रु. 150/- (पुनः प्रकाशन हेतु)
मुद्रक	:	पारस प्रकाशन, दिल्ली मो.: 9811374961, 9811363613 pkjainparas@gmail.com, kavijain1982@gmail.com

श्री धरसेनाचार्य देव पुष्पदन्त एवं भूतबलि मुनिवरों
को षट्खण्डागम का उपदेश देते हुए।
मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमोगणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम्।।

श्री 1008 आदिनाथ भगवान
सौरभांचल, गन्नौर

श्री 1008 पार्श्वनाथ भगवान 'सौरभांचल'
श्री सम्मेद शिखरजी, मधुबन

1008 श्री मंशापूर्ण महावीर स्वामी जी
गंगनहर, मुरादनगर

अनुक्रमणिका

मंगलं पुष्पदन्ताद्यो (एक ऐतिहासिक सत्य)	5
मंगलाष्टक	7
लघु अभिषेक पाठ	9
अभिषेक मंत्र	10
वृहत् शांतिधारा पाठ	12
परमेष्ठी वंदन	14
विनय पाठ	15
मंगल कलश स्थापना विधि	17
पूजा प्रारम्भ	20
पंचकल्याणक अर्घ्य	21
पंचपरमेष्ठी अर्घ्य	21
श्री जिनसहस्रनाम का अर्घ्य	21
जिनवाणी का अर्घ्य	21
स्वस्ति मंगल विधान	21
चतुर्विंशति तीर्थंकर स्वस्ति विधान	22
परमर्षि स्वस्ति मंगल विधान	23
समुच्चय पूजन	24
श्री भक्तामर विधान	29
श्री भक्तामर स्तोत्र (हिन्दी)	58
श्री कल्याण मंदिर विधान	67
श्री कल्याण मंदिर स्तोत्र (हिन्दी)	94
श्री मंशापूर्ण महावीर विधान	101
श्री मंशापूर्ण महावीर चालीसा	133
श्री नवग्रह जिनदेव विधान	135
श्री स्वयंभू चौबीसी विधान	165

त्रिकाल चौबीसी प्रत्येक अर्घ्य	227
श्री सम्मेद शिखर विधान	235
माँ जिनवाणी विधान	261
चौंसठ ऋद्धि सिद्धि विधान	285
कर्म दहन विधान	323
पुष्पगिरी तीर्थ विधान	361
शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ पूजन	378
आचार्य परमेष्ठी विधान	383
गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी का अर्घ्य	407
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी का अर्घ्य	407
गुरु पुष्पदंत चालीसा	408
गणाचार्य श्री 108 पुष्पदंत सागर जी की आरती	410
श्री ऋषिमण्डल स्तोत्र	411
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी की पूजा	414
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी का अर्घ	418
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी का चालीसा	419
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी की आरती	421
अर्घ्यावली	422
समुच्चय महाअर्घ	429
शांति पाठ (हिन्दी)	430
विसर्जन पाठ (हिन्दी)	431
कुछ विशेष जाप	432
जीवन परिचय	433

“मंगलं पुष्पदन्ताद्यो”
एक ऐतिहासिक सत्य

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।

जैन धर्म में देव शास्त्र गुरु के प्रति श्रद्धा ही सम्यग्दर्शन में कारण है। चौबीस तीर्थंकर एवं 1452 गणधर तथा द्वादशांगमय श्रुतज्ञान होने के उपरांत भी वर्तमान काल में तीर्थंकर महावीर स्वामी का शासन काल होने के कारण मंगल स्वरूप वे ही हैं इसलिए **“मंगलं भगवान् वीरो”** कहकर **“दीपावली पर्व”** को महत्व दिया जाता है तथा उनके प्रथम गणधर गौतम स्वामी की दीक्षा की स्मृति को **“मंगलं गौतमो गणी”** कहकर **“गुरु पूर्णिमा”** के रूप में महत्व दिया जाता है तथा 633 वर्ष बीतने के उपरांत श्रुत विच्छेद न हो जाये इसलिए मंत्र ज्ञाता धरसेनाचार्य ने अपना अंग श्रुतज्ञान आचार्य पुष्पदंत स्वामी को समर्पित किया और कहा भी है–

जयउ धरसेण णाहो जेण महाकम्म पयडि पाहुड सेलो।
बुद्धि सिरेणुद्धरियो समप्पियो पुप्फदंतस्स।।
(ध.पु.भा.–2)

अर्थात् वे धरसेन स्वामी जयवंत हों, जिन्होंने **महाकर्मप्रकृति** प्राभृत रूपी पर्वत को अपनी बुद्धिरूपी मस्तक पर धारण करके **आचार्य पुष्पदंत** को समर्पित किया।

उनसे शिक्षित शिष्य **आचार्य पुष्पदंत** ने **सर्वप्रथम णमोकार मंत्र** को निवद्ध मंगल कर षट्खण्डागम ग्रन्थ लिखना प्रारंभ किया एवं गणधर वलय मंत्र के साथ स्वामी भूतबलि आचार्य ने ग्रन्थ पूर्ण किया। इस उपलक्ष्य में **“श्रुतपंचमी”** पर्व मनाया जाता है यही ऐतिहासिक सत्य है इसलिए शुद्ध ग्रन्थ के प्रथम लेखक के रूप में

ऋषि सभा के अधिपति आचार्य पुष्पदंत स्वामी का स्मरण करते हुए **"मंगलं पुष्पदन्ताद्यो"** कहा जाता है।

ये तीनों ही जैनधर्म के उत्कृष्ट मंगल स्वरूप हैं। इसलिए धवलाकार वीरसेन स्वामी ने कहा–

"तदो मूलतंत कत्ता वड्ढमाण भडारयो, अणुतंत कत्ता गौदम स्वामी उवतंत कत्तारा भूदबली पुप्फदंताद्यो वीयराय दोष मोहा मुणिवरा"

(ध.पु.भा.–1, पृ:73)

अर्थात् मूलग्रंथ कर्ता वर्द्धमान भट्टारक अणुतंत कर्ता गौतम स्वामी, उपतंत ग्रंथ कर्ता भूतबलि पुष्पदंतादि, वीतराग दोष मोह रहित मुनिवर हैं।

इसे ही शुद्ध दिगम्बर आगम प्रमाणानुसार निम्न श्लोक के रूप में कहा जाता है–

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्॥

अर्हंतों की ॐ ध्वनि का, द्वादशांग में सार है।
तीर्थंकर परमेष्ठी वाणी, करती जग उद्धार है॥
जिनवाणी का अक्षर - अक्षर, मंत्र रूप हो जाता है।
पत्रों पर अंकित होकर के, द्रव्य ग्रन्थ कहलाता है॥

आगम के त्रय अक्षर हमको, ''आप्त'' ध्वनि बतलाते हैं।
"गणधर" द्वारा भाव ग्रन्थ रच, द्वादशांग कह जाते हैं॥
म अक्षर "मुनियों" का वाचक, द्रव्य ग्रन्थ प्रस्तुत कर्ता।
षट्खण्डागम् जय हो तेरी, पूजा कर सब दुख हर्ता॥

मंगलाष्टक

(शार्दूलविक्रीडितम् छन्द)

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदन्ताद्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलम्॥

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः, सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्याः जिनशासनोन्नतिकराः, पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्त सुपाठकाः मुनिवराः, रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥

श्रीमन्नम्र सुरासुरेन्द्र मुकुट, प्रद्योत रत्नप्रभा,
भास्वत्पाद नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिन सिद्ध सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगीजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम्॥1॥

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं, रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्रीनगराधिनाथ जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्म सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं, चैत्यालयं श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥2॥

नाभेयादि जिनाधिपास्त्रिभुवन ख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वर प्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु प्रतिविष्णु लांगलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्ये प्रतितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम्॥3॥

ये सर्वौषधिऋद्धयः सुतपसां, वृद्धिंगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांग महानिमित्त कुशला, येऽष्टौ विधाश्चारणाः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो, ये बुद्धि ऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥4॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामरगृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्य-शाखिषु, तथा वक्षार रूप्याद्रिषु।

इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥5॥

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही, वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिजिनपतेः, सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे, नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥6॥

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा, संपादितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥7॥

जायन्ते जिन चक्रवर्ति बलभद्र, भोगीन्द्र कृष्णादयो,
धर्मा देव दिंग नांगविल सच्छश्वद्यशचन्दनाः।
तद्धीना नरकादि योनिषु नरा, दुःखं सहन्ते ध्रुवम्,
स स्वर्गात् सुख रामणीयकपदं कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥8॥

सर्पो हारलता भवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते,
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपुः।
देवाः यान्ति वशं प्रसन्नमनसः किं वा बहु ब्रूमहे,
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति नगैः, कुर्वन्तु ते मंगलम्॥9॥

(माहात्म्यः उपसंहार)

इत्थं श्रीजिन-मंगलाष्टकमिदं, सौभाग्य सम्पत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्, धर्मार्थ-कामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय रहिता, निर्वाण-लक्ष्मीरपि ॥10॥

लघु अभिषेक पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं
स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्-
जैनेन्द्रयज्ञविधिरेष मयाऽभ्यधायि॥1॥

ॐ ह्रीं श्रीं भूः स्वाहा स्नपनप्रस्तावनाय पुष्पांजलिः क्षिपेत्

तिलक लगाने का श्लोक

सौगन्ध्यसङ्गत-मधुव्रतझङ्कृतेन?
संवर्ण्यमानमिव गन्धमनिन्द्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वरवृन्दवन्द्यं-
पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानाम् ॥2॥

ॐ ह्रीं परम-पवित्राय नमः चन्दनानुलेपनं करोमि स्वाहा।

(नव स्थानों पर चन्दन लगाएं : ललाट, कंठ, दो कान, दो भुजा, दो कलाई एवं हृदय)

पीठ पर श्रीकार वर्ण लेखन/थाली पर श्रीकार लेखन करें

श्रीशारदासुमुखनिर्गतबीजवर्णम्,
श्री मङ्गलीकवरसर्वजनस्य नित्यम्।
श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्नं,
श्रीकारवर्णलिखितं जिनभद्रपीठे ॥3॥

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीकारलेखन करोमि स्वाहा।

कलश स्थापन और कलशों में जलधारा देना

सत्पल्लवार्चितमुखान् कलधौतरूप्य,
ताम्रारकूटघटितान् पयसा सुपूर्णान्।
संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्,
संस्थापयमि कलशान् जिनवेदिकान्ते ॥4॥

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः नमोऽर्हते भगवते श्रीमत्पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केसरि-पुण्डरीक-महापुण्डरीक-गंगा-सिन्धु-रोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता सीतासीतोदा-

नारीनकान्ता सुवर्णरूप्यकूला-रक्तारक्तोदा: क्षीराम्भोनिधि-जलं-सुवर्णघट-प्रक्षिप्तं नवरत्नगन्धाक्षत-पुष्पार्चिता-मोदकं पवित्रं कुरु कुरु झं झं झौं झौं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं द्रां द्रां द्रीं द्रीं हं स: स्वाहा इति मन्त्रेण प्रसिञ्च्य जलपवित्रीकरणम् करोमि।

बिम्ब स्थापना करें

य: पांडुकामलशिलागतमादिदेव-
भस्नापयन् सुरवरा सुरशैलमूर्ध्नि।
कल्याणमीप्सुरहमक्षतमोय पुष्पै:,
सम्भावयामि पुर एव तदीयबिम्बम ॥5॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वर्णे प्रतिमा स्थापनं करोमि स्वाहा।

अभिषेक के लिए प्रतिमा जी को अर्घ चढ़ाना

उदकचन्दनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीप सुधूप फलार्ध कै:।
धवलमंगलगानरवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे ॥6॥

ॐ ह्रीं परमब्रह्मणेऽनन्तानन्तज्ञानशक्तये अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद् सहिताय अर्हत्परमेष्ठिने अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रयामृत अभिषेक

''जलाभिषेक''

दूरावनम्र सुरनाथ किरीट कोटी,
संलग्नरत्न किरणच्छविधूसराङ्घ्रिम्।
प्रस्वेदतापमलमुम्तमपि प्रकृष्टैर्-
भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिसिञ्चे॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं क्षीं क्षीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय नमोऽर्हते भगवते श्री-मते पवित्रतर जलेन जिन अभिषेचयामि स्वाहा।

''दुग्धाभिषेक''

सम्पूर्ण शारद-शशांकमरीचिजाल-
स्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रताहै:॥

क्षीरैर्जिनाः शुचितरैरभिषिच्यमानाः।
सम्पादयन्तु मम चित्तसमीहितानि॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते दुग्धाभिषेचयामि स्वाहा॥

''केसराभिषेक''

द्रव्यैरनल्पधनसार चतुः समाढयै,
रामोदवासितसमस्तदिगंतरालैः।
मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंगवानां
त्रिलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं झं झं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं क्ष्वीं द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय द्रावय ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते केसराभिषेचयामि स्वाहा॥

(चार कलशों से अभिषेक)

इष्टैर्मनोरथ शतैरिव भव्य पुंसां,
पूर्णैं सुवर्ण कलशै निखिलै, र्वसानैः।
संसार-सागर-विलंघनहेतु सेतुः,
माप्लावये त्रिभुवनैक पति जिनेन्द्रम्॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालवन्तं वृषभादि-महावीर-पर्यन्त-चतुर्विंशति तीर्थंकर-परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे... प्रान्त......नगरे-मासानामुत्तमे......मासे......पक्षे-शुभ दिने आर्यिका श्रावक श्राविकानां सकल-कर्म-क्षयार्थ पवित्रतर जलेन जिनं अभिषेचयामि नमः।

अर्घ

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्यकैः।
धवल मंगल गान रवाकुले जिनगृहे अभिषेकमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वर्धमानपर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अभिषेकाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृहत् शान्तिधारा पाठ

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थंकराय श्रीमद्-रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्त्तये प्रभामण्डलमण्डिताय द्वादशगणसहिताय, अनन्तचतुष्टयसहिताय, समवसरण-केवलज्ञान-लक्ष्मीशोभिताय, अष्टादश-दोषरहिताय, षट्-चत्वारिंशद्-गुणसंयुक्ताय, परमेष्ठि-पवित्राय, सम्यग्ज्ञानाय स्वयम्भुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय, अनंत-संसार- चक्रप्रमर्दनाय अनन्तज्ञान-दर्शन-वीर्य-सुखास्पदाय त्रैलोक्यवशंकराय, सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे उपसर्गविनाशनाय घातिकर्मक्षयंकराय अजराय अभवाय अस्माकं (अमुक राशिनामधेयानां) व्याधिं घ्नन्तु। श्री जिनाभिषेकपूजन प्रसादात् अस्माकं सेवकानां सर्वदोष, रोग, शोक, भय, पीड़ा, विनाशनं भवतु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेष, दोष, कल्मषाय, दिव्य-तेजोमूर्तये श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्न, प्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रव-विनाशनाय सर्वारिष्ट, शान्ति, कराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा नमः मम सर्वविघ्न-शान्तिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं कुरु-कुरु स्वाहा ।

मम कामं शान्तिं-शान्तिं । रतिकामं शान्तिं-शान्तिं । बलिकामं शान्तिं-शान्तिं । क्रोधं-पापं-वैरं च शान्तिं-शान्तिं । अग्निवायुभ्यं शान्तिं-शान्तिं । सर्वशत्रु-विघ्नं शान्तिं-शान्तिं । सर्वोपसर्गं शान्तिं-शान्तिं । सर्वविघ्नं शान्तिं-शान्तिं । सर्वराज्य दुष्टभयं शान्तिं-शान्तिं । सर्वचौर दुष्टभयं शान्तिं-शान्तिं । सर्व-सर्प-वृश्चिक-सिंहादिभयं शान्तिं-शान्तिं । सर्वग्रहभयं शान्तिं-शान्तिं । सर्वदोषं व्याधिं डामरं च शान्तिं-शान्तिं । सर्वपरमंत्रं शान्तिं-शान्तिं । सर्वात्मघातं परघातं च शान्तिं-शान्तिं । सर्वशूल कुक्षि अक्षि शिरो ज्वररोगं शान्तिं-शान्तिं । सर्वनरमारिं शान्तिं-शान्तिं । सर्वगजाश्व गौ-महिष-अजमारिं शान्तिं-शान्तिं । सर्वसस्य-धान्य-वृक्ष-लता-गुल्म-पत्र-पुष्प-फलमारिं शान्तिं-शान्तिं । सर्वराष्ट्रमारिं शान्तिं-शान्तिं । सर्वक्रूर-वेताल डाकिनी-भयानि शान्तिं-शान्तिं । सर्ववेदनीयं शान्तिं-शान्तिं । सर्वमोहनीयं शान्तिं-शान्तिं । सर्वापस्मारिं शान्तिं-शान्तिं । अस्माकं अशुभकर्म-जनित-दुःखानि शान्तिं-शान्तिं । दुष्टजनकृतान्-मंत्र-तंत्र-दृष्टि-मुष्टि-छल-छिद्रदोषान् शान्तिं-शान्तिं । सर्वदुष्ट-देव-दानव-वीर-नर-नाहर-सिंह-योगिनी-कृत-दोषान् शान्तिं-शान्तिं ।

सर्व-अष्टकुली-नागजनित-विषभयानि शान्तिं-शान्तिं । सर्वस्थावर-जंगम-वृश्चिक-सर्पादिकृत-दोषान् शान्तिं-शान्तिं । सर्वसिंहाष्टा-पदादि कृतदोषान शान्तिं-शान्तिं । परशत्रुकृत-मारणोच्चाटन-विद्वेषण-मोहन-वशीकरणादिकृतदोषान् शान्तिं-शान्तिं । ॐ ह्रीं अस्मभ्यं चक्र-विक्रम-सत्त्व-तेजो-बल-शौर्य-वीर्य-शान्ती: पूरय पूरय। सर्वजीवानंदनं कुरु कुरु जनानंदनं कुरु कुरु भव्यानंदनं कुरु कुरु सर्वचन्द्रविद्य संघानंदन गोकुलानंदनं च कुरु कुरु । सर्वराजानंदनं कुरु कुरु । सर्वग्राम-नगर-खेट-कर्वट-मटंब-पतन-द्रोणमुख-संवाहनानंदनं कुरु कुरु । सर्वानंदनं कुरु कुरु स्वाहा ।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु, व्याधि-व्यसन-वर्जितम्।
अभयं क्षेममारोग्यं, स्वस्तिरस्तु विधीयते।।

श्रीशान्तिरस्तु । शिवमस्तु । जयोस्तु । नित्यमारोग्यमस्तु । अस्माकं तुष्टिरस्तु । पुष्टिरस्तु । समृद्धिरस्तु । कल्याणमस्तु । सुखमस्तु । अभिवृद्धिरस्तु । दीर्घायुरस्तु । कुलगोत्र धनानि सदा सन्तु । सद्धर्म श्रीबलायुरारोग्यै- श्वर्याभिवृद्धिरस्तु । ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा अनाहतविद्यायै णमो अरहंताणं ह्रौं सर्व शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा ।

वृषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व जिनराय।
चन्द्र पुहुप शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज पूजित सुरराय।।
विमल अनंत धरम जस उज्ज्वल, शांति कुंथु अर मल्लि मनाय।
मुनिसुब्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय।।
ॐ ह्रीं श्रीं मंशापूर्ण महावीर जिनेद्राय नमः रक्ष-रक्ष हूं फट् स्वाहा।
ॐ ह्रीं णमो भगवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूए वा विवादे वा रणंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा वर्धमान-मन्त्रेण सर्वरक्षा भवतु स्वाहा।
सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र सामान्य तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः।।

अर्घ

उदक चंदन तंदुल पुष्पकैश्चरु सुदीप सुधूप फलार्घ्यकैः।
धवल मंगल गान रवाकुले जिनगृहे अभिषेकमहं यजे।।
ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वर्धमानपर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो महाशांतिधाराय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमेष्ठी वंदन

ओम णमो अरिहताणं जाप करो भव दु:खहरणं
मंत्र महा सुख दाता है जो जपता सुख पाता है।
जाप करो नित अघ हरणं णमो-णमो अरिहंताणं।।
है अनादि यह मंत्रेश्वर अरुँ द्वादशांग का ईश्वर है।
इससे निकसी है जिनवाणी दिव्य दिवाकर सा दानी
प्राणेश्वर यह भव भय भंजन नमन करो अरिहंताणं।।1।।ओम्......।

अलख ईश्वर नित्य निरंजन निराकार सर्वेश्वर है।
आठ गुणों को प्राप्त किये देवाधिदेव परमेश्वर है।।
मृत्युञ्जयी हो सुन लो गुंजन णमो-णमो श्री सिद्धाणं।।2।। ओम्......।

शान्त सरल मुद्रा के धारी निर्विकार शिशुवत् अविकारी।
गुरु ज्ञानी आचार्य हैं प्यारे दीक्षा देकर सब तारे।।
वीतराग मुद्रा अघ हरणं नमन करो आइरियाणं।।3।। ओम्......।

ज्ञान विकास अज्ञान ह्रास ज्ञान दाता ज्ञानेश्वर है।
परम पवित्र पावन मन जिनका वे ही प्रिय परमेश्वर हैं।।
द्वादशांग जिनका मन रंजन णमो-णमो उवज्झायाणं।।4।। ओम्......।

संत सनातन मन मन्दिर में सदा काल को ध्यान करे।
काम क्रोध को जीत रहे जो उनका मंगल गान करे।
परम प्रकाशी मम तम हरण नमन करो सव्वसाहूणं।।5।। ओम्......।

जिनेन्द्र भगवान की पूजा से उत्पन्न पुण्य प्रथम है सुपात्र को दान देने से उत्पन्न पुण्य दूसरा पुण्य है व्रतों के पालन द्वारा पुण्य तीसरा पुण्य है उपवास करने से चौथा पुण्य है इस प्रकार पुण्यार्थी को पूजा दान व्रत तथा उपवास के द्वारा पुण्य का उपार्जन करना चाहिए।

विनय पाठ

इह विधि ठाडो होयके, प्रथम पढै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्म जु आठ॥1॥
अनंत चतुष्टय के धनी, तुमही हो सिरताज।
मुक्ति-वधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज॥2॥
तिहुँ जग की पीड़ा-हरन, भवदधि शोषणहार।
ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के करतार॥3॥
हरता अघ अंधियार के, करता धर्म प्रकाश।
थिरता पद दातार हो, धरता निजगुण रास॥4॥
धर्मामृत उर जलधि सों, ज्ञानभानु तुम रूप।
तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुँ जग भूप॥5॥
मैं वंदौ जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव।
कर्मबंध के छेदने, और न कछू उपाय॥6॥
भविजन को भवकूप तैं, तुम ही काढ़नहार।
दीनदयाल अनाथपति, आतम गुण भंडार॥7॥
चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल।
सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल॥8॥
तुम पदपंकज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय।
शत्रु मित्रता को धरै, विष निरविषता थाय॥9॥
चक्री खगधर इंद्रपद, मिलै आपतैं आप।
अनुक्रम ते शिवपद लहैं, नेम सकल हनि आप॥10॥
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन।
जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन॥11॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव।
अंजन से तारे प्रभु, जय जय जय जिनदेव॥12॥
थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव॥13॥
रागसहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव।
वीतराग भेट्यो अबै, मेटो राग कुटेव॥14॥

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यञ्च अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान॥15॥
तुमको पूजैं सुरपती, अहिपति नरपति देव।
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव॥16॥
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मैं डूबत भवसिन्धु में, खेव लगाओ पार॥17॥
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारिकैं, कीजे आप समान॥18॥
तुमरी नेक सुदृष्टि तैं, जग उतरत है पार।
हा हा डूबो जात हो, नेक निहार निकार॥19॥
जो मैं कहहूँ औरसों, तो न मिटै उर भार।
मेरी तो तोसों बनी, तातैं करौं पुकार॥20॥
वन्दों पाँचों परम गुरु, सुरगुरु वन्दत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश॥21॥
चौबीसों जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमगसाधक साधु नमि, रच्यो पाठसुखदाय॥22॥
मंगल मूर्ति परमपद, पंचधरो नित ध्यान।
हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान्॥23।
मंगल जिनवर पद नमों, मंगल अर्हंतदेव।
मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दौं स्वयमेव॥24।
मंगल आचारज मुनि मंगल गुरु उवझाय।
सर्व साधु मंगल करो, वन्दौं मन वच काय॥25॥
मंगल सरस्वती मात का, मंगल जिनवर धर्म।
मंगल मय मंगल करो, हरो असाता कर्म॥26॥
या विधि मंगल से सदा, जग में मंगल होत।
मंगल 'नाथूराम' यह भवसागर दृढ़ पोत॥27॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत् (नौ बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

मंगल कलश स्थापना

मंगलं भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं पुष्पदंताद्यो, जैनधर्मोस्तु मंगलम्।।
ॐ जय! जय!! जय!!! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!! नमोऽस्तु!!!
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः।
(पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

1. **सर्वप्रथम शुद्ध जल से स्वयं को एवं हाथों को शुद्ध करें–**
ॐ ह्रीं असुजर सुजर भव स्वाहा।
2. **तत्पश्चात् जल से भूमि शुद्धि करें–**
ॐ ह्रीं भूः शुद्धयतु स्वाहा।
3. **सकलीकरण करें–**
ॐ ह्राँ णमों अरिहंताणं मम शीर्ष रक्ष-रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
ॐ ह्रीं णमों सिद्धाणं मम मस्तक रक्ष-रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
ॐ ह्रूं णमों आयरियाणं मम हृदय रक्ष-रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
ॐ ह्रौं णमों उवज्झायाणं मम नाभि रक्ष-रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
ॐ ह्रः णमों लोए सव्वसाहूणं मम पादौ रक्ष-रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
ॐ नमोऽर्हते सर्व रक्ष-रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
4. **अक्षत् चावल लेकर जमीन पर (जहाँ पर कलश स्थापित करना हो वहाँ) स्वास्तिक बनावें।**
ॐ ह्रीं परम ब्रह्मणे नमो नमः स्वास्ति-2 जीव-2 नन्द-2 वर्द्धस्य-2 विजयस्व-2 अनुशाधि-2, पुनीहि-2 पुण्याहं-2 मांगल्यं मांगल्यं पुष्पाञ्जलि। **(पुष्प क्षेपण करें)**
5. ॐ ह्राँ ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः नमो अर्हते श्रीमते पवित्रतर जलेन मंगल कलशं स्थापितं करोमि स्वाहा। **(यह मंत्र पढ़कर कलश स्थापित करें।)** अपनी जाति, गौत्र, दादा, पिताजी, माताजी, स्वयं, पत्नी, बच्चों का नाम तथा सम्वत्, माह, पक्ष, तिथि, वार, बोलकर कलश स्थापित करें कलश में 5 हल्दी, 5 सुपाड़ी, पीली सरसों, सबा रुपया, धनिया आदि मांगलिक वस्तुएं डाले।
6. ॐ ह्रीं आँ क्रौं अत्र स्थाने विराजित क्षेत्रपाल देवाय आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः ठः स्थापना इदं अर्घं समर्पयामि। **(नैवेद्य पुष्प आदि अर्घ चढ़ायें)**

7. ॐ ह्रीं आँ क्रौं अत्र स्थाने विराजित सर्व वास्तु देवा आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः ठः स्थापना इदं अर्घं समर्पयामि। **(अर्घं समर्पण करें)**
8. ॐ ह्रीं आँ क्रौं वायु कुमार देवाय अत्र स्थाने वायु शुद्धि कुरू-कुरू हूँ फट् स्वाहा। **(हाथों से हवा करें अर्घ समर्पयामि)**
9. ॐ ह्रीं आँ क्रौं मेघ कुमार देवाय अत्र स्थाने भूमिं शुद्धि कुरू-कुरू अँ हँ सँ वँ क्षँ ठँ क्षः फट् स्वाहा **(अर्घं समर्पयामि)**
10. ॐ ह्रीं आँ क्रौं अग्नि कुमार देवाय भूमि ज्वलय-2 फट् स्वाहा। **(कपूर जलावें) (अर्घं समर्पयामि)**
11. ॐ ह्रीं आँ क्रौं षष्टिसहस्त्र संख्येभ्यो नागकुमार देवाय जलाञजलि स्वाहा। **(जलं अर्घं समर्पयामि)**
12. ॐ ह्रीं आँ क्रौं इन्द्र, आग्ने, यम, नैऋत्य, वरूण, पवन, कुबेर, ईशान, सोम, घरणेन्द्र दिग्पाल देवाय आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः स्वाहा। **(अर्घं समर्पयामि)**
13. ॐ ह्रीं आँ क्रौं पंचदश तिथि देवता आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः स्वाहा। **(अर्घं समर्पयामि)**
14. ॐ ह्रीं आँ क्रौं आदित्य चन्द्र-मंगल बुध-गुरू शुक्र-शनि राहु-केतु नवग्रह देवाय आगच्छ-2 तिष्ठ-2 ठः ठः स्वाहा। **(अर्घं समर्पयामि)**
15. ॐ ह्रीं नमोऽर्हदभ्यो पंच परमेष्ठिभ्योः नमः। **(अर्घं)**
16. ॐ ह्रीं श्री वृषभादि वीरान्त चतुर्वीस तीर्थंकरेभ्योः नमः। **(अर्घं)**
17. ॐ ह्रीं वृषभसेनादि गौतमान्त गणधरेभ्योः नमः। **(अर्घं)**
18. ॐ ह्रीं मम कुल गुरूवे नमः। **(अर्घं समर्पयामि)**
19. ॐ ह्रीं आँ क्रौं गौमुखादि चतुर्विंशति यक्षादि देवाय अर्घं समर्पयामि।
20. ॐ ह्रीं आँ क्रौं चक्रेश्वरी ज्वालामालिनी पद्मावति आदि चतुर्विंशति यक्षी देवाय नमः। **(अर्घं समर्पयामि)**
21. ॐ ह्रीं श्रीं ह्रीं धृति कीर्ति बुद्धि शान्ति पुष्टि लक्ष्मी देवीभ्यो नमः। **(अर्घं समर्पयामि)**
22. मम कुल गृह देवो जिनेश्वरो तीर्थंकरो गधधर गुरूओं, मम गुरू भक्ति प्रसादात् प्रसन्नो भवतु मम कुल (जाति) गोत्र का नाम स्मरण करें। मम् धन धान्य पुत्र पौत्रादिक सौख्यं शांतिं पुष्टिं आरोग्यं अक्षीणं भवत् स्वाहा।
23. कलश के सामने दीप धूप कर इष्ट देव की स्तुति करें। अर्घ चढ़ाकर पुनः क्षमा याचना कर विसर्जन करें।।

अर्घ-मंशापूर्ण महावीर स्वामी

श्रद्धा का जल कर में लेकर भक्ति का चन्दन लाया
अक्षत कुसुम चरूवर पावन दीप धूप वन्दन भाया
सिद्ध शिला फल चाह लिये मैं अष्ट द्रव्य चढ़ाऊँगा
श्री मंशापूरण महावीर की पूजा कर सुख पाऊँगा

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी का अर्घ्य

अरमानों की थाली जोयी, नयनों में जल भर लाया।
सुनहिल भावों की केशर ले, शब्द पुष्प तन्दुल लाया।।
तन नैवेद्य बना मन दीपक, मद यौवन की धूप बना।
तव पद में अर्पित सिर फल, पूजन का यह अर्घ बना।

दोहा

तन मन धन अर्पण किया, रहा न कुछ भी शेष।
अष्ट द्रव्य से पूज कर, पाऊँ जिनका भेष।।

ॐ ह्रूं श्री 108 गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-जी-महाराज-अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा।

अर्घ-आचार्य श्री सौरभ सागर जी

जल से घुलते कर्म हमारे, चन्दन से मिलती शीतलता।
पुंज चढ़े जब गुरु चरणों, में पुष्प सुगन्धित है देता।।
नैवेद्य चढ़ाकर क्षुधा नशाऊँ, निज ज्ञान का दीप जलाऊँ मैं।
धूप चढ़ाकर कर्म जलाऊँ, फल से मोक्ष फल पाऊँ मैं।।
आठों द्रव्यों को एक मिलाकर, गुरुवर के गुण गाऊँ मैं।
भव भव के सब पाप नशे, अरिहंत अवस्था पाऊँ मैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी आचार्यश्री सौरभ सागर जी गुरुदेव चरणेभ्यो अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रारम्भ

ॐ जय! जय!! जय!!! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!! नमोऽस्तु!!!
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।
ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः।
(पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं,
साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं।
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो।
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।
ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

अपवित्रः पवित्रो वा, सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पंच नमस्कारं, सर्वपापैः प्रमुच्यते।।1।।

अपवित्रः पवित्रो वा, सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं, स बाह्याभ्यंतरे शुचिः।।2।।

अपराजित मंत्राऽयं, सर्व विघ्न विनाशनः।
मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलं मतः।।3।।

एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं।।4।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्‌बीजं, सर्वतः प्रणमाम्यहम्।।5।।

कर्माष्टक विनिर्मुक्तं, मोक्ष लक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।6।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी भूत पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति, स्तूयमाने जिनेश्वरे।।7।।
(पुष्पांजलिं क्षेपण करें)

पंचकल्याणक का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे कल्याणमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान-निर्वाण-पंचकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचपरमेष्ठी का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले, जिनगृहे जिननाथमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत सिद्धाचार्योपाध्याय, सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनसहस्रनाम का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले-जिनगृहे-जिननाममहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिन-अष्टाधिक-सहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले-जिनगृहे-जिननाममहं यजे॥

ॐ ह्रीं जिनमुखोद्‌भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्ति मंगल विधान

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृतैकहेतुर्,
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष-मयाऽभ्यधायि॥1॥
स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुंगवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।

स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्जित-दृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय।।2।।
स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोध-सुधा-प्लवाय।
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोक विततैक चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल सकलायत विस्तृताय।।3।।
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरुपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगंतुकामः।
आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम्।।4।।
अर्हन्पुराण-पुरुषोत्तम-पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिन् ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि।।5।।

ॐ ह्रीं विधियज्ञ प्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि।

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्वस्ति विधान

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः।
श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दनः।
श्री सुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः।
श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः।
श्री पुष्पदन्तः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः।
श्री श्रेयान् स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः।
श्री विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः।
श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शान्तिः।
श्री कुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः।
श्री मल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः।
श्री नमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः।
श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्द्धमानः।

।।इति श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर-स्वस्ति-मंगलविधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि।।

परमर्षि स्वस्ति मंगल विधान

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः, स्फुरन्मनःपर्यय शुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥1॥

कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीजं, संभिन्न संश्रोतृ पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥2॥

संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान् मतिज्ञान बलाद्वहन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥3॥

प्रज्ञा प्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः, प्रत्येकबुद्धाः दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांग-निमित्त-विज्ञाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥4॥

जंघा-नल-श्रेणि-फलाम्बु-तंतु, प्रसून-बीजांकुर-चारणाह्वाः।
नभोऽङ्गण स्वैरविहारिणश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥5॥

अणिम्नि दक्षाः कुशलाः महिम्नि, लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपूर्वाग्बलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥6॥

सकामरूपित्व-वशित्वमैश्यं, प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥7॥

दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं, घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणंचरन्तः, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः॥8॥

आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशी र्विषाविषा दृष्टि-विषा विषाश्च।
सखिल्ल-विड्जल्ल-मलौषधीशाः, स्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो नः॥9॥

क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंतो मधु-स्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः।
अक्षीणसंवास महानसाश्च, स्वस्ति क्रियासुः परमर्शयो नः॥10॥

॥इति परमर्षि-स्वस्ति-मंगल-विधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि॥

समुच्चय पूजन *

(देव-शास्त्र-गुरु-जिनतीर्थ-अकृत्रिम तीर्थ तीस चौबीसी विद्यमान 20 तीर्थंकर-निर्वाण भूमि की समुच्चय पूजन)

(जैनाचार्य श्री सौरभ सागर जी महाराज द्वारा रचित)

परम् देव अरिहंत सिद्ध गुरु, आचारज साधु उवज्झाय।
माँ जिनवाणी बीस जिनेश्वर, विद्यमान तीर्थंकर ध्याय।।
तीर्थंकर मुनि मोक्ष भूमि अरुँ, अकृत्रिम जिन वंदन है।
तीस चौबीसी तीर्थंकर का, आह्वाहन स्थापन है।।

ॐ ह्रीं अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु पंचपरमेष्ठी समूह-द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह-अकृत्रिम जिन बिम्ब समूह-तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह-अत्र अवतर अवतर-अत्र तिष्ठ-तिष्ठ अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

जल

जल जीवन रक्षित करता है, शांत स्वभावी सरल तरल।
चरणों में जल अर्पित करता, पाने को शुभ मोक्ष महल।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह-द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह-अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय **जलं** निर्वपामीति स्वाहा।

---

*कभी-कभी समय की अल्पता के कारण आराधना के तीव्र भाव उत्पन्न होते हैं उन सभी आराधना चाहने वालों के लिए आचार्यश्री ने महाउपकार करके एक साथ "पंच परमेष्ठी, माँ जिनवाणी, विद्यमान बीस तीर्थंकर, अढाई द्वीप, सम्पूर्ण निर्माण भूमि, अकृत्रिम जिनबिम्ब (प्रतिमा) एवं तीस चौबीसी" की समुच्चय पूजा की रचना की है।

चंदन

ताप विनाशक तन का चंदन, पूज्य चरण में लें आया।
क्रोध द्वेष प्रतिशोध त्यागकर, शीतल सुरभित गुण गाया।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह संसार ताप विनाशनाय **चंदनं** निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

सिद्ध शिला का वासी आतम, पापी बन भव घूम रहा।
त्रय योगों को स्थिर करके, द्रव्य चढ़ा मन झूम रहा।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अक्षय पद प्राप्ताय **अक्षतं** निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

काम भोग का रोग भयंकर, मन बगियाँ में खिलता हैं।
वैरागी प्रभु के सम्मुख आ, काम भाव सब मिटता हैं।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह कामबाण विनाशनाय **पुष्पं** निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

पतितोद्धारक आप निराकुल, क्षुधारोग से पीड़ित हूँ।
धर्म ध्यान की औषध पाकर, भक्ति भाव से जीवित हूँ।।
परमेष्ठी अरु माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह क्षुधा रोग विनाशनाय **नैवेद्यं** निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

मिथ्या भाव का महा तिमिर प्रभु, काल अनादि से भीतर।
तव दर्शन की शुभ्र दीप से, ज्योतिर्मय आतम अंदर।।
परमेष्ठी अरु माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह मोहांधकार विनाशनाय **दीपं** निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

तव चरणों की धूपायन में, कर्म धूप खेनें आया।
धर्म गंध चारों दिश फैले, मन पूजा कर हर्षाया।।
परमेष्ठी अरु माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अष्ट कर्म विनाशनाय **धूपं** निर्वपामीति स्वाहा।

फल

भक्ति भाव की दिव्य तरु में, चढ़कर रत्नत्रय पाऊँ।
जिन गुण फल आतम में प्रगटे, सिद्धालय में रम जाऊँ।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह–विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह–तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह मोक्षफल प्राप्ताय **फलं** निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

अष्ट द्रव्य का अर्घ थाल लें, श्रद्धा से अर्पित करता।
है अनर्घ पद पावन तेरा, पाने मन उलसित होता।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह–विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह–तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अनर्घ्य पद प्राप्ताय **अर्घम्** निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

पंचपरम गुरु परमेष्ठी हैं, पूज्य पुरुष अरिहंत मुनि।
सिद्ध निरामय निराकार हैं, अष्ट कर्म के कष्ट हनि।।1।।
आचारज उवज्झाय साधुगण, ज्ञानध्यान तप लीनयति।
णमोकार नित जपकर करता, चरण वंदना जैनमति।।2।।
ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व प्रभो
चन्द्र पुष्प शीतल श्रेयांश पद, वासु विमलानन्त नमो।।3।।
धर्म शान्ति कुन्थु अरनाथा, मल्लि मुनिसुव्रत नमि जपूं।
नेमी पारस महावीर जी, वर्तमान चौबीसी भंजू।।4।।

तीर्थराज सम्मेद शिखर जी, अष्टापद पावा गिरनार।
चम्पापुर सह ढाई द्वीप की, मोक्ष भूमि बन्दूँ शतवार॥5॥
सीमंधर से अजितवीर्य तक, विद्यमान श्री बीस जिनेश।
क्षेत्र विदेह में देह रहित हो, हरते सारे कर्म क्लेश॥6॥
आठ कोटि अरुँ छप्पन लक्षा, सत्तावन हज्जार कहें।
चार शतक इक्यासी प्रतिमा, नमन उन्हें शतवार करें॥7॥
जिनप्रतिमा अकृत्रिम जग में, दिव्य रूप है वृहद विशाल।
ऊर्ध्व अधो अरुँ मध्य लोक के, जिन प्रतिमा बन्दूँ त्रयकाल॥8॥
ऐरावत और भरत क्षेत्र के, तीर्थंकर गुणगान करूँ।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीस चौबीसी ध्यान धरूँ॥9॥
प्रभु पूजन दर्शन वंदन से, निद्धत निकाचित कर्म कटें।
अनुपम आत्मिक अव्यय सुख का, सूरज निज आतम प्रगटे॥10॥
दिव्य ध्वनि की निर्मल वाणी, माँ जिनवाणी कहलाती।
दिव्य ज्ञान दे अन्तर्मन की, कल्मषता सब धो जाती॥11॥
परमेष्ठी जिनवाणी माता, क्षेत्र विदेह के बीस जिनेश।
सिद्ध भूमि अकृत्रिम प्रतिमा, तीस चौबीसी के तीर्थेश॥12॥
देव शास्त्र गुरु तीरथ भूमि, तीर्थंकर को सदा नमूँ।
अर्घावली चरणों में देकर, शुद्धातम को सदा भजूँ॥13॥

दोहा- **कर्म रहित जिनदेव की, भक्ति करे कल्याण।**
"सौरभसागर" नित नमें, पाने शाश्वत धाम॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर समूह जयमालाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **परमेष्ठी श्रुत बीस जिन, तीस चौबीसी ध्याय।**
अकृत्रिम जिनराज भज, सिद्ध भूमि सिर नाय॥

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

श्री मानतुंगाचार्य विरचित

1. श्री भक्तामर विधान

(आदिनाथ स्तोत्र)

श्री 1008 आदिनाथ भगवान

सौरभाँचल, गन्नौर (हरियाणा)

पद्यानुवादक

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

1. श्री भक्तामर विधान

माण्डला

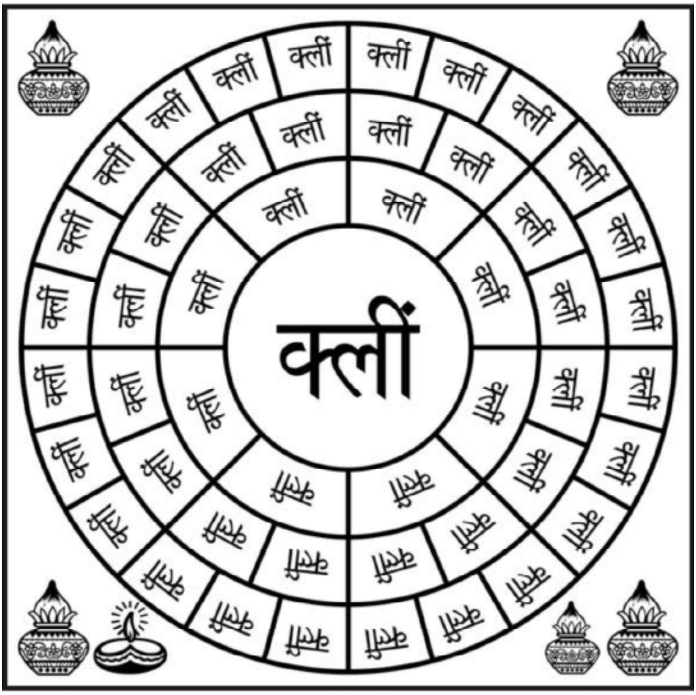

कुल अर्घ्य 49 : प्रथम वलय-8, द्वितीय वलय-16, तृतीय वलय-24

भक्तामर व्रत विधि

व्रतारम्भ	:	किसी भी माह की अष्टमी या चतुर्दशी को
अवधि	:	1 वर्ष से 4 वर्ष 48 दिन
व्रत पूजा	:	व्रत वाले दिन भक्तामर विधान, पूजा या पाठ करें।
जाप	:	ॐ ह्रीं क्लीं ऐं श्रीं अर्हं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः।
व्रत विधि	:	48 उपवास या एकासन या चार या छः रस त्याग

श्री भक्तामर विधान प्रारम्भ

स्थापना

हे दिव्य विभूति आदि जिनेश्वर, मोक्ष सुखों के कर्ता हो।
भव अर्णव के तारण हारे, लोकालोक के दृष्टा हो॥
आह्वानन संस्थापन कर मन, गद्‌गद हो पुलकित होता।
जगत्पूज्य हे सिद्ध स्वरूपी, दर्शन कर प्रमुदित होता॥
हृदय विराजो संकटहर्ता, जगति का उद्धार करो।
पाद पद्‌म की पूजा करता, मम भक्ति स्वीकार करो॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर-सम्पन्न! श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर-सम्पन्न! श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर-सम्पन्न! श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्र अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

दिव्य ध्वनि की पावन गंगा, निर्मल वचनों से बहती।
भव्य जीव के हृदय कमल को, सिंचित कर पावन करती॥
जल से भिन्न कमल वत् जीकर, निज दर्शन कर पाऊँगा।
चरणों में जल की धारा दें, जन्म जरा विनशाऊँगा॥

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

समवशरण में चारों दिश में, मुख अम्बुज दर्शन होता।
क्रोध बैर क्षण में नश जाता, मन पावन पुलकित होता॥
पाप ताप संताप हरण को, चंदन चरण चढ़ाऊँगा।
आदिनाथ की पूजा करके, शीघ्र अमरता पाऊँगा॥

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

शुभ्र अभ्र-सा शाली तन्दुल, ऋजु भावों से मैं लाऊँ।
कर्म कलंक मिटाओ स्वामी, सुख सिन्धु में रम जाऊँ।।
आदिनाथ कैलाश गिरी से, अक्षय निधि को पाया है।
चरण कमल में अक्षत अर्पित, मन मेरा हर्षाया है।।

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अक्षयपद-प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

सूर्योदय में खिला खिला, संध्या में ये मुरझाता है।
क्षण भंगुर जीवन की कलियाँ, पुष्प पाठ सिखलाता है।।
चंचल मन स्थिर हो जायें, कामबाण मेटो स्वामी।
सुमन चढ़ाकर सुमन खिलाऊँ, शक्ति दो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

जिसके खातिर प्रतिदिन प्रभुवर, पाप ही पाप कमाता हूँ।
क्षुधावेदनी नाश करन को, चरुवर चरण चढ़ाता हूँ।।
तीर्थंकर हे आदि प्रभुजी, वर्षों तक उपवास किये।
महातपस्वी ज्ञानी ध्यानी, कर्म कालिमा नाश किये।।

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

घृत का दीपक मृणमय मनहर, जगमग जगमग करता है।
बाहर का तम पीकर वह तो, अंधकार सब हरता है।।
चरण कमल में दीप समर्पित, केवल दीप जलाऊँगा।
तेरे सम निश्चल ज्योति पा, अजर अमर हो जाऊँगा।।

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोह-अंधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

चिन्मय ज्ञायक की शुचि सरिता, ध्यान अवस्था में बहती।
तप की अग्नि प्रज्वल्लित हो, अष्ट कर्म क्षण में दहती॥
आदिनाथ के चरण कमल में, भक्ति धूप मैं खेऊँगा।
निज पद पाने जिन पद पूजा, का आनन्द मैं लेऊँगा॥

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

रंग बिरंगे सुन्दर फल ये, मन को आकर्षित करते।
पूजा में चढ़ करके ये फल, तन मन को हर्षित करते॥
ऋषभनाथ हे आदि जिनन्दा, तरुवर फल स्वीकार करों।
पूजा का फल मोक्ष महाफल, देकर मम उद्धार करों॥

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल-प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

निर्मल नीर सुगन्धित चन्दन, सुन्दर तन्दुल ले आया।
पुष्प दीप नैवेद्य धूप ले, शुभ फल पूजन में लाया॥
हे अनर्घ पद मुक्ति का प्रभु, पाने अर्घ चढ़ाऊँगा।
आदिनाथ की पूजा करके, सारे विघ्न नशाऊँगा॥

ॐ ह्रीं परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक अर्घ्य

तैंतीस सागर तक स्वर्गों में, चर्चा में ही लीन रहें।
सिद्ध शिला से थोड़े नीचे, भक्ति में तल्लीन रहें॥
माता मरुदेवी कुक्षी में, दूज बदी आषाढ़ आयें।
नाभिराय के घर आँगन में, रतन बरसते सुख पायें॥

ॐ ह्रीं आषाढ-कृष्ण-द्वितीयायां गर्भ-कल्याणक-प्राप्ताय परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत वदी नवमी के शुभ दिन, तीर्थंकर अवतार हुआ।
भोग भूमि में कर्म भूमिसा, अतिशय मय उद्धार हुआ।।
सहस सुवासित कलशो से फिर, पाण्डुक वन अभिषेक हुआ।
अयोध्या की गली गली में, खुशियों का अतिरेक हुआ।।

ॐ ह्रीं चैत्र-कृष्ण-नवम्यां जन्म-कल्याणक-प्राप्ताय परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक नृत्य ने आदिश्वर के, जीवन की बदली सब धार।
जगती में कुछ सार नहीं है, ये तो है दुःख का आगार।।
धन वैभव को छोड़ दिया, और छोड़ चले सारा परिवार।
भीषण वन में शीत उष्ण में, धारा तप बनकर अनगार।।

ॐ ह्रीं चैत्र-कृष्ण-नवम्यां तप-कल्याणक-प्राप्ताय परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रंग रंगीला फागुन महीना, उड़ने लागा धर्म गुलाल।
फागुन ग्यारस को मुनिवर ने, प्राप्त किया था केवलज्ञान।।
दिव्य ध्वनि को सुनकर भविजन, हर्षित हो गए सब नर नार।
टूटी नैया पार लगा दो, ओ सृष्टि के तारनहार।।

ॐ ह्रीं फाल्गुन-कृष्ण-एकादश्यां ज्ञान-कल्याणक-प्राप्ताय परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्ष निकेतन वरन करन को, योग निरोध करे धर ध्यान।
अष्टापद से आदिश्वर ने, पाया था फिर पद निर्वाण।।
निज आतम कल्याण किया और, किया प्रभु ने जग कल्याण।
तृतीय काल में तीन लोक के, अधिनायक बन गये भगवान।।

ॐ ह्रीं माघ-कृष्ण-चतुर्दश्यां मोक्ष-कल्याणक-प्राप्ताय परम-शान्ति-विधायकाय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पांजलि

जिनदेव की पूजा करे, गौवक्त्र यक्ष आयके।
चक्रेश्वरी सेवा करे, नित चित्त को हर्षायके॥
सम्यक्त्व से परिपूर्ण है, गुणशाली देवी-देवता।
विघ्न बाधा दूर हो, हम दे रहे हैं नैवता॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभनाथ-पादारविन्द-सेवक-गोवक्त्रयक्षाय श्रीजिनमार्गरक्षिकायै: चक्रेश्वर्यै आगत-विघ्न-निवारकाय पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपामि)

अष्टदल कमल पूजा प्रारम्भ

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम्।
सम्यक् प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम्॥1॥

मणि मुक्ता रत्नों से शोभित, देव झुकाते माथा हैं।
पाप तिमिर में ज्योतित करता, आदि युग के विधाता हैं॥
भव सिन्धु में पतित जनों की, रक्षा करते जिन भगवान।
चरण कमल में सू रीति से, भाव सहित करते परणाम॥1॥

ॐ ह्रीं विश्वविघ्नहराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा-
दुद्भूतबुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः।
स्तोत्रै-र्जगत्-त्रितय-चित्त-हरै-रुदारैः,
स्तोष्ये किलाह-मपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥2॥

द्वादशांग के ज्ञान से जन्मी, तेरी स्तुति हुई प्यारी।
शत इन्द्रों की स्तुति ही तो, जग जन के हैं चितहारी॥

भाव भक्ति से विस्मयकारी, स्तुति आदि स्वामी की।
करता हूँ मैं प्रमुदित होकर, तद्भव मुक्तिगामी की॥2॥

ॐ ह्रीं नानामरसंस्तुताय सकलरोगहराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय-हृदय-स्थिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ,
स्तोतुं समुद्यत-मति-र्विगत-त्रपोहम्।
बालं विहाय जल-संस्थित-मिन्दु-बिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥3॥

बिना विचारे बालक जल में, छाया चन्द्र को ग्रहण करे।
वैसे जड़ धी बिन लज्जा के, हम तेरा स्तवन करें॥
जिनके पाद पीठ का पूजन, हर्षित होकर देव करें।
उन जिन भगवन के स्तवन को, तत्पर हो स्वयमेव करें॥3॥

ॐ ह्रीं मत्यादिसुज्ञानप्रकाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्तुं गुणान् गुण-समुद्र! शशाङ्क-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरु-प्रतिमोपि बुद्ध्या।
कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतु-मल-मम्बु-निधिं भुजाभ्याम्॥4॥

प्रलय काल की तीव्र पवन से, क्रोधित मगरों से भरपूर।
अम्बूनिधि को बाहुबल से, पार करे ना कोई शूर॥
हे गुण सागर! चन्द्रकान्तमय, तेरा रूप है आभावान।
बृहस्पति सम बुद्धिमान भी, कर न सके महिमा का बखान॥4॥

ॐ ह्रीं नानादुःख समुद्रतारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश,
कर्तुं स्तवं विगत-शक्ति-रपि प्रवृतः।
प्रीत्यात्म-वीर्य-मवि-चार्य मृगी मृगेन्द्रं,
नाभ्येति किं निज-शिशोः परि-पाल-नार्थम्॥5॥

स्तुति करने को आया हूँ, हे मुनि! श्रेष्ठ भक्ति से मैं।
हीन बुद्धि पर ध्यान न देना, भक्ति करूँ निज शक्ति से मैं॥
सिंह के सम्मुख शिशु रक्षा हितु, बिना विचारे मृगी जाती।
शक्ति रहित वश प्रेम के होकर, आत्म बली न भय खाती॥5॥

ॐ ह्रीं सकल-कार्य-सिद्धिकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अल्प-श्रुतं श्रुत-वतां परिहास - धाम,
त्वद् भक्ति रेव मुखरी-कुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किल-मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिका-निक-रैक-हेतुः॥6॥

अल्प ज्ञानी मैं विद्वानों के, परिहासों का धाम बना।
तेरी भक्ति बरबस मुझको, करवाती वाचाल पना॥
आम्र मंजरी प्राप्ति हेतु, मधुर-मधुर गुंजन करती।
कोकिल काली कलरव करके, जन मन है रंजन करती॥6॥

ॐ ह्रीं अयाचितार्थप्रतिपादनशक्ति-सहिताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वत्-संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात्-क्षय-मुपैति शरीर-भाजाम्।
आक्रान्त-लोक-मलि-नील-मशेष-माशु,
सूर्यांशु-भिन्न-मिव शार्वर-मन्ध-कारम्॥7॥

तेरी अनुपम स्तुति से ही, खुलते भव बन्धन के पाश।
पलक झपकते ही हो जाता, प्राणी के कर्मों का नाश॥
तीन लोक का गहन तिमिर, जब भ्रमर सरीखा काला हो।
सूर्य किरण के आते ही, ज्यों हो जाता उजियाला हो॥7॥

ॐ ह्रीं सकलपापफलकष्ट-निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मत्वेति नाथ! तव संस्तवनं मयेद-
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ता-फल-द्युति-मुपैति ननूद-बिन्दुः॥8॥

ऐसा लखकर नाथ आपकी, भक्ति में विश्वास करूँ।
स्तुति को प्रारंभ करूँ और, सज्जन मन आनन्द भरूँ।
मतिहीन की तुम प्रभाव से, भक्ति जन की मन हरती।
कमल पत्र पर ओस बूँद ज्यों, मोती जैसी द्युति करती॥8॥

ॐ ह्रीं अनेक संकट संसारदुःख-निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सुर नर से बन्दित प्रभु, आदिनाथ भगवान।
जल फल से पूजा करूँ, करो मेरा कल्याण॥

ॐ ह्रीं अष्टदल कमलाधिपतये श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षोडशदल कमल पूजा

आस्तां तव स्तवन - मस्त - समस्त - दोषं,
त्वत्-संकथा पि जगतां दुरि-तानि हन्ति।
दूरे सहस्र - किरणः कुरुते प्रभैव,
पद्मा-करेषु जलजानि विकास-भाञ्जि॥9॥

पावन स्तुति के प्रभाव से, दूर रहे कल्मश राशि।
पुण्य कथा ही पाप नाश में, सक्षम है जो जगवासी॥
नभ में रहता है किरणाकर, स्वयं प्रभा फेंका करता।
परस मात्र से कमल पुष्प ज्यों, प्रमुदित होकर है खिलता॥9॥

ॐ ह्रीं सकलमनोवांछितफलदात्रे क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नात्यद् भुतं भुवन - भूषण भूतनाथ!,
भूतै-र्गुणै-र्भुवि भवन्त-मभिष्टु-वन्तः।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्या-श्रितं य इह नात्म समं करोति॥10॥

हे जगभूषण भूतनाथ, ना विस्मय की यह बात रही।
सद्गुण द्वारा तेरी महिमा, भूपर तव सम बना रही।
निज सम मालिक भृत्य को, करता यदि हुआ सेवक गुणवान।
ना करता निज सम सेवक को, नहीं कहा जाता धनवान॥10॥

ॐ ह्रीं अर्हज्जिनस्मरणसम्भूताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्ट्वा भवन्त-मनि-मेष-विलोक-नीयं,
नान्यत्र तोष-मुपयाति जनस्य चक्षुः।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धोः,
क्षारं जलं जल-निधे-रसितुं क इच्छेत्॥11॥

अनिमिष दृग कर तुम्हें देखकर, नयनों को बहुतोष हुआ।
मानव को फिर अन्य देव लख, जरा नहीं संतोष हुआ।
दुग्ध सिन्धु का चन्द्र किरण सम, निर्मल जल जो करता पान।
खारा पानी को पीने की, चाह करेगा कौन पुमान॥11॥

ॐ ह्रीं सकलतुष्टिपुष्टिकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणु-भिस्त्वं,
निर्मापितस्-त्रिभुवनैक-ललामभूत!।
तावन्त एव खलु ते प्यणवः पृथिव्यां,
यत्ते समान-मपरं न हि रूप-मस्ति॥12॥

निर्मल राग रहित अणुओं से, निर्मापित तव देह महान।
त्रिभुवन की सारी सुन्दरता, समा गई है तव तन आन॥

संख्या निश्चित परमाणु की, तव रचनाकर हुईं खतम्।
पृथ्वी पर तेरे सम सुन्दर, दिखता ना है कोई रतन॥12॥

ॐ ह्रीं वांछित-रूप-फल-शक्तये क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्त्रं क्व ते सुर-नरो-रग-नेत्र हारि,
निःशेष-निर्जित-जगत्-त्रितयोप-मानम्।
बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशा-करस्य,
यद्-वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम्॥13॥

नर देवों और नागेन्द्रों के, नयनों को हरने वाले।
जीत चुके हो सर्व रूप को, कमल चन्द्र उपमा वाले॥
कहां कलंकी श्यामाकर और, कहां आपका मुखमनहर।
द्युति हीन दिन में हो जाता, ढाक पत्र सम दोषाकर॥13॥

ॐ ह्रीं लक्ष्मीसुखविधायकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्ण-मण्डल-शशाङ्क-कला-कलाप,
शुभ्रा गुणास्-त्रिभुवनं तव लङ्घयन्ति।
ये संश्रितास्-त्रिजगदीश्वर नाथ-मेकम्,
कस्तान् निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम्॥14॥

पूर्ण चन्द्र मण्डल सम उज्ज्वल, लंघन करती तीनों लोक।
गुण नायक के आश्रित जो भी, उसको न सकता कोई रोक॥
जगह जगह पर फैल रही है, निर्मल गुण राशि भगवान।
तेरे गुण की स्तुति करता, परगुण ना इतना बलवान॥14॥

ॐ ह्रीं भूतप्रेतादिभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्ग-नाभिर्-
नीतं मना-गपि मनो न विकार-मार्गम्।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिता-चलेन,
किं मन्द-राद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्॥15॥

स्वर्ग वधु हर सकी न मन को, किंचित भी विकार नहीं।
इसमें विस्मय का कुछ भी तो, दिखता है आधार नहीं॥
प्रलयकाल की तीव्र पवन से, गिरि शिखर हिल जाता है।
किन्तु तनिक क्या मेरु पर्वत, वायु से हिल पाता है॥15॥

ॐ ह्रीं मेरुवन्मनोबलकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्धूम - वर्तिरपवर्जित - तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत्-त्रय-मिदं प्रकटी-करोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिता-चलानांम्,
दीपो परस्तव-मसि नाथ! जगत्-प्रकाशः॥16॥

धूम नहीं न बाती तेल है, फिर भी त्रिभुवन आलोकित।
बुझा सके न तव दीपक को, वायु गिरि जो करे कंपित॥
अपर दीप न तव दीपक सम, रात दिवस जलता रहता।
तेरे दीपक की तुलना ना अन्य दीप है कर सकता॥16॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यलोकवंशकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टी-करोषि सहसा युगपज्जगन्ति।
नाम्भो-धरो-दर-निरुद्ध महा-प्रभावः,
सूर्याति-शायि-महि-मासि मुनीन्द्र! लोके॥17॥

हे मुनिन्द्र! तव महिमा का ना, सूरज हो सकता है अस्त।
तीन लोक आलोकित करता, कर सकता ना राहू ग्रस्त॥
गगन मध्य का सूरज जग में, छिपता उगता दिन प्रतिदिन।
दिव्य दिवाकर आप सूर्य हो, कर न सके कोई छवि हीन॥17॥

ॐ ह्रीं सर्वरोगप्रतिरोधकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्यो-दयं दलित-मोह-महान्ध-कारं,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारि-दानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्ज-मनल्प-कान्ति,
विद्यो-तयज्-जगद पूर्व-शशाङ्क-बिम्बम्॥18॥

नित्य उदयतम मोह के नाशक, राहू के न ग्रास बने।
मेघों से न ढकने वाले, कान्तिमान हो आप्त बने॥
चन्द्र बिम्ब सम शोभित होता, नीलकमल मुख ज्योतिर्मय।
प्रशमाकर योगीश्वर अघहर, अविनश्वर हो तुम अव्यय॥18॥

ॐ ह्रीं शत्रुसैन्यस्तम्भकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किं शर्वरीषु शशि-नाह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्-मुखेन्दु-दलितेषु तमःसु नाथ!।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्-जलधरै-र्जलभार-नम्रैः॥19॥

हे प्रभु तव मुख के सम्मुख तो, अंधकार नश जाता है।
दिन में दिनकर रात कलामुख, जरा काम न आता है॥
धान्य खेत में परिपक्व हो, वायु में लहराता है।
सघन मेघ जल भार से नम्री, काम नहीं कुछ आताहै ॥19॥

ॐ ह्रीं सकलकालुष्य-दोषनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृताव-काशं,
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
नैवं तु काच-शकले किरणा-कुलेपि॥20॥

स्वपर प्रकाशक ज्ञान आपका, जैसा शोभित होता है।
अन्य देव हरिहर आदिक में, ज्ञान श्रेष्ठ ना होता है॥

जैसी महिमा महारतन की, जग में शोभा पाती है।
वैसी महिमा काँचखण्ड की, कभी नहीं हो पाती है॥20॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानप्रकाशितलोकालोकस्वरूपाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्ये वरं हरि-हरादय एवं दृष्ट्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोष-मेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन् मनो हरति नाथ! भवान्तरेपि॥21॥

नाथ मानता हूँ इस जग में, हरिहरादिक देव भले।
जिन्हें देख मन तुझमें रमता, आप विषय संतोष मिले॥
नहीं प्रयोजन अन्य देव से, तुष्ट हुआ मन दर्शनकर।
कोटि जन्म भी आप सिवा ना, मम-मन को सकता है हर॥21॥

ॐ ह्रीं सर्वदोषहरशुभदर्शनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्व-दुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र-रश्मिम्,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुर-दंशु-जालम्॥22॥

निखिल विश्व की सारी माता, जनती रहती शत संतान।
किन्तु आप सम जनने वाली, दिखती ना है मात महान॥
सर्व दिशाएँ धारण करती, तारागण का उजियाला।
पूर्व दिशा ही जनती रहती, सूर्य सहस्र किरणों वाला॥22॥

ॐ ह्रीं अद्भुतगुणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वा मा-मनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्णा-ममलं तमसः पुरस्तात्।
त्वा-मेव सम्य-गुप-लभ्य जयन्ति मृत्युंम्,
नान्यः शिवः शिव-पदस्य मुनीन्द्र! पन्थाः॥23॥

तुम्हें मानते मुनिजन हे प्रभु! परम पुरुष और तमनाशी।
सूर्य समा तेजस्वी निर्मल, पाते पद हो अविनाशी॥
तेरे चरण युगल को पाकर, मृत्यु पर जय पाते हैं।
उत्तम यही मोक्ष का मारग, अन्य मार्ग भटकाते हैं॥23॥

ॐ ह्रीं प्रेतबाधानिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वामव्ययं विभु-मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यं,
ब्रह्माण-मीश्वर-मनन्त-मनङ्ग-केतुम्।
योगीश्वरं विदित-योग-मनेक-मेकं,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति सन्तः॥24॥

संत पुकारें कई नामों से, अविनाशी अव्यय ऋषिराज।
सर्वव्यापी जगदीश्वर ब्रह्मा, संख्यातीत या योगीराज॥
ज्ञान स्वरूपी आदि पुरुष प्रभु, मकरध्वज या गिरामपति।
विदित योग या अमल आत्मा, सत्य परायण सदागति॥24॥

ॐ ह्रीं सहस्रनामाधीश्वराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

कर्म रिपु को नाशकर, पाया केवलज्ञान।
समवशरण सब छोड़कर, मोक्ष गए भगवान॥
अर्घ लिया करपात्र में, श्रद्धा मन में लाय।
इच्छित फल देना विभु, नमो नमो जिनराय॥

ॐ ह्रीं षोडशदल-कमलाधिपतये श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्विंशतिदल कमल पूजा

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय-शङ्करत्वात्।

धातासि धीर! शिव-मार्ग-विधे-र्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन्! पुरुषोत्तमोऽसि ॥25॥
देवों द्वारा ज्ञान पूज्य है, अतः बुद्ध कहलाए हो।
त्रिभुवन में सुख शान्ति कर्ता, शंकर नाम को पाए हो॥
मोक्ष मार्ग के निर्देशक हो, जग प्रतिपालक निर्माता।
व्यक्त रूप से पुरुषोत्तम हो, न तेरा जग से नाता॥25॥

ॐ ह्रीं षड्दर्शनपारंगताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुभ्यं नमस्-त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ!
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय।
तुभ्यं नमस्-त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय॥26॥
तीन लोक के दुःखहर्ता प्रभु, नमन् करूँ मैं बारम्बार।
पृथ्वी तल के अमल हो भूषण, नमन् करो मेरा स्वीकार॥
तीन जगत के परमेश्वर हो, स्वीकारो मेरा वन्दन।
भवोदधि के शोषण कर्ता, कोटि कोटि तुमको वन्दन॥26॥

ॐ ह्रीं नानादुःखविलीनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै-रशेषैस्,
त्वं संश्रितो निरवकाश-तया मुनीश!
दोषै-रुपात्त-विविधाश्रय-जात गर्वैः
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि॥27॥
इसमें विस्मय क्या हो सकता, अच्छे गुण तब बने आधार।
अन्य जगह न जगह मिली तो, हे मुनीष! आए तब द्वार॥
मद से हुए उत्पन्न दोष जो, अन्य जगह आश्रय पाए।
स्वप्नों में भी तेरे अन्दर, दुर्गुण ना ही कभी आए॥27॥

ॐ ह्रीं सकलदोषविनिर्मुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उच्चै - रशोक - तरु - संश्रित - मुन्मयूख,
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम्।
स्पष्टोल्लसत्-किरण-मस्त-तमो-वितानं,
बिम्बं रवे-रिव पयोधर-पार्श्व-वर्ति॥28॥

उन्नत वृक्ष अशोक खड़ा है, शोक नष्ट करने वाला।
शुचि तन होकर आप विराजे, जो जन मन हरने वाला॥
रवि रश्मि की भाँति ऊपर, रूप छटा सुन्दर लगती।
व्यक्त किरण तम नाशक जैसे, मेघ निकट शोभित होती॥28॥

ॐ ह्रीं अशोकतरुविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनका-वदातम्।
बिम्बं वियद्-विलस-दंशु-लता-वितानम्,
तुङ्गोयाद्रि-शिर-सीव सहस्र-रश्मेः॥29॥

नाना रत्नों से शोभित है, सुन्दर तेरा सिंहासन।
स्वर्ण कान्तिमय चमचम करता, जिस पर तेरा निर्मल तन॥
उदयाचल पर्वत के ऊपर, किरण केतु शोभित होता।
अपनी किरणों को फैलाकर, सारे जग का तम हरता॥29॥

ॐ ह्रीं मणिमुक्ता खचितसिंहासन प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्दा-वदात-चल-चामर-चारु-शोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कल-धौत-कान्तम्।
उद्यच्छशाङ्क - शुचि - निर्झर - वारिधार,
मुच्चैस्तटं सुरगिरे-रिव शात-कौम्भम्॥30॥

कुन्द पुष्प की भाँति उज्ज्वल, ढुरते चँवर अति सुन्दर।
स्वर्ण कलेवर सम तव तन तो, शोभा पाता अति मनहर॥
उदित चन्द्र सम निर्मल निर्झर, झर झर झर झर बहती है।
स्वर्ण रचित ऊँचे समान तट, यह अति शोभित होती है॥30॥

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामर प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजारक्षर सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्र-त्रयं तव विभाति शशाङ्क-कान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानुकर-प्रतापम्।
मुक्ताफल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभम्,
प्रख्या-पयत् त्रिजगतः परमेश्वर-त्वम्॥31॥

चन्द्र बिम्ब सम अति मनहर है, मणि मुक्ता से जड़ा हुआ।
सूर्य किरण संताप को रोके, तीन छत्र है लगा हुआ॥
त्रय छत्रों से मस्तक शोभित, त्रिभुवन स्वामी प्रकटाता।
तीन लोक का राज मिले जब, तीन छत्र है लग जाता॥31॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय-प्रातिहार्ययुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गम्भीर - तार - रव - पूरित - दिग्विभागस्-
त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूति-दक्षः।
सद्-धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि-र्ध्वनति ते यशसः प्रवादी॥32॥

दशों दिशा गंभीर स्वरों में, गुँजित है करने वाली।
तीन लोक के प्राणी मात्र को, शुभ संगत देने वाली॥
जैन धर्म के तीर्थंकर का, करने वाली जय जयकार।
मध्य गगन में दुन्दुभि तेरे, यश का करता शब्द अपार॥32॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यविधायिने क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारि - जात-
सन्तान-कादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा।
गन्धोद - बिन्दु - शुभ - मन्द - मरुत् - प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा॥33॥

पारिजात संतानक आदि, देव गिराते पुष्प अपार।
मन्दानिल सह गन्धोदक की, मन्द वृष्टि होती सुखकार॥
कल्पवृक्ष फूलों की वर्षा, मानों ऐसे लगती है।
दिव्य वचन प्रभु तेरे जैसे, पँक्तिबद्ध हो गिरती है॥33॥

ॐ ह्रीं समस्तजाति-पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्य-युक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुम्भत-प्रभा-वलय-भूरि-विभा-विभोस्ते,
लोक-त्रये द्युतिमतां द्युति-माक्षिपन्ती।
प्रोद्यद् - दिवाकर - निरन्तर - भूरि- संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशा-मपि सोम-सौम्याम्॥34॥

जग की सारी वस्तु से भी, अधिक कान्तिमय हो प्रभु आप।
प्रखर सूर्य से भी प्रकाशमय, भामण्डल का जग में ताप॥
फिर भी त्रिभुवन के प्राणी को, संतापित ना करती है।
निशिकर सम सुन्दर होकर भी, द्युति से रैन को जयती है॥34॥

ॐ ह्रीं कोटिभास्कर-प्रभामंडित-भामण्डल-प्रातिहार्य-युक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्गा-पवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक-पटुस्-त्रिलोक्याः।
दिव्यध्वनि-र्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः॥35॥

स्वर्ग मोक्ष का मार्ग बताती, दिव्य ध्वनि तेरी भगवान।
तीन लोक के प्राणी मात्र को, सत्य धर्म का देती ज्ञान॥
जग की सारी भाषाओं में, परिवर्तित हो जाती है।
स्वाभाविक गुण दिव्य ध्वनि की, समझ सभी को आती है॥35॥

ॐ ह्रीं जलधर पटलगर्जित-सर्वभाषात्मक-योजन-प्रमाण-दिव्यध्वनि-प्रातिहार्य-युक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उन्निद्र-हेम नव-पङ्कज-पुञ्ज-कान्ति,
पर्युल्-लसन्-नख-मयूख-शिखाभि-रामौ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र! धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परि-कल्प-यन्ति॥36॥

नाथ आपका चरण जो विकसित, स्वर्ण कमल सम सुन्दर है।
अग्र भाग में सूर्य प्रभा सम, शोभित नख अति मनहर है॥
चरण कमल अनुपम प्रभुवर जी, जहाँ-जहाँ भी रखते हैं।
सुरगण अति सुन्दर कमलों को, वहाँ-वहाँ ही रचते हैं॥36॥

ॐ ह्रीं पादन्यासे पद्मश्रीयुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्थं यथा तव विभूति- रभूज्-जिनेन्द्र!
धर्मोप-देशन-विधौ न तथा परस्य।
यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोऽपि॥37॥

धर्म देशना समय में जैसा, था प्रभुवर तेरा वैभव।
अन्य देव हरिहर आदिक में, ना होता वैसा वैभव॥
एक सूर्य के किरण पड़त ही, अंधकार का होता नाश।
नक्षत्रों की काँति से, क्या हो सकता वैसा ही प्रकाश॥37॥

ॐ ह्रीं धर्मोपदेशसमये समवसरणादिलक्ष्मीविभूतिविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय-नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्च्योतन्-मदाविल-विलोल-कपोल-मूल-
मत्त-भ्रमद्-भ्रमर-नाद विवृद्ध-कोपम्।
ऐरावताभ - मिभ - मुद्धत - मापतन्तं,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भव-दाश्रितानाम्॥38॥

युगल गाल के मूल भाग से, झरती है मद जल की धार।
मत्त भ्रमर गुँजन करके तो, गज को करती कुपित अपार॥

ऐरावत क्रोधित होकर के, रूप बनाता अति विकराल।
जो भी तेरे आश्रित रहता, भय भग जाता है तत्काल॥38॥

ॐ ह्रीं हस्त्यादिगर्वदुर्द्धरभयनिवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भिन्नेभ-कुम्भ-गल-दुज्ज्वल-शोणि ताक्त,
मुक्ताफल - प्रकर - भूषित - भूमिभागः।
बद्ध-क्रमः क्रम-गतं हरिणा-धिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम-युगा-चल-संश्रितं ते॥39॥

ऐरावत के गण्डस्थल को, चीरा है जिसने कई बार।
रक्तांजित गज मुक्ताओं से, वसुन्धरा का किया शृंगार॥
ऐसा पंचानन भी उसका, कुछ भी ना कर सकता है।
चरण कमल गिरि का जो मानव, आश्रय लेकर रहता है॥39॥

ॐ ह्रीं युगादिदेवनाम-प्रसादात्-केशरीभय-निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं,
दावानलं ज्वलित-मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिङ्गम्।
विश्वं जिघत्सु-मिव सम्मुख-मापतन्तं,
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शम-यत्य-शेषम्॥40॥

प्रलय काल की तीव्र पवन से, प्रेरित अग्नि जलती हो।
निखिल विश्व का भक्षण करने, चिनगारी भी निकलती हो॥
शांत पूर्ण हो जाता तत्क्षण, सम्मुख आता दावानल।
नाम आपका सुमिरन करके, डाले जब निर्मल शुभ जल॥40॥

ॐ ह्रीं संसाराग्निताप-निवारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कण्ठ-नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिन-मुत्फण-मापतन्तम्।
आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त-शङ्कस्-
त्वन्नाम-नाग-दमनी-हृदि यस्य पुंसः॥41॥

लाल-लाल दो नेत्र निकाले, कोकिल कण्ठ तुल्य काला।
क्रोधित होकर फण फैलाकर, हो गर वह डसने वाला॥
ऐसे सर्प को निर्भय होकर, पैरों से लंघ जाते हैं।
नाम आपका जो नर हिय में, नाग दमनी रख पाते हैं॥41॥

ॐ ह्रीं त्वन्नामनागदमनीशक्ति-सम्पन्नाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वल्गत्तुरङ्ग - गज - गर्जित - भीमनाद-
माजौ बलं बलवता-मपि भूपतीनाम्।
उद्यद्-दिवाकर-मयूख-शिखा-पविद्धं,
त्वत्-कीर्तना-त्तम इवाशु भिदा-मुपैति॥42॥

युद्ध क्षेत्र में गज घोड़ों का, भीषण होता कोलाहल।
राजाओं की सेनाओं का, कितना भी हो जाए बल॥
सब सेनाओं का हो जाता, यशोगान से सत्यानाश।
अंधकार नस जाता जैसे, पा सूरज का दिव्य प्रकाश॥42॥

ॐ ह्रीं संग्राममध्ये क्षेमकराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारि-वाह-
वेगा - वतार - तरणा - तुर - योध - भीमे।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षास्-
त्वत्पाद-पङ्कज-वना-श्रयिणो लभन्ते॥43॥

भालों से काटे गज तन को, रक्त नीर झर-झर बहता।
फिर भी योद्धा इसे पार कर, युद्ध भयानक है करता॥
रण के ऐसे भीषण क्षण में, शत्रु पर जय पाता है।
तेरे चरण कमल वन का जो, जग में आश्रय पाता है॥43॥

ॐ ह्रीं सर्वभयनिवारणाय शांतिविधायकाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अम्भौ-निधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण-वाडवाग्नौ।
रङ्गत्तरङ्ग शिखर-स्थित-यान-पात्रास्-
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति॥44॥

नीर निधि में क्षोभित प्राणी, नक्र चक्र है अति विकराल।
बड़वानल जब उठे भयंकर, डगमग करती नौका चाल॥
चपल तंरगों के शिखरों या, भंवर बीच हो जिसका यान।
भय तज कर यात्रा वे करते, जो नर करते तेरा ध्यान॥44॥

ॐ ह्रीं संसाराब्धितारणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उद्भूत - भीषण - जलोदर - भार - भुग्नाः,
शोच्यां दशा-मुप-गताश्च्युत-जीवि-ताशाः।
त्वत्-पाद-पङ्कज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्य-रूपाः॥45॥

महा भयंकर रोग जलोदर, शोचनीय प्राणी की दशा।
अति दया मय हुई अवस्था, छोड़ चुका जीवन आशा॥
ऐसा नर तेरे चरणों की, धूलामृत को लगाता है।
रोग रहित हो कामदेव सा, सुन्दर तन हो जाता है॥45॥

ॐ ह्रीं दाहतापजलोदराष्ट सन्निपातादिरोगहराय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आपाद कण्ठ-मुरु-शृङ्खल-वेष्टिताङ्गा,
गाढं बृहन्-निगड-कोटि-निघृष्ट-ताङ्गाः।
त्वन्-नाम-मन्त्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति॥46॥

लोहे की बेड़ी से जिसके, सकल अंग हैं बँधे हुए।
बड़ी-बड़ी साँकल से जिसकी, जँघाएँ है छिले हुए॥

ऐसा मानव भी प्रभु तेरे, नाम जाप को जपता है।
बन्धन भय से मुक्त हुआ वह, प्रमुदित होकर भ्रमता है॥46॥

ॐ ह्रीं नानाविध कठिनबन्धन दूरकरणाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मत्त - द्विपेन्द्र - मृगराज - दवान - लाहि -
संग्राम - वारिधि - महोदर - बन्धनोत्थम्।
तस्याशु नाश-मुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तव-मिमं मतिमानधीते॥47॥

गज दावानल सर्प जलोदर, सिंह युद्ध या कारागार।
भग जाता क्षण में भय नर का, चाहे वह हो पारावार॥
भीषण से भीषण भय तजकर, सुखपूर्वक वह रहता है।
बुद्धिमान जो निशदिन तेरे, भक्तामर को पढ़ता है॥47॥

ॐ ह्रीं बहुविधिविघ्न विनाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तोत्र-स्रजं तव जिनेन्द्र! गुणै-र्निबद्धां,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम्।
धत्ते जनो य इह कण्ठ-गता-मजस्त्रम्,
तं 'मानतुंग' -मवशा समुपैति लक्ष्मीः॥48॥

हे जिनेन्द्र! तव गुण निकुँज से, गुँथी हुई सुन्दर माला।
अक्षर रूपी कुसुम हैं जिसमें, सुन्दर-सुन्दर रंग वाला॥
जो नर इस स्तुति को अपना, कण्ठा-भरण बनाते हैं।
वे नर मानतुंग सम सुन्दर, मोक्ष लक्ष्मी पाते हैं॥48॥

ॐ ह्रीं सकलकार्यसाधनसमर्थाय क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सब विघ्न हरे सब तोष करे संसार तजे शिव सुख पावे।
जो संस्तुति कर्ता श्री को पाता रोग शोक सब नश जाये॥
यह अर्घ लिया है चरण दिया है आदि प्रभु भवपार करो।
श्री मानतुंग संग सोमसेन सह 'सौरभ' का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशंति दल कमलाधिपतये क्लीं महाबीजाक्षर-सहिताय श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋद्धि अर्घ

1. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
2. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
3. ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
4. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
5. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
6. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्बुद्धीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
7. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
8. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पादाणुसारिणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
9. ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
10. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
11. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
12. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
13. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ऋजुमदीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
14. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
15. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
16. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
17. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहाणिमितकुसलाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

18. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वण-इड्ढिपत्ताणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
19. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
20. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
21. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
22. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामिणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
23. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
24. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
25. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
26. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
27. ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
28. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
29. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
30. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
31. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणपरक्कमाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
32. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभयारिणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
33. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
34. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
35. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
36. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
37. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
38. ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
39. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचिबलीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
40. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
41. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
42. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

43. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
44. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
45. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
46. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
47. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सिद्धायदणाणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
48. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसाहूणं अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप–ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

जयमाला

शुभ देश अयोध्या सुन्दर है, जहाँ के नृप नाभि नरेन्दर है।
उनके सुत आदि जिनेन्दर हैं, हम नमते वे तीर्थंकर हैं।।1।।

मन वच तन से शुभ कर्म करें, कृत कारित मोदन मोद भरे।
सब संकट को प्रभु दूर करें, भक्ति पूजा भरपूर करें।।2।।

जब जगति में अवतार लिया, सुर मंगल द्रव्य सजाय लिया।
पाण्डुक वन में अभिषेक किया, सबने वन्दन प्रथमेश किया।।3।।

सुन्दर तन का शृंगार किया, कर कंकण कज्जल नेत्र दिया।
मस्तक पर मुकुट सजाया है, श्रद्धा से शीश झुकाया है।।4।।

सज धज कर राज महल आए, सब देख देख कर हर्षाए।
सौधर्म ने ताण्डव नृत्य किया, वन्दनमय शुभ शुभ कृत्य किया।।5।।

हाथी घोड़ा सब वस्त्र दिए, रथ सेना सब चतुरंग किए।
शुभ योग सुभोग सभी देवें, शिशु आदि जिनेश के पद सेवे।।6।।

लाख तिरासी वरष पूर्व, सुख भोगे जगति के अपूर्व।
दो नारी दो पुत्री धारी, शत पुत्र हुयें आज्ञाकारी।।7।।

शुभ वर्ष गाँठ का दिन आया, सौधर्म इन्द्र अति हर्षाया।
नीलांजना ने था नृत्य किया, तत्क्षण आयुक्षय मृत्यु हुआ।।8।।

क्षण भंगुर जग की माया है, पल में विनशी यह काया है।
वैराग्य जगा आदि मन में, जिन दीक्षा ली जाकर वन में॥9॥

तप करते वर्ष हजार गए, सब राग द्वेष विनष्ट भए।
कैवल्य ज्ञान की ज्योति जली, भव्यों को दिव्य ध्वनि मिली॥10॥

शुभ समवशरण सुखदायक है, प्रभु आदि जिनेश्वर ज्ञायक है।
भव्य जीव सब आते हैं, प्रभु वाणी सुन हर्षाते हैं॥11॥

उपदेश सुतत्व प्रकाश हुआ, मुनि श्रावक धर्म विकास हुआ।
दु:खदायक कर्म नशाया है, जो आदिनाथ पथ पाया है॥12॥

सब जगति का उद्धार किया, कैलाशगिरी विहार किया।
शेष अघाति नष्ट किये, श्री आदि जिनेश्वर सिद्ध हुए॥13

जिनदेव कृपा की नजर करो, मम कर्म नाश कर अमर करो।
उत्सव का अवसर आया है, पूजा कर शीश झुकाया है॥14॥

दोहा

भव अर्णव को पार कर, पाया मोक्ष महान।
भक्त सभी नमते तुम्हें, आदि जिनेश महान॥

ॐ ह्रीं मम सर्व कर्म विनाशनाय आगत विघ्न भय निवारणाय श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदि जिनेशा हरो दुख क्लेशा, चरण नमें हम सुखकारी।
मुनि सौरभ सागर पूजा गाकर, पावे पद प्रभु अविकारी॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वृषभनाथ तीर्थंकर पंचकल्याणक संयुक्ताय शिवपदकर्ता भव जल निधि पोत सर्व विघ्न व्याधिहर्ता तव भक्ति प्रसादात् मम सर्व कल्याणमस्तु दीर्घायुरस्तु शुभमस्तु सुकीर्तिरस्तु सद्बुद्धिरस्तु धन धान्य समृद्धिरस्तु सम्यकवृद्धिरस्तु आरोग्यमस्तु विजयोस्तु सर्व रिद्धि-सिद्धि भवतु रक्ष-रक्ष हूं फट् स्वाहा।

(मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपामि)

भक्तामर विधान परिसमाप्त:।

श्री भक्तामर स्तोत्र (हिन्दी)

पद्यानुवादक : आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज

**मणि मुक्ता रत्नों से शोभित, देव झुकाते माथा हैं।
पाप तिमिर में ज्योतित करता, आदि युग के विधाता हैं॥
भव सिन्धु में पतित जनों की, रक्षा करते जिन भगवान।
चरण कमल में सू रीति से, भाव सहित करते परणाम॥1॥**

**द्वादशांग के ज्ञान से जन्मी, तेरी स्तुति हुई प्यारी।
शत इन्द्रों की स्तुति ही तो, जग जन के हैं चितहारी॥
भाव भक्ति से विस्मयकारी, स्तुति आदि स्वामी की।
करता हूँ मैं प्रमुदित होकर, तद्‌भव मुक्तिगामी की॥2॥**

**बिना विचारे बालक जल में, छाया चन्द्र को ग्रहण करे।
वैसे जड़ धी बिन लज्जा के, हम तेरा स्तवन करें॥
जिनके पाद पीठ का पूजन, हर्षित होकर देव करें।
उन जिन भगवन के स्तवन को, तत्पर हो स्वयमेव करें॥3॥**

**प्रलय काल की तीव्र पवन से, क्रोधित मगरों से भरपूर।
अम्बूनिधि को बाहुबल से, पार करे ना कोई शूर॥
हे गुण सागर! चन्द्रकान्तमय, तेरा रूप है आभावान।
बृहस्पति सम बुद्धिमान भी, कर न सके महिमा का बखान॥4॥**

**स्तुति करने को आया हूँ, हे मुनि! श्रेष्ठ भक्ति से मैं।
हीन बुद्धि पर ध्यान न देना, भक्ति करूँ निज शक्ति से मैं॥
सिंह के सम्मुख शिशु रक्षा हितु, बिना विचारे मृगी जाती।
शक्ति रहित वश प्रेम के होकर, आत्म बली न भय खाती॥5॥**

अल्प ज्ञानी मैं विद्वानों के, परिहासों का धाम बना।
तेरी भक्ति बरबस मुझको, करवाती वाचाल पना।।
आम्र मंजरी प्राप्ति हेतु, मधुर-मधुर गुँजन करती।
कोकिल काली कलरव करके, जन मन है रंजन करती।।6।।

तेरी अनुपम स्तुति से ही, खुलते भव बन्धन के पाश।
पलक झपकते ही हो जाता, प्राणी के कर्मों का नाश।।
तीन लोक का गहन तिमिर जब, भ्रमर सरीखा काला हो।
सूर्य किरण के आते ही ज्यों, हो जाता उजियाला हो।।7।।

ऐसा लखकर नाथ आपकी, भक्ति में विश्वास करूँ।
स्तुति को प्रारंभ करूँ और, सज्जन मन आनन्द भरुँ।
मतिहीन की तुम प्रभाव से, भक्ति जन की मन हरती।
कमल पत्र पर ओस बूँद ज्यों, मोती जैसी द्युति करती।।8।।

पावन स्तुति के प्रभाव से, दूर रहे कल्मश राशि।
पुण्य कथा ही पाप नाश में, सक्षम है जो जगवासी।।
नभ में रहता है किरणाकर, स्वयं प्रभा फेंका करता।
परस मात्र से कमल पुष्प ज्यों, प्रमुदित होकर है खिलता।।9।।

हे जगभूषण भूतनाथ ना, विस्मय की यह बात रही।
सद्‌गुण द्वारा तेरी महिमा, भूपर तव सम बना रही।
निज सम मालिक भृत्य को करता, यदि हुआ सेवक गुणवान।
ना करता निज सम सेवक को, नहीं कहा जाता धनवान।।10।।

अनिमिष दृग कर तुम्हें देखकर, नयनों को बहुतोष हुआ।
मानव को फिर अन्य देव लख, जरा नहीं संतोष हुआ।
दुग्ध सिन्धु का चन्द्र किरण सम, निर्मल जल जो करता पान।
खारा पानी को पीने की, चाह करेगा कौन पुमान।।11।।

निर्मल राग रहित अणुओं से, निर्मापित तव देह महान।
त्रिभुवन की सारी सुन्दरता, समा गई है तव तन आन॥
संख्या निश्चित परमाणु की, तव रचनाकर हुई खतम्।
पृथ्वी पर तेरे सम सुन्दर, दिखता ना है कोई रतन॥12॥

नर देवों और नागेन्द्रों के, नयनों को हरने वाले।
जीत चुके हो सर्व रूप को, कमल चन्द्र उपमा वाले॥
कहाँ कलंकी श्यामाकर और, कहाँ आपका मुखमनहर।
द्युति हीन दिन में हो जाता, ढाक पत्र सम दोषाकर॥13॥

पूर्ण चन्द्र मण्डल सम उज्ज्वल, लंघन करती तीनों लोक।
गुण नायक के आश्रित जो भी, उसको न सकता कोई रोक॥
जगह जगह पर फैल रही है, निर्मल गुण राशि भगवान।
तेरे गुण की स्तुति करता, परगुण ना इतना बलवान॥14॥

स्वर्ग वधु हर सकी न मन को, किंचित भी विकार नहीं।
इसमें विस्मय का कुछ भी तो, दिखता है आधार नहीं॥
प्रलयकाल की तीव्र पवन से, गिरि शिखर हिल जाता है।
किन्तु तनिक क्या मेरु पर्वत, वायु से हिल पाता है॥15॥

धूम नहीं न बाती तेल है, फिर भी त्रिभुवन आलोकित।
बुझा सके न तव दीपक को, वायु गिरि जो करे कंपित॥
अपर दीप न तव दीपक सम, रात दिवस जलता रहता।
तेरे दीपक की तुलना ना, अन्य दीप है कर सकता॥16॥

हे मुनिन्द्र! तव महिमा का ना, सूरज हो सकता है अस्त।
तीन लोक आलोकित करता, कर सकता ना राहू ग्रस्त॥
गगन मध्य का सूरज जग में, छिपता उगता दिन प्रतिदिन।
दिव्य दिवाकर आप सूर्य हो, कर न सके कोई छवि हीन॥17॥

नित्य उदयतम मोह के नाशक, राहू के न ग्रास बने।
मेघों से न ढकने वाले, कान्तिमान हो आप्त बने।।
चन्द्र बिम्ब सम शोभित होता, नीलकमल मुख ज्योतिर्मय।
प्रशमाकर योगीश्वर अघहर, अविनश्वर हो तुम अव्यय।।18।।

हे प्रभु तव मुख के सम्मुख तो, अंधकार नश जाता है।
दिन में दिनकर रात कलामुख, जरा काम न आता है।।
धान्य खेत में परिपक्व हो, वायु में लहराता है।
सघन मेघ जल भार से नम्री, काम नहीं कुछ आताहै ।।19।।

स्वपर प्रकाशक ज्ञान आपका, जैसा शोभित होता है।
अन्य देव हरिहर आदिक में, ज्ञान श्रेष्ठ ना होता है।।
जैसी महिमा महारतन की, जग में शोभा पाती है।
वैसी महिमा काँचखण्ड की, कभी नहीं हो पाती है।।20।।

नाथ मानता हूँ इस जग में, हरिहरादिक देव भले।
जिन्हें देख मन तुझमें रमता, आप विषय संतोष मिले।।
नहीं प्रयोजन अन्य देव से, तुष्ट हुआ मन दर्शनकर।
कोटि जन्म भी आप सिवा ना, मम-मन को सकता है हर।।21।।

निखिल विश्व की सारी माता, जनती रहती शत संतान।
किन्तु आप सम जनने वाली, दिखती ना है मात महान।।
सर्व दिशाएँ धारण करती, तारागण का उजियाला।
पूर्व दिशा ही जनती रहती, सूर्य सहस्र किरणों वाला।।22।।

तुम्हें मानते मुनिजन हे प्रभु! परम पुरुष और तमनाशी।
सूर्य समा तेजस्वी निर्मल, पाते पद हो अविनाशी।।
तेरे चरण युगल को पाकर, मृत्यु पर जय पाते हैं।
उत्तम यही मोक्ष का मारग, अन्य मार्ग भटकाते हैं।।23।।

संत पुकारें कई नामों से, अविनाशी अव्यय ऋषिराज।
सर्वव्यापी जगदीश्वर ब्रह्मा, संख्यातीत या योगीराज॥
ज्ञान स्वरूपी आदि पुरुष प्रभु, मकरध्वज या गिरामपति।
विदित योग या अमल आत्मा, सत्य परायण सदागति॥24॥

देवों द्वारा ज्ञान पूज्य है, अतः बुद्ध कहलाए हो।
त्रिभुवन में सुख शान्ति कर्ता, शंकर नाम को पाए हो॥
मोक्ष मार्ग के निर्देशक हो, जग प्रतिपालक निर्माता।
व्यक्त रूप से पुरुषोत्तम हो, न तेरा जग से नाता॥25॥

तीन लोक के दुःखहर्ता प्रभु, नमन् करूँ मैं बारम्बार।
पृथ्वी तल के अमल हो भूषण, नमन् करो मेरा स्वीकार॥
तीन जगत के परमेश्वर हो, स्वीकारो मेरा वन्दन।
भवोदधि के शोषण कर्ता, कोटि कोटि तुमको वन्दन॥26॥

इसमें विस्मय क्या हो सकता, अच्छे गुण तब बने आधार।
अन्य जगह न जगह मिली तो, हे मुनीष! आए तब द्वार॥
मद से हुए उत्पन्न दोष जो, अन्य जगह आश्रय पाए।
स्वप्नों में भी तेरे अन्दर, दुर्गुण ना ही कभी आए॥27॥

उन्नत वृक्ष अशोक खड़ा है, शोक नष्ट करने वाला।
शुचि तन होकर आप विराजे, जो जन मन हरने वाला॥
रवि रश्मि की भाँति ऊपर, रूप छटा सुन्दर लगती।
व्यक्त किरण तम नाशक जैसे, मेघ निकट शोभित होती॥28॥

नाना रत्नों से शोभित है, सुन्दर तेरा सिंहासन।
स्वर्ण कान्तिमय चमचम करता, जिस पर तेरा निर्मल तन॥
उदयाचल पर्वत के ऊपर, किरण केतु शोभित होता।
अपनी किरणों को फैलाकर, सारे जग का तम हरता॥29॥

कुन्द पुष्प की भाँति उज्ज्वल, ढुरते चँवर अति सुन्दर।
स्वर्ण कलेवर सम तव तन तो, शोभा पाता अति मनहर॥
उदित चन्द्र सम निर्मल निर्झर, झर झर झर झर बहती है।
स्वर्ण रचित ऊँचे समान तट, यह अति शोभित होती है॥30॥

चन्द्र बिम्ब सम अति मनहर है, मणि मुक्ता से जड़ा हुआ।
सूर्य किरण संताप को रोके, तीन छत्र है लगा हुआ॥
त्रय छत्रों से मस्तक शोभित, त्रिभुवन स्वामी प्रकटाता।
तीन लोक का राज मिले जब, तीन छत्र है लग जाता॥31॥

दशों दिशा गंभीर स्वरों में, गुँजित है करने वाली।
तीन लोक के प्राणी मात्र को, शुभ संगत देने वाली॥
जैन धर्म के तीर्थंकर का, करने वाली जय जयकार।
मध्य गगन में दुन्दुभि तेरे, यश का करता शब्द अपार॥32॥

पारिजात संतानक आदि, देव गिराते पुष्प अपार।
मन्दानिल सह गन्धोदक की, मन्द वृष्टि होती सुखकार॥
कल्पवृक्ष फूलों की वर्षा, मानों ऐसे लगती है।
दिव्य वचन प्रभु तेरे जैसे, पँक्तिबद्ध हो गिरती है॥33॥

जग की सारी वस्तु से भी, अधिक कान्तिमय हो प्रभु आप।
प्रखर सूर्य से भी प्रकाशमय, भामण्डल का जग में ताप॥
फिर भी त्रिभुवन के प्राणी को, संतापित ना करती है।
निशिकर सम सुन्दर होकर भी, द्युति से रैन को जयती है॥34॥

स्वर्ग मोक्ष का मार्ग बताती, दिव्य ध्वनि तेरी भगवान।
तीन लोक के प्राणी मात्र को, सत्य धर्म का देती ज्ञान॥
जग की सारी भाषाओं में, परिवर्तित हो जाती है।
स्वाभाविक गुण दिव्य ध्वनि की, समझ सभी को आती है॥35॥

नाथ आपका चरण जो विकसित, स्वर्ण कमल सम सुन्दर है।
अग्र भाग में सूर्य प्रभा सम, शोभित नख अति मनहर है।।
चरण कमल अनुपम प्रभुवर जी, जहाँ-जहाँ भी रखते हैं।
सुरगण अति सुन्दर कमलों को, वहाँ-वहाँ ही रचते हैं।।36।।

धर्म देशना समय में जैसा, था प्रभुवर तेरा वैभव।
अन्य देव हरिहर आदिक में, ना होता वैसा वैभव।।
एक सूर्य के किरण पड़त ही, अंधकार का होता नाश।
नक्षत्रों की काँति से, क्या हो सकता वैसा ही प्रकाश।।37।।

युगल गाल के मूल भाग से, झरती है मद जल की धार।
मत्त भ्रमर गुँजन करके तो, गज को करती कुपित अपार।।
ऐरावत क्रोधित होकर के, रूप बनाता अति विकराल।
जो भी तेरे आश्रित रहता, भय भग जाता है तत्काल।।38।।

ऐरावत के गण्डस्थल को, चीरा है जिसने कई बार।
रक्तांजित गज मुक्ताओं से, वसुन्धरा का किया श्रृंगार।।
ऐसा पंचानन भी उसका, कुछ भी ना कर सकता है।
चरण कमल गिरि का जो मानव, आश्रय लेकर रहता है।।39।।

प्रलय काल की तीव्र पवन से, प्रेरित अग्नि जलती हो।
निखिल विश्व का भक्षण करने, चिनगारी भी निकलती हो।।
शांत पूर्ण हो जाता तत्क्षण, सम्मुख आता दावानल।
नाम आपका सुमिरन करके, डाले जब निर्मल शुभ जल।।40।।

लाल-लाल दो नेत्र निकाले, कोकिल कण्ठ तुल्य काला।
क्रोधित होकर फण फैलाकर, हो गर वह डसने वाला।।
ऐसे सर्प को निर्भय होकर, पैरों से लंघ जाते हैं।
नाम आपका जो नर हिय में, नाग दमनी रख पाते हैं।।41।।

युद्ध क्षेत्र में गज घोड़ों का, भीषण होता कोलाहल।
राजाओं की सेनाओं का, कितना भी हो जाए बल।।
सब सेनाओं का हो जाता, यशोगान से सत्यानाश।
अंधकार नस जाता जैसे, पा सूरज का दिव्य प्रकाश।।42।।

भालों से काटे गज तन को, रक्त नीर झर-झर बहता।
फिर भी योद्धा इसे पार कर, युद्ध भयानक है करता।।
रण के ऐसे भीषण क्षण में, शत्रु पर जय पाता है।
तेरे चरण कमल वन का जो, जग में आश्रय पाता है।।43।।

नीर निधि में क्षोभित प्राणी, नक्र चक्र है अति विकराल।
बड़वानल जब उठे भयंकर, डगमग करती नौका चाल।।
चपल तंरगों के शिखरों या, भंवर बीच हो जिसका यान।
भय तज कर यात्रा वे करते, जो नर करते तेरा ध्यान।।44।।

महा भयंकर रोग जलोदर, शोचनीय प्राणी की दशा।
अति दयामय हुई अवस्था, छोड़ चुका जीवन आशा।।
ऐसा नर तेरे चरणों की, धूलामृत को लगाता है।
रोग रहित हो कामदेव सा, सुन्दर तन हो जाता है।।45।।

लोहे की बेड़ी से जिसके, सकल अंग हैं बँधे हुए।
बड़ी-बड़ी सांकल से जिसकी, जघाएँ है छिले हुए।।
ऐसा मानव भी प्रभु तेरे, नाम जाप को जपता है।
बन्धन भय से मुक्त हुआ वह, प्रमुदित होकर भ्रमता है।।46।।

गज दावानल सर्प जलोदर, सिंह युद्ध या कारागार।
भग जाता क्षण में भय नर का, चाहे वह हो पारावार।।
भीषण से भीषण भय तजकर, सुखपूर्वक वह रहता है।
बुद्धिमान जो निशदिन तेरे, भक्तामर को पढ़ता है।।47।।

हे जिनेन्द्र! तव गुण निकुँज से, गुँथी हुई सुन्दर माला।
अक्षर रूपी कुसुम हैं जिसमें, सुन्दर-सुन्दर रंग वाला।।
जो नर इस स्तुति को अपना, कण्ठा-भरण बनाते हैं।
वे नर मानतुंग सम सुन्दर, मोक्ष लक्ष्मी पाते हैं।।48।।

दोहा

आदिनाथ भगवान की, महिमा अपरम्पार।
'सौरभ सागर' नत हुआ, गा गा मंगलाचार।।

अरहन्त देव का ऐसा ही उपदेश है ऐसा समझकर यदि कोई कदाचित् किसी पदार्थ का विपरीत श्रद्धान भी करता है तो भी वह सम्यक् दृष्टि ही है क्योंकि उसने देव का उपदेश समझकर उस पदार्थ का वैसा श्रद्धान किया है। परन्तु आगम में दिखाकर, समीचीन पदार्थ के समझाने पर भी यदि वह पूर्व में अज्ञान से किये हुए अतत्व श्रद्धान को न छोड़े तो वह उसी काल से मिथ्या दृष्टि कहा जाता है क्योंकि गणधर द्वारा कथित सूत्र का श्रद्धान न करने से जिनाज्ञा का उल्लंघन सुप्रसिद्ध है।

श्री कुमुदचन्द्राचार्य विरचित

2. श्री कल्याण मन्दिर विधान

(पार्श्वनाथ स्तोत्र)

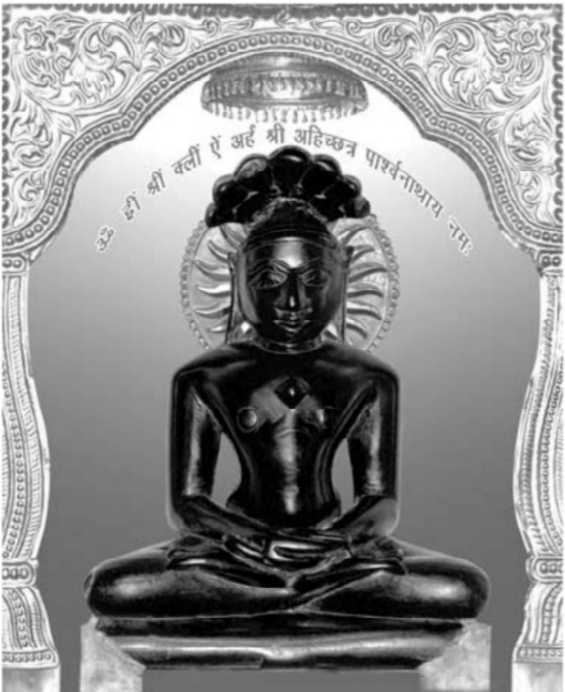

पद्यानुवादक

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

2. श्री कल्याण मन्दिर विधान

माण्डला

कुल अर्घ्य 45 : प्रथम वलय-8, द्वितीय वलय-16, तृतीय वलय-20

कल्याण मंदिर व्रत विधि

व्रतारम्भ : पार्श्वनाथ भगवान के किसी भी कल्याणक तिथि, दिवस या रविवार या 44 चतुर्दशी

अवधि : 1 वर्ष से 4 वर्ष

व्रत पूजा : व्रत वाले दिन कल्याण मंदिर विधान, पूजा पाठ करें।

जाप : ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय सर्वसौख्यं कुरु कुरु नमः।

व्रत विधि : 44 उपवास या एकासन या चार या छः रस त्याग।

श्री कल्याण मन्दिर विधान प्रारम्भ

दोहा

मोह महारिपु जीतकर, कर्म किये चकचूर।
कल्याण धाम श्री पार्श्व जिन, भक्ति करूँ भरपूर॥
कुमुद चन्द्र आचार्य ने, स्तोत्र रचा महान्।
श्रद्धा से पूजा करें, मुक्ति निकट यह जान॥

स्वस्तिकस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

स्थापना

फैल रही है प्रभा सूर्य सी, वर्ण तुम्हारा श्याम है।
सिद्ध लोक में आप विराजे, रहा न जग से काम है॥
प्राणत स्वर्ग से आए मुनिवर, फणि लाञ्छन को पाए हैं।
गुण पाने श्री वामा नन्दन, पूजा पाठ रचाए हैं॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र मम हृदये अवतर-अवतर संवोषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र मम हृदये तिष्ठ-तिष्ठ! ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र मम हृदये सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

गंगा सिन्धु शुभ सरवर अरूँ, जिन तीर्थों का जल लाऊँ।
शरद चन्द्र सा चारू पात्र ले, चरणाम्बुज में नीर चढ़ाऊँ॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः मम जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन

दिग्दिगन्त तक गन्ध है फैली, तरु से फणिधर लिपट रहे।
भक्ति ध्यान से समता पाकर, कर्म पांशु से निपट रहे॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः संसार ताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

नयन मनोहर सुन्दर तन्दुल, अक्षत अक्षय लाया हूँ।
मन वच तन को अक्षत करके, वन्दन कर हर्षाया हूँ॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

गुंजन करते भ्रमर पुष्प पर, गन्ध सुगन्ध से भरे पड़ें।
अद्भुत मनहर दिव्य पुष्प ले, चरणों में यह द्रव्य चढ़े॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

स्वर्ण पात्र में अन्न पान ले, क्षुधा शमन को बहु खाए।
त्याग किए बिन षट्रस मनवा, निजरस ना ही चख पाए॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

अन्तर मन में तमस मोह का, ज्ञान दीप से छट जाए।
मृणमय दीपक से भक्ति कर, मोह तिमिर भी घट जाए॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥

धूप

चन्दन अरूँ कर्पूर चूर्ण ले, धूप अगन में खेता हूँ।
निज वैभव का सौरभ पाने, कर्म दहन कर देता हूँ॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

लौकिक फल का मधुर स्वाद है, इन्द्रिय से जाना जाता।
मोक्ष महाफल का आस्वादन, वीतरागी ही कर पाता॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, अष्ट अंग नमाऊँगा।
अष्ट कर्म को शीघ्र नष्ट कर, अष्टम वसुधा पाऊँगा॥
सुर नर खग पशु नृप से पूजित, पार्श्वनाथ के चरण जजूँ।
कर्म कमठ उपसर्ग जीतकर, चिदानन्द कैवल्य भजूँ॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक अर्घ्य

दिव्य आत्मा गर्भ में आई, सपने देखे वामा ने।
रतन बरसते खुशियाँ छाई, अश्वसेन के आँगन में॥
दूज कृष्ण वैशाख दिवस था, शुभ लक्षण प्रगटित होते।
नगर बनारस की गलियों में, नर देवा हर्षित होते॥

ॐ ह्रीं वैशाख कृष्ण द्वितीयां गर्भ मंगलमण्डिताय कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष कृष्ण एकादशी पावन, धरती पर अवतार लिया।
श्याम वर्ण का सुन्दर तन पा, क्षणभर शान्ति अपार दिया॥
काशी नगरी धन्य हुई प्रभु, ऐरावत ले इन्द्र आया।
मेरु पर्वत न्हवन कराकर, सहस्र नयन दर्शन पाया॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्ण एकादश्यां जन्म मंगल मण्डिताय कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष कृष्ण एकादशी का दिन, जन्म दिवस दीक्षाधारा।
लोकान्तिक अनुमोदन करके, शुभ भावों को शृंगारा॥
राजाओं सा वैभव पाकर, मन वैरागी बना रहा।
तीस बरस में दीक्षा लेकर, वन पर्वत में ध्यान करा॥

ॐ ह्रीं पौष कृष्ण एकादश्यां तप मंगल मण्डिताय कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गहन साधना महामना की, वन पर्वत में अमल रही।
अहिक्षेत्र की धरा धाम में, स्थिर होकर अचल रही॥
चैत्र कृष्ण की आई चतुर्थी, चार घातियाँ नाश किया।
केवलज्ञानी पार्श्वनाथ का, सबने जय जयकार किया॥

ॐ ह्रीं चैत्र कृष्ण चतुर्थी दिने केवलज्ञान प्राप्ताय कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण की शुक्ला सातम को, सम्मेदाचल ध्यान करें।
चार अघाति कर्म नाशकर, सिद्धालय प्रस्थान करें॥

स्वर्ण भद्र का कूट मनोहर, दर्शन वन्दन हितकारी।
पार्श्वनाथ के चरण कमल में, अर्घ समर्पित सुखकारी॥

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ल सप्तम्यां मोक्ष मंगल मण्डिताय कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

शतवर्षों की आयु पाई, श्यामवर्ण सुन्दर सुखदाई।
तन नव हाथ अतुल बलधारी, नमो-नमो पारस फणधारी॥
शत्रु मित्र में समता रखते, मोह क्षोभ को हरपल तजते।
ध्यान धुरन्धर आत्म विहारी, नमो-नमो पारस फणधारी॥

(शान्तये शान्तिधारा परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः सर्व सौख्यं कुरु-कुरु नमः (नौ बार पढ़े)

जयमाला

विषय विकार विवर्जित तन मन, लोभ शत्रु का दमन किया।
चिदानन्द चैतन्य विहारी, श्रद्धा धर वन्दन किया॥
भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करों।
दोष तिरेशठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥1॥
नाम जाप से कार्य सिद्ध हो, श्रेष्ठ चतुष्टय धारी हो।
आत्म रमण कर ईश बनें प्रभु, मदन जीत अविकारी हो॥
भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करो।
दोष तिरेशठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥2॥
दिव्य नाद कर हर्षित शत नृप, चरण कमल पूजा करते।
मुनियों के हे महा मुनि कह, ढोल मजीरा सब बजते॥
भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करो।
दोष तिरेशठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥3॥
रत्न त्रय से भरी आत्मा, समवशरण से युक्त हुए।
क्षुधा तृषा की तपन मेटकर, द्विधा संग से मुक्त हुए॥

भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करो।
दोष तिरेशठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥4॥
अम्बर बनी दिशाएँ तेरी, मुक्ति रमा के वर प्यारे।
मोह क्षोभ से मुक्त जिनेश्वर, निराकार तन को धारे॥
भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करो।
दोष तिरेसठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥5॥
जन्म जरा का नाम नहीं, चिन्मूरत आनन्द पाया है।
क्रोध मान तज आत्मरमण कर, दर्श ज्ञान सुख पाया है॥
भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करो।
दोष तिरेशठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥6॥
मति श्रुत अवधि ज्ञान तजा, सर्वज्ञपने को महकाया।
स्वयं स्वयं का दिव्य रूप पा, तीन लोक में यश पाया॥
भव तारक हे पार्श्व जिनेश्वर, मम भक्ति स्वीकार करो।
दोष तिरेसठ रहित केवली, निज सम कर उद्धार करो॥7॥

घत्ता

यतियों में है श्रेष्ठ जिनन्दा, भव तारक है श्री अरिहन्ता।
विमल गुणों के समृद्ध चन्दा, नम्रीभूत है देव नरेन्दा॥
जिनपति मस्तक अहि ने धारा, पाप ताप सन्ताप है हारा।
'सौरभ सागर' नमता द्वारा, सिद्ध शिला सुख मिले अपारा॥

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दया क्षमा से युक्त हैं, पार्श्वनाथ भगवान।
लौकान्तिक पूजा करे, चरण कमल धर ध्यान॥
प्रतिदिन जो पूजा करे, समता उर में धार।
पार्श्व परस पा स्वर्ण बन, होवे भव से पार॥

(इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

दोहा

काशी में वाराणसी, सुन्दर नगर है जान।
बाल उम्र संसार तजा, हुआ भेद विज्ञान॥
भक्ति से यश गा रहे, श्रद्धा शीश झुकाय।
पूर्ण अर्घ दे चरण में 'सौरभ' शिव सुख पाय॥

ॐ ह्रीं सर्व गुण सम्पन्नाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इति मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अष्टदल कमल पूजा

कल्याणमन्दिर-मुदार-मवद्य-भेदि,
भीता-भय-प्रदम-निन्दित-मङ्घ्रिपद्म्।
संसार-सागर-निमज्ज-द-शेष-जन्तु,
पोतायमान मभिनम्य जिनेश्वरस्य॥1॥

कल्याण धाम हो हो उदार तुम, पाप नाश में कारण हो।
भयाक्रान्त जो प्राणी जग में, भय का करते निवारण हो॥
पारावार में डूब रहे जो, जीव मात्र को पोत समान।
श्री जिन पारस नाथ चरण में, बारम्बार विनम्र प्रणाम॥1॥

ॐ ह्रीं भवसमुद्रपतज्जन्तुतारणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य स्वयं सुरगुरु-र्गरिमाम्बुराशेः।
स्तोत्रं सुविस्तृत-मति-र्न विभुर्विधातुम्॥
तीर्थेश्वरस्य कमठ-स्मय धूमकेतोस्।
तस्याह-मेष-किल संस्तवनं करिष्ये॥2॥

सागर सा गुण गौरव तेरा, शब्दों में क्या व्यक्त करें।
बृहस्पति भी हार गया जो, सदा काल तव भक्त रहे॥
कमठासुर के मान भस्म में, अग्नि शिखा सम हो प्रभु आप।
तीर्थ पति की स्तुति करता, विस्मय-पूर्वक हरने पाप॥2॥

ॐ ह्रीं अनन्तगुणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सामान्यतोऽपिऽतव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशाः कथमधीश! भवन्त्यधीशाः।
धृष्टोऽपि कौशिक शिशु-र्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः॥3॥

हे प्रभु तेरा रूप अनोखा, कैसे करूँ स्वरूप बखान।
मन्द बुद्धि मैं ना कर सकता, तेरी महिमा का गुणगान॥
प्रखर सूर्य की दिव्य प्रभा में, स्वयं रूप न लख पाता।
ऐसा कौशिक शिशु दिनकर का, वर्णन कैसे कर पाता॥3॥

ॐ ह्रीं चिद्रूपाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह-क्षयादनुभवन्नपि नाथ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत॥
कल्पान्त-वान्त-पयसः प्रकटोऽपि यस्मान्,
मीयेत केन जलधे-र्ननु रत्नराशिः॥4॥

मोह कर्म के नश जाने पर, नर अनुभव सब कर सकता।
शक्ति भले कितनी हो उसकी, गुण वर्णन ना कर सकता॥
प्रलय काल में सागर का जब, पानी बाहर हो जाता।
रत्नों का फिर ढेर दिखें पर, कोई ना है गिन पाता॥4॥

ॐ ह्रीं गहनगुणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य-गुणाकरस्य।
बालोऽपि किं न निज-बाहु-युगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः॥5॥

हे प्रभु! मैं हूँ मतिहीन पर, तुम गुण रत्नों के आगार।
फिर भी तेरी स्तुति करने, खड़ा हुआ बुद्धि अनुसार॥
अपनी छोटी भुजा से बालक, सहज भाव दर्शाता है।
देखो कितना बड़ा है सागर, और हाथ फैलाता है॥5॥

ॐ ह्रीं परमोन्नतगुणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये योगिना-मपि न यान्ति गुणास्तवेश!,
वक्तुं कथं भवति तेषु ममाव-काशः।
जाता तदेव-मस-मीक्षित-कारितेयं,
जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि॥6॥

बड़े-बड़े योगीजन प्रभुवर, गुण गाने असमर्थ रहे।
हम मूरख हैं ज्ञान हीन प्रभु, तव गुण गौरव कैसे कहें॥
ज्यों पँछी अपनी बोली में, प्रभुवर बातें करते हैं॥
त्यों हम बिना विचारे, प्रभुवर भक्ति तेरी करते है॥6॥

ॐ ह्रीं अगम्य गुणाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आस्ता-मचिन्त्य-महिमा जिन! संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति।
तीव्रा तपो-पहत-पान्थ-जनान्निदाघे,
प्रीणाति पद्म-सरसः स-रसोऽनिलोऽपि॥7॥

हे जिनेन्द्र! तव स्तुति की, महिमा अचिन्त्य कहलाती है।
नाम मात्र ही जीव मात्र को, भव पीड़ा से बचाती है॥
ग्रीष्म काल की तीव्र ताप से, ज्यों नर पीड़ित हो जाते।
पदम सरस की बात कहूँ क्या, सरस पवन सुख पहुँचाते॥7॥

ॐ ह्रीं स्तवनाहार्य क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो! शिथिली भवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्म-बन्धाः।
सद्यो भुजङ्गम-मया इव मध्य-भाग-
मभ्यागते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य॥8॥

मन मन्दिर के उच्चासन पर, वास करें पारस भगवन।
कर्मों के दृढ़तर बंधन भी, ढीले पड़ जाते तत्क्षण॥

विषधर जब चन्दन तरुवर पर, लिपट गया हो अति विकराल।
नीलकण्ठ के शब्द मात्र से, बन्धन ढीले हो तत्काल॥8॥

ॐ ह्रीं कर्मबन्धविनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

अष्ट कमल दल की पूजा मैं, अष्ट द्रव्य से करता हूँ।
सुर नर देवो से परिपूजित, पार्श्व प्रभु को भजता हूँ॥
शिव सुख पद के भोक्ता जिनवर, वन्दन मम स्वीकार करो।
चरण कमल में अर्घ्य चढ़ाऊँ, प्राण नाथ भवपार करो॥

ॐ ह्रीं अष्ट दल कमलाधिपतये श्री पार्श्वनाथाय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

षोडशदल कमल पूजा

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र!
रौद्रै-रुपद्रव-शतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाऽशु पशवः प्रपलायमानैः॥9॥

विपदायें लाखों आकर के, कई मुश्किलें खड़ी करें।
तव दर्शन की फूँक मात्र से, तिनके-सी तत्काल उड़ें।
जैसे गौस्वामी को लखकर, तजते पशुओं को तस्कर,
भय के मारे भग जाते वे, समझे उदित मान दिनकर॥9॥

ॐ ह्रीं दुष्टोपसर्गविनाशकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वं तारको जिन! कथं भविनां त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जल मेष नून-
मनतर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः॥10॥

प्रभुवर जो तुमको हिय धारे, हो जाए भव सागर पार।
इसका मतलब ये ना समझो, भविजन देते तुमको तार॥
चर्म-मसक तिरने का कारण, वायु का है तीव्र संयोग।
मसक तीरे वायु के संगत, भव्य तरे पा तव संयोग॥10॥

ॐ ह्रीं सुध्येयाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्मिन् हर-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः,
सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन॥11॥

हरि-हरादिक महापुरुषों को, किया पराजित काम ने।
उसी काम को क्षण भर में ही, नष्ट किया था आपने॥
रखता है सामर्थ्य वारि ज्यों, नाश करन को दावानल।
उसी वारि को जला डालता, क्रोधित होकर बड़वानल॥11।

ॐ ह्रीं अनंगमथनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वामिन्ननल्प-गरिमाणमपि प्रपन्नास्-
त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः॥12॥

जिनकी तुलना अन्य किसी से, कभी नहीं की जा सकती।
ऐसे प्रभु के गुण अनन्त को, जिह्वा कैसे गा सकती॥
हे प्रभु! तुमको जो हिय धारे, अतिशीघ्र तिर जाते है।
यह महिमा है विस्मय कारी, चिन्तन में ना आते है॥12॥

ॐ ह्रीं अतिशयगुरवे क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधस्त्वया यदि विभो! प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौराः।
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी॥13॥

क्रोध शत्रु को सबसे पहले, हे प्रभु तुमने नष्ट किया।
एकागारिक कर्म को कहिये, किस विधि तुमने ध्वस्त किया॥
अभ्रशिला संस्मृति में देखो, एकदम शीतल कहलाता।
फिर भी हरे भरे वृक्षों को, क्या तुषार न झुलसाता॥13॥

ॐ ह्रीं जितक्रोधाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूप,
मन्वेष-यन्ति हृदयाम्बुज कोष-देशे।
पूतस्य निर्मल-रुचे-र्यदि वा किमन्य,
दक्षस्य संभव-पदं ननु कर्णिकायाः॥14॥

बड़े-बड़े योगीजन प्रभुवर, ध्यान सदैव लगाते है।
हृदय कमल के मध्य भाग में, अन्वेषण कर ध्याते है॥
है पवित्र निर्मल सुकान्तिमय, कमल बीज का जन्म स्थान।
कमल कर्णिका हृदय कमल बिन, प्रभु मिले न सकल जहान॥14॥

ॐ ह्रीं महन्मृग्याय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्यानाज्जिनेश! भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्म-दशां व्रजन्ति।
तीव्रानलादुपल-भावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातु-भेदाः॥15॥

किस धातु से सोना बनता, पा अग्नि का तीव्र संयोग।
शुद्ध स्वर्ण हो जाता पल में, तज कर कालिमा का योग॥
ऐसे ही संसारी प्राणी, तेरा ध्यान लगाते हैं।
राग द्वेष तन तजकर क्षण में, परमातम पद पाते हैं॥15॥

ॐ ह्रीं कर्मकिट्टदहनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतः सदैव जिन! यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम्।
एतत्स्वरूपमथ मध्य-विवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः॥16॥

तुमको बैठा अपने तन में, भविजन ध्यान लगाते हैं।
और उसी तन को क्यों प्रभुवर, आप नष्ट करवाते हैं॥
ऐसा ही स्वभाव जीव का, राग द्वेष से रहित हुआ।
महापुरुषों ने विग्रह करके, काय द्वेष को शमित किया॥16॥

ॐ ह्रीं देहदेहिकलहनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेद-बुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र! भवतीह भवत्प्रभावः।
पानीयमप्यमृतमित्यनु-चिन्त्यमानं,
किं नाम नो विष-विकारमपा-करोति॥17॥

हो अभिन्न तुम मुझसे प्रभुवर, ऐसे बुद्धि से ध्याते।
तज विकार तेरे प्रभाव से, तेरे सम ही बन जाते॥
यह अमृत है यूँ श्रद्धा कर, पानी पीता जो इन्सान।
क्या वह पानी विष विकार को, दूर नहीं करता विद्वान॥17॥

ॐ ह्रीं संसारविषसुधोपमाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वामेव वीत-तमसं पर वादिनोऽपि,
नूनं विभो हरि-हरादि धिया प्रपन्नाः।
किं काच-कामलिभिरीश सितो पि शंखो,
नोगृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण॥18॥

अज्ञान तिमिर से घिरे हुए जो, तुम्हें मानते ब्रह्म महेश।
और तुम्हारी पूजा करते, अन्य मतावलम्बी जिनेश॥

मानों निश्चित प्यारे बन्धु, रोग पीलिया हुआ जिसे।
कई रंगों में श्वेत शंख भी, दिखता है विपरीत उसे।।18।।

ॐ ह्रीं सर्वजनवन्द्याय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मोपदेश-समये सविधानु-भावा,
दास्तां जनो भवित ते तरुरप्यशोकः।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति न जीव-लोकः।।19।।

धर्म देशना के अवसर पर, जो आ जाता आप समीप।
मानव की तो बात अन्य है, पादप होता शोक रहित।।
दिनपति के प्रगटित होते ही, जीव मात्र जग जाते हैं।
तरूवर भी प्रमुदित हो करके, शीघ्र बोध को पाते हैं।।19।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्षविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चित्रं विभो! कथमवाङ्मुख-वृन्तमेव,
विष्वक्पतत्य विरला सुर-पुष्प-वृष्टिः।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश!
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि।।20।।

देवों द्वारा सघन पुष्प की, वर्षा होती चारों ओर।
डंठल नीचे पँखुरी ऊपर, हो जाती है सबही ओर।।
आप निकटता सूचित करती, भव्य जीव को अहो प्रभो।
विज्ञ जनों के विधि के बन्धन, नीचे होते स्वयं विभो।।20।।

ॐ ह्रीं सुरपुष्पवृष्टिशोभिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थाने गभीर-हृदयोदधि-सम्भवायाः,
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति।
पीत्वाः यतः परम-सम्मद-संङ्ग-भाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाप्य-जरा-मरत्वम्।।21।।

गम्भीर हृदय के सागर में प्रभु, दिव्य वचन तव मुखरित हैं।
मानव माने अमृत सम यह, जग जाहिर और प्रगटित है॥
भव्य प्राणी पी करके इसको, आनन्दित हो जाते हैं।
परम सौख्य को पाकर सहसा, अजर अमर हो जाते हैं॥21॥

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनिविराजिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वामिन्सुदूर-मवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि-पुङ्गवाय,
ते नून-मूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः॥22॥

देवों द्वारा ऊपर नीचे, चँवर ढुराये जाते हैं।
नम्रीभूत वे शुद्ध चँवर ही, विनय पाठ सिखलाते हैं॥
प्रभु चरणों में मन वच तन से, जो झुक कर करते वन्दन।
कर्म रहित हो देह नाश कर, पा जाते हैं मुक्ति सदन॥22॥

ॐ ह्रीं सुरचामरसहितविराजमानाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वल-हेम-रत्न,
सिंहासनस्थमिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम्।
आलोकयन्ति-रभसेन नदन्तमुच्चैश्,
चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम्॥23॥

उज्ज्वल कंचनमय सिंहासन, पर स्थित है श्यामल तन।
गम्भीर स्वरों में प्यारे तेरे, खिर जाते हैं दिव्य वचन॥
स्वर्ण सुमेरु पर्वत पर जब, होता मेघों का गर्जन।
भव्य मोर हर्षित हो करके, करते उसका अवलोकन॥23॥

ॐ ह्रीं पीठत्रयनायकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उद्‌गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन,
लुप्त-च्छदच्छवि-रशोक-तरुर्बभूव।
सान्निध्य-तोऽपि यदि वा तव वीतराग!
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि॥24॥

दैदीप्यमान प्रभु भामण्डल से, लुप्त छवि सुरतरु पाता।
स्वयं अचेतन होकर भी वह, आप प्रभा को बतलाता॥
राग द्वेष से रहित आप हो, जो भी आप निकट आता।
भव्य अहो! वह वीतराग हो, मोक्ष निकेतन को पाता॥24॥

ॐ ह्रीं भामण्डलमण्डिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा

कर्म रिपु को नाश कर, पाया केवलज्ञान।
धर्मदान देकर प्रभु, पाया मोक्ष महान॥
अष्ट द्रव्यमय अर्घ लें, पूजूँ मन वच काय।
मुक्ति श्रीमम निकट हो, भाव यही हम भाय॥

ॐ ह्रीं हृदय स्थित षोडश दल कमलाधिपतये श्री पार्श्वनाथाय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विंशतिदल कमल पूजा

भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन,
मागत्य निर्वृति-पुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते॥25॥

वायु पथ में देवों द्वारा, होता रहता दुन्दुभि नाद।
हे प्राणी हे प्राणी! करलो, आतम हित तजकर परमाद!
मोक्ष पुरी में जाना चाहो, पार्श्व प्रभु का ले लो नाम।
चिन्तामणि हे विघ्न विनाशी, करते भविजन का कल्याण॥25॥

ॐ ह्रीं देवदुन्दुभिनादाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उद्योतितेषु भवता भुवनेषुनाथ,
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः।
मुक्ता-कलाप-कलितोरु-सितातपत्र
व्याजात्त्रिधा धृत-तनुर्ध्रुवमभ्युपेतः।।26।।

सारे भू-मण्डल पर प्रभुवर, फैला तेरा दिव्य प्रकाश।
अपने अधिकारों से च्युत हो, तारागण सह आया पास।।
श्वेत छत्र तव शोभा देता, ताराओं से घिरा हुआ।
श्यामाकर त्रय तनु धारण कर, तव सेवा में लगा हुआ।।26।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रयमहिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वेनप्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन,
कान्ति-प्रताप-यशसामिव सञ्चयेन।
माणिक्य-हेम-रजत-प्रविनिर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि।।27।।

सोना चाँदी माणिक आदि से, निर्मित है त्रय कोट महान।
सर्व सम्पदा से परिपूरित, तीन लोक के पिण्ड समान।।
कान्ति कीर्ति व तेज पुँज का, वर्तुल बना अति सुन्दर।
पार्श्व प्रभु का समवशरण ही, भव्यों का लेता मनहर।।27।।

ॐ ह्रीं शालत्रयाधिपतये क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य-स्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना,
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलि-बन्धान्।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र,
त्वसङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव।।28।।

नमन समय में इन्द्रों के, मुकटों को तजते दिव्य सुमन।
सर्वश्रेष्ठ आधार मानकर, लिपटे जाते आप चरण।।

आप समागम को पा करके, ना जाते विद्वान कहीं।
पाद पदम में तेरे रहकर, करते हैं कल्याण यही।।28।।

ॐ ह्रीं भक्तजनानवनपतिराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वं नाथ! जन्म जलधे-र्विपराङ्मुखोऽपि,
यत्तारयस्य सुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान्।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो! यदसि कर्म-विपाक-शून्यः।।29।।

जन्म मरण दुःख अर्णव से, प्रभु आप विमुख कहलाते हो।
आप शरण में जो आ जाता, उसको पार लगाते हो।।
अग्नि से परिपक्व अधोमुख, घट सिन्धु तिरवाता है।
कर्म विपाक से शून्य आप ये, विस्मय सत दर्शाता है।।29।।

ॐ ह्रीं निजपृष्ठलग्नभयतारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक! दुर्गतस्त्वं,
किं वाक्षर-प्रकृतिरप्य लिपिस्त्वमीश!
अज्ञानवत्यपि सदैव कथञ्चिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास-हेतुः।।30।।

तीन लोक के स्वामी होकर, भी कहलाते हो निर्धन।
है अक्षर स्वभाव आपका, कर न सके तेरा लेखन।।
हे स्वामी अज्ञानवान भी, कहलाते हो आप यहाँ।।
सकल लोक की सकल वस्तुओं, के ज्ञाता हो आप यहाँ।।30।।

ॐ ह्रीं विस्मयनीयमूर्तये क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राग्भार-सम्भृत-नभांसि-रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।
छायापि तैस्तव न नाथ! हता हताशो।
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा।।31।।

पूर्ण रूप से नभ मण्डल को, व्याप्त किया था धूल गिरा।
पूर्व बैर के कारण प्रभु पर, दुष्ट कमठ उपसर्ग किया।।
फिर भी पारस स्वामी तेरा, छाया तक न नष्ट किया।
किन्तु विफल हो हो हताश वह, कर्म पांशु से ग्रस्त हुआ।।31।।

ॐ ह्रीं कमठोत्थापितधूल्युपद्रवजिताय क्लीं महाबलीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्गर्जदूर्जित - घनौघमदभ्र - भीम-
भ्रश्यत्तडिन्-मुसल-मांसल-घोरधारम्।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारिदध्रे,
तेनैव तस्य जिन! दुस्तर-वारि कृत्यम्।।32।।

महा भयंकर दुस्तर वारि, वर्षा कर उपसर्ग किया।
बादल गरजा विद्युत चमका, अपना पौरुष व्यर्थ किया।।
फिर भी पार्श्व प्रभुवर तेरा, कुछ भी ना वह कर पाया।
अपने ही हाथों से वह तो, अपने ऊपर खड्ग चलाया।।32।।

ॐ ह्रीं कमठकृतजलधारोपसर्गनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताकृति-मर्त्य-मुण्ड-
प्रालम्बभृद्-भयदवक्त्र-विनिर्यदग्निः।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः,
सोऽस्याभवत्प्रति भवं भव-दुःख-हेतु।।33।।

कमठासुर ने महाभयानक, धारी नर मुण्डन माला।
और गगन से निकल रही थी, नभ चुम्बी अग्नि ज्वाला।।
भंग तपस्या को करने वह, भूत प्रेत बहु दौड़ाया।
न बिगड़ा प्रभु पारस तेरा, स्वयं कर्म से जकड़ाया।।33।।

ॐ ह्रीं कमठकृतपैशाचिकोपद्रवजयशीलाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन्यास्त एव भुवनाधिप! ये त्रिसंध्य
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य-कृत्याः।
भक्त्योल्लसत्पुलक-पक्ष्मल-देह-देशाः,
पाद-द्वयं तव विभो! भुवि जन्मभाजः।।34।।

हे प्रभु तेरे चरण कमल में, विधिवत आते तीनों काल।
प्रमुदित होकर भक्ति करते, तजकर माया का जंजाल।।
धन्य धन्य वे प्राणी जग में, जो करते पूजा तेरी।
आराधन कर पाद पदम की, मेटे भव भव की फेरी।।34।।

ॐ ह्रीं धार्मिकजनवन्दिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्मिन्नपार-भव-वारि-निधौ मुनीश!
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मन्त्रे,
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति।।35।।

हे मुनीन्द्र! मैं कई जन्मों से, दुःख उठाता आया हूँ।
फिर भी कानों से ना प्रभुवर, आप नाम सुन पाया हूँ।।
जो भी ध्यान लगाकर तेरा, मंत्रोच्चारण सुनता है।
विषधर विपदाओं का उसको, कभी नहीं डस सकता है।।35।।

ॐ ह्रीं पवित्रनामधेयाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मान्तरेऽपि तव-पाद-युगं न देव!
मन्ये मया महितमीहित-दान-दक्षम्।।
तेनेह जन्मनि मुनीश! पराभवानां,
जातो निकेतन महं मथिताशयानाम्।।36।।

हे नाथ आपके चरण युगल में, कई जन्मों से ना आया।
मन वंछित फल देने वाले, ना तेरी पूजाकर पाया।।
इसलिए जगति प्राणी मम, हिय भेदी करते अपमान।
हे मुनीश! तेरे सम्मुख रह, पा जाऊँ फिर से सम्मान।।36।।

ॐ ह्रीं पूतपादाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नूनं न मोह-तिमिरावृतलोचनेन,
पूर्वं विभो! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि।
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते॥37॥

मोह तिमिर से आच्छादित थे, ना खोले मैंने लोचन।
एक बार भी निश्चयपूर्वक, नहीं किये तेरे दर्शन॥
इसलिए प्रभु मर्म-भेदी दुःख, मुझको अति ही सता रहे।
पूर्व जन्म में दर्श किया ना, उसका फल यह बता रहे॥37॥

ॐ ह्रीं दर्शनीयाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या।
जातोऽस्मि तेन-बान्धव! दुःखपात्रं,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-शून्याः॥38॥

हे प्रभु तेरे श्री चरणों की, दर्शन पूजन को आया।
नाम आपका सुना बहुत पर, मन से ना तुमको ध्याया॥
दुःखों का मैं पात्र बना हूँ, भाव शून्य करके भक्ति।
बिना भाव के क्रिया कदापि, फल नहीं देती है उक्ति॥38॥

ॐ ह्रीं भक्तिहीनजनमाध्यस्थाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वं नाथ! दुःखिजन-वत्सल! हे शरण्य!,
कारुण्य-पुण्य-वसते! वशिनां वरेण्य।
भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय॥
दुःखाङ्कुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि॥39॥

हे नाथ दुखी जन वत्सल हो, तुम शरणागत के प्रतिपालक।
करूणा की हो पुण्य मूर्ति तुम, इन्द्रियजेता जग नायक॥
हे महेश! भक्ति पूर्वक मैं, आप चरण में झुकता हूँ।
मेरे दुख को दूर करो, मैं यही प्रार्थना करता हूँ॥39॥

ॐ ह्रीं भक्तजनवत्सलाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निःसंख्य-सार-शरणं शरणं शरण्य,
मासाद्य सादित-रिपु प्रथितावदानम्।
त्वत्पाद-पङ्कजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो,
वन्ध्योऽस्मि चेदभुवन पावन! हा हतोऽस्मि॥40॥

हे अनन्त गुण धारक भगवन, जगति को करते पावन।
शरणागत के रक्षक हो तुम, कर्म शत्रु का किया हनन॥
तेरे पद पंकज में रहकर, ध्यान हीन फल रहित हुआ।
इसीलिए हे प्रभुवर मैं तो, कर्मों द्वारा दुखित हुआ॥40॥

ॐ ह्रीं सौभाग्यदायकपदकमलयुगाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवेन्द्र-वन्द्य! विदिताखिल-वस्तुसार!
संसार-तारक! विभो! भुवनाधिनाथ!
त्रायस्व देव! करुणा-ह्रद! मां पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बु-राशेः॥41॥

अखिल विश्व के ज्ञाता दृष्टा, इन्द्रो द्वारा वन्दित हो।
भव तारक हो आप प्रभु और, तीन लोक के स्वामिन हो॥
करूणा सागर आप देव हो, आओ दुखी को निस्तारों।
महा भयंकर दुख अर्णव से, पावन करके पार उतारो॥41॥

ॐ ह्रीं सर्वपदार्थवेदिने क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्यस्ति नाथ! भवदङ्घ्रि-सरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य भूयाः,
स्वामी! त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि॥42॥

हे शरणागत के प्रतिपालक, आप शरण मैं हूँ आया।
तेरे चरणों की भक्ति से, किञ्चित हमने पुण्य कमाया॥
उसका फल गर देना चाहो, तो इतना सा फल देना।
इस भव पर भव में केवल, प्रभु मम स्वामी तुम ही रहना॥42॥

ॐ ह्रीं पुण्यबहुजनसेव्याय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र!
सान्द्रोल्लसत्पुलक-कञ्चुकिताङ्गभागाः।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुज-बद्ध-लक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो! रचयन्ति भव्याः॥43॥

हे जिनेन्द्र जो भव्य पुरुष है, सावधान मति से आते।
निर्मल तेरे मुख अम्बुज को, अपना ही वे लक्ष्य बनाते॥
सघन रूप से उठे हुए, रोमांचों से तन व्याप्त किए।
विधि पूर्वक थुति रचते उनकी, कर्म काटकर आप्त हुए॥43॥

ॐ ह्रीं जन्ममृत्युनिवारकाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन नयन 'कुमुदचन्द्र'! प्रभास्वराः,
स्वर्ग-सम्पदो भुक्तया।
ते विगलित - मल - निचया,
अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते।।44।।

प्राणी मात्र के नयन कमल को, विकसाने वाले चन्द्रेश,
स्वर्ग सम्पदा को पाने वे, सहसा करते स्वर्ग प्रवेश।

किञ्चित काल वे भोग-भोग कर, नरगति को पा जाते हैं,
अष्ट कर्म को शीघ्र नाशकर, मोक्ष निकेतन पाते हैं।।44।।

ॐ ह्रीं कुमुचन्द्रयतिसेवितपादाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

धत्ता

सब विघ्न हरे सब तोष करे, संसार तजे शिव सुख पावे।
जो संतुति करता श्री को पाता, रोग शोक सब नश जावे।।
यह अर्घ लिया है चरण दिया है, पार्श्वनाथ भवपार करो।
श्री कुमुद चन्द्र संग सौरभ सागर, का प्रभुवर उद्धार करो।।

ॐ ह्रीं हृदय स्थित विंशति-दल कमलाधिपतये श्री पार्श्वनाथाय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

चरण कमल इन्द्रों से पूजित, शान्त कर्म जो किये थे अर्जित।
शम दम यम नीयम के धारी, कार्य सिद्ध हो हे अविकारी।।1।।

सुन्दर नेत्र ज्ञान के खोले, सुर नर तव भक्ति में डोले।
गुण रत्नों की खान जिनेश्वर, नमो नमो पारस परमेश्वर।।2।।

भव समुद्र के तारण हारे, देव अनन्त गुणों को धारे।
चिदानन्द चैतन्य विहारी, उत्तम गुण प्रगटित भवहारी।।3।।

राग द्वेष विवर्जित गुणधर, कर्म बन्ध निर्बन्ध जितेश्वर।
दुष्टोपद्रव नाशन वीरा, ध्यान ध्येय मनमथ चकचूरा।।4।।

कमठासुर बैरी है आया, धूलि जल पत्थर बरसाया।
भूत प्रेत का जाल बिछाया, धार्मिक मन न डिगने पाया।।5।।

क्रोध अनल गरिमा से जीता, सर्वज्ञ बने हे कर्म विजेता।
तपकर चारों कर्म हने हो, शल्य रहित आत्मेश बने हो।।6।।

जगति विषहर अमृत सरवर, पद नत देव नगेन्द्र प्रभुवर।
शोक रहित हो अचल जिनेश्वर, पुष्प वृष्टि नित होती फणिधर॥7॥

योजन दिव्य ध्वनि स्वर सुन्दर, ढ़ोरे चौंसठ चँमर मनोहर।
सिंहासन पर आप विराजे, भामण्डल भव सात बतायें॥8॥

दुन्दुभि नाद सदा जयवन्ता, श्वेत क्षत्र सब ताप हरन्ता।
हेमार्जुन मणि रतन है सोहें, समवशरण सबके मन मोहें॥9॥

भव्य जीव सब अन्दर आते, विस्मय से नत कर्म नशाते।
मोक्ष प्रदाता नाम तिहारा, श्रेष्ठ चरण जिनराज सहारा॥10॥

दर्शन करता पाप नशाता, भक्ति हीन भव गोता खाता।
वात्सल्य धर नम्रीभूत हो, भाग्य सराहे अभिभूत हो॥11॥

लोका-लोक पदार्थ निहारे, सुकृत जन आनन्द विहारे।
जन्म जरा मृत्यु से रहिता 'कुमुद चन्द' स्तोत्र रचयिता॥12॥

दोहा

तीन लोक के तिलक हो, पार्श्व नाथ भगवान।
धर्म ध्यान निधी पा रहे, कर तेरा गुण गान॥
भक्त सभी नत चरण में, भक्ति भाव उर धार।
'सौरभ' सुरभित हो रहा, गा-गा मंगलाचार॥

ॐ ह्रीं श्रीं ऐं अर्हं क्रुर कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पार्श्वनाथ भगवान के, गुण हैं अपरम्पार।
'सौरभ सागर' नत हुए, गा गा मंगलाचार॥

पुष्पांजलि क्षिपेत्।

श्री कल्याण मंदिर स्तोत्र (हिन्दी)

पद्यानुवादक : आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज

कल्याण धाम हो हो उदार तुम, पाप नाश में कारण हो।
भयाक्रान्त जो प्राणी जग में, भय का करते निवारण हो॥
पारावार में डूब रहे जो, जीव मात्र को पोत समान।
श्री जिन पारस नाथ चरण में, बारम्बार विनम्र प्रणाम॥1॥

सागर-सा गुण गौरव तेरा, शब्दों में क्या व्यक्त करें।
बृहस्पति भी हार गया जो, सदा काल तव भक्त रहे॥
कमठासुर के मान भस्म में, अग्नि शिखा सम हो प्रभु आप।
तीर्थ पति की स्तुति करता, विस्मय-पूर्वक हरने पाप॥2॥

हे प्रभु तेरा रूप अनोखा, कैसे करूँ स्वरूप बखान।
मन्द बुद्धि मैं ना कर सकता, तेरी महिमा का गुणगान॥
प्रखर सूर्य की दिव्य प्रभा में, स्वयं रूप न लख पाता।
ऐसा कौशिक शिशु दिनकर का, वर्णन कैसे कर पाता॥3॥

मोह कर्म के नश जाने पर, नर अनुभव सब कर सकता।
शक्ति भले कितनी हो उसकी, गुण वर्णन ना कर सकता॥
प्रलय काल में सागर का जब, पानी बाहर हो जाता।
रत्नों का फिर ढेर दिखें पर, कोई ना है गिन पाता॥4॥

हे प्रभु! मैं हूँ मतिहीन पर, तुम गुण रत्नों के आगार।
फिर भी तेरी स्तुति करने, खड़ा हुआ बुद्धि अनुसार॥
अपनी छोटी भुजा से बालक, सहज भाव दर्शाता है।
देखो कितना बड़ा है सागर, और हाथ फैलाता है॥5॥

बड़े-बड़े योगीजन प्रभुवर, गुण गाने असमर्थ रहे।
हम मूरख हैं ज्ञानहीन प्रभु, तव गुण गौरव कैसे कहें॥
ज्यों पँछी अपनी बोली में, प्रभुवर बातें करते हैं।
त्यों हम बिना विचारे प्रभुवर, भक्ति तेरी करते है॥6॥

हे जिनेन्द्र! तव स्तुति की, महिमा अचिन्त्य कहलाती है।
नाम मात्र ही जीव मात्र को, भव पीड़ा से बचाती है॥
ग्रीष्म काल की तीव्र ताप से, ज्यों नर पीड़ित हो जाते।
पदम सरस की बात कहूँ क्या, सरस पवन सुख पहुँचाते॥7॥

मन मन्दिर के उच्चासन पर, वास करे पारस भगवन।
कर्मों के दृढ़तर बन्धन भी, ढीले पड़ जाते तत्क्षण॥
विषधर जब चन्दन तरुवर पर, लिपट गया हो अति विकराल।
नीलकण्ठ के शब्द मात्र से, बन्धन ढीले हो तत्काल॥8॥

विपदायें लाखों आकर के, कई मुश्किलें खड़ी करें।
तव दर्शन की फूँक मात्र से, तिनकेसी तत्काल उड़ें॥
जैसे गौस्वामी को लखकर, तजते पशुओं को तस्कर।
भय के मारे भग जाते वे, समझे उदित मान दिनकर॥9॥

प्रभुवर जो तुमको हिय धारे, हो जाए भव सागर पार।
इसका मतलब ये ना समझो, भविजन देते तुमको तार॥
चर्म-मसक तिरने का कारण, वायु का है तीव्र संयोग।
मसक तीरे वायु के संगत, भव्य तरे पा तव संयोग॥10॥

हरि-हरादिक महापुरुषों को, किया पराजित काम ने।
उसी काम को क्षण भर में ही, नष्ट किया था आपने॥
रखता है सामर्थ्य वारि ज्यों, नाश करन को दावानल।
उसी वारि को जला डालता, क्रोधित होकर बड़वानल॥11॥

जिनकी तुलना अन्य किसी से, कभी नहीं की जा सकती।
ऐसे प्रभु के गुण अनन्त को, जिह्वा कैसे गा सकती॥
हे प्रभु! तुमको जो हिय धारे, अतिशीघ्र तिर जाते हैं।
यह महिमा है विस्मय-कारी, चिन्तन में ना आते हैं॥12॥

क्रोध शत्रु को सबसे पहले, हे प्रभु तुमने नष्ट किया।
एकागारिक कर्म को कहिये, किस विधि तुमने ध्वस्त किया॥
अभ्रशिला संस्मृति में देखो, एकदम शीतल कहलाता।
फिर भी हरे भरे वृक्षों को, क्या तुषार न झुलसाता॥13॥

बड़े-बड़े योगीजन प्रभुवर, ध्यान सदैव लगाते हैं।
हृदय कमल के मध्य भाग में, अन्वेषण कर ध्याते हैं॥
है पवित्र निर्मल सुकान्तिमय, कमल बीज का जन्म स्थान।
कमल कर्णिका हृदय कमल बिन, प्रभु मिले न सकल जहान॥14॥

किस धातु से सोना बनता, पा अग्नि का तीव्र संयोग।
शुद्ध स्वर्ण हो जाता पल में, तज कर कालिमा का योग॥
ऐसे ही संसारी प्राणी, तेरा ध्यान लगाते हैं।
राग द्वेष तन तजकर क्षण में, परमातम पद पाते हैं॥15॥

तुमको बैठा अपने तन में, भविजन ध्यान लगाते हैं।
और उसी तन को क्यों प्रभुवर, आप नष्ट करवाते हैं॥
ऐसा ही स्वभाव जीव का, राग द्वेष से रहित हुआ।
महापुरुषों ने विग्रह करके, काय द्वेष को शमित किया॥16॥

हो अभिन्न तुम मुझसे प्रभुवर, ऐसे बुद्धि से ध्याते।
तज विकार तेरे प्रभाव से, तेरे सम ही बन जाते॥
यह अमृत है यूँ श्रद्धा कर, पानी पीता जो इन्सान।
क्या वह पानी विष विकार को, दूर नहीं करता विद्वान॥17॥

अज्ञान तिमिर से घिरे हुए जो, तुम्हें मानते ब्रह्म महेश।
और तुम्हारी पूजा करते, अन्य मतावलम्बी जिनेश॥
मानों निश्चित प्यारे बन्धु, रोग पीलिया हुआ जिसे।
कई रंगों में श्वेत शंख भी, दिखता है विपरीत उसे॥18॥

धर्म देशना के अवसर पर, जो आ जाता आप समीप।
मानव की तो बात अन्य है, पादप होता शोक रहित॥
दिनपति के प्रगटित होते ही, जीव मात्र जग जाते हैं।
तरुवर भी प्रमुदित हो करके, शीघ्र बोध को पाते हैं॥19।

देवों द्वारा सघन पुष्प की, वर्षा होती चारों ओर।
डंठल नीचे पँखुरी ऊपर, हो जाती है सबही ओर॥
आप निकटता सूचित करती, भव्य जीव को अहो प्रभो।
विज्ञ जनों के विधि के बन्धन, नीचे होते स्वयं विभो॥20॥

गम्भीर हृदय के सागर में प्रभु, दिव्य वचन तव मुखरित हैं।
मानव माने अमृत सम यह, जग जाहिर और प्रगटित है॥
भव्य प्राणी पी करके इसको, आनन्दित हो जाते हैं।
परम सौख्य को पाकर सहसा, अजर अमर हो जाते हैं।21॥

देवों द्वारा ऊपर नीचे, चँवर ढुराये जाते हैं।
नम्री-भूत वे शुद्ध चँवर ही, विनय पाठ सिखलाते हैं॥
प्रभु चरणों में मन वच तन से, जो झुक कर करते वन्दन।
कर्म रहित हो देह नाश कर, पा जाते है मुक्ति सदन॥22॥

उज्ज्वल कंचनमय सिंहासन, पर स्थित है श्यामल तन।
गम्भीर स्वरों में प्यारे तेरे, खिर जाते हैं दिव्य वचन॥
स्वर्ण सुमेरु पर्वत पर जब, होता मेघों का गर्जन।
भव्य मोर हर्षित हो करके, करते उसका अवलोकन॥23॥

दैदीप्यमान प्रभु भामण्डल से, लुप्त छवि सुरतरु पाता।
स्वयं अचेतन होकर भी वह, आप प्रभा को बतलाता॥
राग द्वेष से रहित आप हो, जो भी आप निकट आता।
भव्य अहो! वह वीतराग हो, मोक्ष निकेतन को पाता॥24॥

वायु पथ में देवों द्वारा, होता रहता दुन्दुभि नाद।
हे प्राणी हे प्राणी! करलो, आतम हित तजकर परमाद!
मोक्ष पुरी में जाना चाहो, पार्श्व प्रभु का ले लो नाम।
चिन्तामणि हे विघ्न विनाशी, करते भविजन का कल्याण॥25॥

सारे भू-मण्डल पर प्रभुवर, फैला तेरा दिव्य प्रकाश।
अपने अधिकारों से च्युत हो, तारागण सह आया पास॥
श्वेत छत्र तव शोभा देता, ताराओं से घिरा हुआ।
श्यामाकर त्रय तनु धारण कर, तव सेवा में लगा हुआ॥26॥

सोना चाँदी माणिक आदि से, निर्मित है त्रय कोट महान।
सर्व सम्पदा से परिपूरित, तीन लोक के पिण्ड समान॥
कान्ति कीर्ति व तेज पुँज का, वर्तुल बना अति सुन्दर।
पार्श्व प्रभु का समवशरण ही, भव्यों का लेता मनहर॥27॥

नमन समय में इन्द्रों के, मुकटों को तजते दिव्य सुमन।
सर्वश्रेष्ठ आधार मानकर, लिपटें जाते आप चरण।।
आप समागम को पा करके, ना जाते विद्वान कहीं।
पाद पदम में तेरे रहकर, करते है कल्याण यही।।28।।

जन्म मरण दुख अर्णव से, प्रभु आप विमुख कहलाते हो।
आप शरण में जो आ जाता, उसको पार लगाते हो।।
अग्नि से परिपक्व अधोमुख, घट सिन्धु तिरवाता है।
कर्म विपाक से शून्य आप ये, विस्मय सत दर्शाता है।।29।।

तीन लोक के स्वामी होकर, भी कहलाते हो निर्धन।
है अक्षर स्वभाव आपका, कर न सके तेरा लेखन।।
हे स्वामी अज्ञान-वान भी, कहलाते हो आप यहाँ।
सकल लोक की सकल वस्तुओं, के ज्ञाता हो आप यहाँ।।30।।

पूर्ण रूप से नभ मण्डल को, व्याप्त किया था धूल गिरा।
पूर्व बैर के कारण प्रभु पर, दुष्ट कमठ उपसर्ग किया।।
फिर भी पारस स्वामी तेरा, छाया तक न नष्ट किया।।
किन्तु विफल हो, हो हताश वह, कर्म पांशु से ग्रस्त हुआ।।31।।

महा भयंकर दुस्तर वारि, वर्षा कर उपसर्ग किया।
बादल गरजा विद्युत चमका, अपना पौरुष व्यर्थ किया।।
फिर भी पार्श्व प्रभुवर तेरा, कुछ भी ना वह कर पाया।
अपने ही हाथों से वह तो, अपने ऊपर खड्ग चलाया।।32।।

कमठासुर ने महाभयानक, धारी नर मुण्डन माला।
और गगन से निकल रही थी, नभ चुम्बी अग्नि ज्वाला।।
भंग तपस्या को करने वह, भूत प्रेत बहु दौड़ाया।
न बिगड़ा प्रभु पारस तेरा, स्वयं कर्म से जकड़ाया।।33।।

हे प्रभु तेरे चरण कमल में, विधिवत आते तीनों काल।
प्रमुदित होकर भक्ति करते, तजकर माया का जंजाल।।
धन्य, धन्य वे प्राणी जग में, जो करते पूजा तेरी।
आराधन कर पाद पदम की, मेटे भव भव की फेरी।।34।।

हे मुनीन्द्र! मैं कई जन्मों से, दुख उठाता आया हूँ।
फिर भी कानों से ना प्रभुवर, आप नाम सुन पाया हूँ॥
जो भी ध्यान लगाकर तेरा, मंत्रोच्चारण सुनता है।
विषधर विपदाओं का उसको, कभी नहीं डस सकता है॥35॥

हे नाथ आपके चरण युगल में, कई जन्मों से ना आया।
मन वांछित फल देने वाले, ना तेरी पूजाकर पाया॥
इसलिए जगति प्राणी मम, हिय भेदी करते अपमान।
हे मुनीश! तेरे सम्मुख रह, पा जाऊँ फिर से सम्मान॥36॥

मोह तिमिर से आच्छादित थे, ना खोले मैंने लोचन।
एक बार भी निश्चय-पूर्वक, नहीं किये तेरे दर्शन॥
इसलिए प्रभु मर्म भेदी दुःख, मुझको अति ही सता रहे।
पूर्व जन्म में दर्श किया ना, उसका फल यह बता रहे॥37॥

हे प्रभु तेरे श्री चरणों की, दर्शन पूजन को आया।
नाम आपका सुना बहुत पर, मन से ना तुमको ध्याया॥
दुःखों का मैं पात्र बना हूँ, भाव शून्य करके भक्ति।
बिना भाव के क्रिया कदापि, फल नहीं देती है उक्ति॥38॥

हे नाथ दुःखीजन वत्सल हो, तुम शरणागत के प्रतिपालक।
करुणा की हो पुण्य मूर्ति तुम, इन्द्रियजेता जग नायक॥
हे महेश! भक्तिपूर्वक मैं, आप चरण में झुकता हूँ।
मेरे दुःख को दूर करो, मैं यही प्रार्थना करता हूँ॥39॥

हे अनन्त गुण धारक भगवन, जगति को करते पावन।
शरणागत के रक्षक हो तुम, कर्म शत्रु का किया हनन॥
तेरे पद पंकज में रहकर, ध्यान हीन फल रहित हुआ।
इसीलिए हे प्रभुवर मैं तो, कर्मों द्वारा दुखित हुआ॥40॥

अखिल विश्व के ज्ञाता दृष्टा, इन्द्रों द्वारा वन्दित हो।
भव तारक हो आप प्रभु और, तीन लोक के स्वामिन हो॥
करुणा सागर आप देव हो, आओ दुःखी को निस्तारों।
महा भयंकर दुःख अर्णव से, पावन करके पार उतारो॥41॥

हे शरणागत के प्रतिपालक, आप शरण में हूँ आया।
तेरे चरणों की भक्ति से, किञ्चित हमने पुण्य कमाया।।
उसका फल गर देना चाहो, तो इतना-सा फल देना।
इस भव पर भव में केवल, प्रभु मम स्वामी तुम ही रहना।।42।।

हे जिनेन्द्र जो भव्य पुरुष है, सावधान मति से आते।
निर्मल तेरे मुख अम्बुज को, अपना ही वे लक्ष्य बनाते।।
सघन रूप से उठे हुए, रोमांचों से तन व्याप्त किए।
विधि-पूर्वक थुति रचते उनकी, कर्म काटकर आप्त हुए।।43।।

प्राणी मात्र के नयन कमल को, विकसाने वाले चन्द्रेश।
स्वर्ग सम्पदा को पाने वे, सहसा करते स्वर्ग प्रवेश।।
किञ्चित काल वे भोग-भोग कर, नरगति को पा जाते हैं।
अष्ट कर्म को शीघ्र नाशकर, मोक्ष निकेतन पाते हैं।।44।।

दोहा

पार्श्वनाथ भगवान के, गुण हैं अपरम्पार।
'सौरभ सागर' नत हुए, गा गा मंगलाचार।।

पुष्पांजलि क्षिपेत्।

चन्दन बार-बार घिसे जाने पर भी उत्तम गन्ध से युक्त रहता है सुवर्ण बार-बार तपाये जाने पर भी सुन्दर रहता है इक्षुदण्ड बार-बार छिन्न-भिन्न किये जाने पर भी मधुर रहता है सचमुच ही प्राणान्त हो जाने पर भी महात्माओं की प्रकृति में विकार नहीं होता है।

3. श्री मंशापूर्ण महावीर विधान

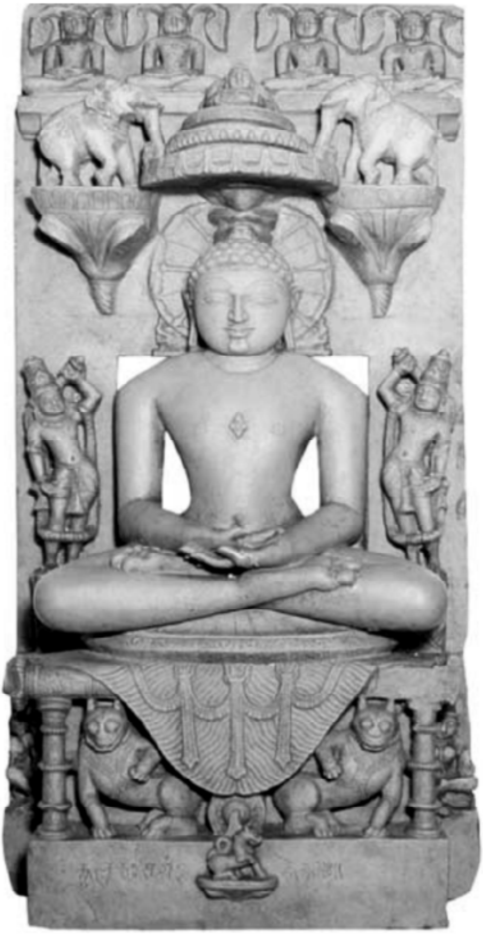

श्री 1008 मंशापूर्ण महावीर भगवान
गंगनहर, मुरादनगर (उ.प्र.)

रचयिता
दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

3. श्री मंशापूर्ण महावीर विधान

माण्डला

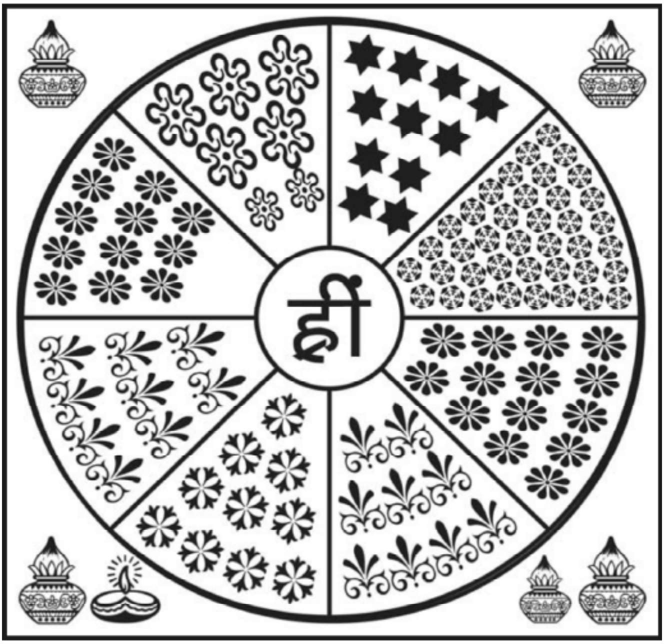

कुल अर्घ्य 111 : प्रथम वलय (भावाराधना) 10, द्वितीय वलय (गर्भाराधना) 9, तृतीय वलय (जन्माराधना) 12, चतुर्थ वलय (नामाराधना) 7, पंचम वलय (दीक्षाराधना) 11, षष्टम वलय (ज्ञानाराधना) 39, सप्तम वलय (दंशनाराधना) 14, अष्टम वलय (मोक्षाराधना) 9

मंशापूर्ण महावीर व्रत विधि

व्रतारम्भ : शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी से या महावीर स्वामी की किसी भी कल्याणक तिथि से

अवधि : 3 वर्ष से 6 वर्ष

व्रतपूजा : व्रत वाले दिन मंशापूर्ण महावीर विधान, पूजा चालिसा पढ़ें।

जाप : ॐ ह्रीं श्री मंशापूर्ण महावीराय सुख सौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा।

व्रत विधि : 72 उपवास या एकासन

श्री मंशापूर्ण महावीर विधान प्रारम्भ

स्थापना

हे वीर प्रभो महावीर प्रभो, तेरे चरणों में आया हूँ।
सब पाप ताप संताप हरो, मैं अर्चन कर हर्षाया हूँ॥
आओ आओ प्रभु एक बार, मेरे मन का प्रक्षाल करों।
हे महाश्रमण हे वर्धमान, तुम सन्मति दे जंजाल हरों॥
प्रभु मंशापूरण करते हो, प्रभु संशय तिमिर भी हरते हों।
मैं मन से पूजा तेरी करूँ, सुख सिन्धु से भी भरते हों॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

जल का जलवा प्रभु जगति में, शुचिकर प्यास बुझाता है।
तेरी पूजा में जल अर्पित, जो जन्म जरा विनशाता है॥
नीर सहित हे महामुनि, मैं भक्ति सरिता लाया हूँ।
मंशापूरण महावीर की, पूजा कर हर्षाया हूँ॥

ॐ ह्री श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

चन्दन की प्रभु शीतलता तो, तन का ताप मिटाती है।
प्रभु पूजा भक्ति का चन्दन, वन्दन बन मुस्काती है॥
भव भव की ज्वाला शान्त करूँ, प्रभु चन्दन चरण चढ़ाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर, मैं गीत आपके गाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

अक्षय सुख का अनुपम वैभव, भोगों में फँस खोया हूँ।
जीवन धन्य न कर पाया प्रभु, मोह नींद में सोया हूँ॥
चरणों में अक्षत अर्पित कर, अक्षय निधी को पाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर, मैं कर्म कलंक मिटाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

यह कोमल कुसुम मनोहर है, जो क्षण भंगुरता दर्शाता।
यौवन जीवन पा भोगों में, क्यूँ मन मेरा रच पच जाता॥
हे बाल ब्रह्मचारी जिनवर, यह भाव पुष्प स्वीकार करो।
श्री मंशापूरण महावीर जी, काम नाश उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

क्षुधा वेदिनी महाभयानक, भक्ष्य अभक्ष्य सदा चाहे।
रात दिवस का भेद गिने ना, धर्म कर्म सब विनशावे॥
हे महायति तेरी चर्या कर, क्षुधा रोग विनशाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर की, गौरव गाथा गाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

जगमग जगमग जलता दीपक, बाहर उजियाला करता।
अन्तर मन आलोकित होवे, भक्ति दीप माला धरता॥
दिव्य ज्ञान की किरणें फूटें, भाव यही मैं भाता हूँ।
श्री मंशापूरण महावीर, मैं चरणन दीप चढ़ाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

काम क्रोध मद लोभ मोह की, भीतर ज्वाला जलती है।
नित नूतन परिवेश बनाकर, निज आतम को छलती है।।
दश विध धूप अगन में खेकर, दश धर्मों को पाऊँगा।
श्री मंशापूरण पूजा करके, आठों कर्म जलाऊँगा।।

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय अष्ट–कर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

भाव समर्पण का फल लेकर, भक्ति में अनुरक्त हुआ।
सिद्धालय का अमृत फल पा, कर्म जाल से मुक्त हुआ।।
हे सन्मति दाता बुद्धि दो, ना लौकिक फल की चाह करूँ।
श्री मंशापूरण महावीर जी, धर्म लीन शिव राह वरूँ।।

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय मोक्ष महाफल प्राप्तये फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्य

श्रद्धा का जल कर में लेकर, भक्ति का चन्दन लाया।
अक्षत कुसुम चरूवर पावन, दीप धूप वन्दन भाया।।
सिद्ध शिला फल चाह लिये प्रभु, आठों द्रव्य चढ़ाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर की, पूजा कर सुख पाऊँगा।।

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्य–पद–प्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रथम वलय–भावाराधना

(प्रथम–वलय–मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

महामना हे महामुनि हे, महायोगी महाज्ञानी हो।
महाशक्ति हे महाज्योति हे, महाप्रभु महादानी हो।।
महाव्रतों को महाभाव से, महावीर ने धार लिया।
मंशापूरण महावीर बन, मानव का उद्धार किया।।1।।

ॐ ह्रीं महामना महति श्रीमहावीरमंशापूर्णमहावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन्य धन्य चेतन्य स्वभावी, रत्नत्रय से पूर्ण प्रभो।
आत्मसाधना से निज साधे, कर्म करे सब चूर्ण विभो॥
मोक्ष मार्ग पर निराबाध ही, श्रद्धालु जन चलते हैं।
महावीर के पथ को पाकर, निजानन्द रस चखते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रय-धर्मप्रतिपादकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुख से पीड़ित है जग प्राणी, पर सुख भी ना भाता है।
मन ईर्ष्या से भरा हुआ है, पर में ही भरमाता है॥
भक्ति ध्यान के उपवन से कुछ, द्रव्य भाव ले आया हूँ।
मंशापूरण महावीर की, पूजा कर हर्षाया हूँ॥3॥

ॐ ह्रीं ईर्ष्या-रहित-भाव विकासक निर्मल-भाव प्रकाशक-श्रीमंशापूर्ण महावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज स्वभाव को भूला प्राणी, भव भव गोते खाता है।
मारिची सम जग में भटका, पुण्य पाप फल पाता है॥
दुर्लभ नरभव का मूल्यांकन, भव्य जीव ही करते हैं।
महावीर सा संयम पाकर, भव सागर से तरते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं भव-भ्रमण-विमुक्ताय नरभव-संयमप्राप्तये श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तत्व ज्ञान श्रद्धान अटल कर, संयम पथ अपनाना है।
जीव तत्व को जाने चेतन, यही भाव सुख धामा हैं॥
महावीर ने सर्व जीव को, करुणा मयी उपदेश दिया।
निज में निज गुण पाले चेतन, यही सत्य संदेश दिया॥5॥

ॐ ह्रीं तत्वज्ञानश्रद्धानाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य तेज से सूर्य प्रभा को, क्षीण करे महावीर प्रभो।
सोम्य छवि से चन्द्र छवि को, क्षीण करे महावीर प्रभो॥
समवशरण की गुणमय गरिमा, भावदशा समझाती हैं।
आत्म रमण को संयम धरले, जो कल्याण कराती है॥6॥

ॐ ह्रीं समवशरणविराजित-तीर्थंकराय भाव-दशा पवित्रकरणार्थे श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल कल कल कल सरिता बहती, अपनी मंजिल पाने को।
भक्त सदा तव चरण सेवता, मोक्ष मार्ग अपनाने को॥
आयु की सीमा निश्चित है, महावीर का ध्यान करूँ।
उनके पद चिन्हों पर चलकर, शुद्धातम का ध्यान धँरु॥7॥

ॐ ह्रीं संन्यासधारणसमर्थाय शुद्धात्मदर्शनाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्त समुन्दर सूरज सरिता, किसी एक के ना होते।
जो लेता है लाभ इसी से, उसको ही ये फल देते॥
मंशापूरण महावीर जी, ना देते ना लेते है।
जो भक्ति श्रद्धा से करता, पुण्य बन्ध फल देते है॥8॥

ॐ ह्रीं भेदरहितजीवनपरिणमाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन चंचल शुभ अशुभ विचारें, पुण्य पाप बन्धन करता।
निज आतम में स्थिर ना हो, फल भोगे क्रन्दन करता॥
दुख अर्णव से पार उतारो, मंशापूरण जिन भगवान।
क्रोध मान मद लोभ मिटाऊँ, अर्घ चढ़ाकर करूँ प्रणाम॥9॥

ॐ ह्रीं अशुभपापभावविसर्जनाय शुभ-पुण्य-भावसृजनाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

भावों की शुभ निर्मलता ही, भव बन्धन को नित काटें।
निज स्वभाव में रम जा चेतन, खोल राग की सब गाठें॥
भाव-साधना-भाव-समाधी, भाव स्वभाव मे लीन रहें।
द्रव्य भाव द्वय अर्घ्य समर्पित, श्रद्धालय में लीन रहें॥10॥

ॐ ह्रीं शुद्ध भाव परिणताय श्री मंशापूर्ण महावीर तीर्थंकराय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय-गर्भाराधना

(द्वितीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

जन्म मरण दुख सहता चेतन, चतुर्गति में भ्रमण किया।
त्रस पर्याय न पाई उसने, गोद निगोद में रमण किया॥
स्वाभाविक पुण्योदय पाकर, एकन्द्रिय पर्याय तजा।
तीर्थंकर का दर्शन पाकर, निर्मलता से उन्हें भजा॥1॥

ॐ ह्रीं चतुर्गतिभ्रमणविमुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर की जीवन गाथा, पूर्व जन्म की याद करूँ।
भक्ति ध्यान से बदले जीवन, ऐसा मैं फरियाद करूँ॥
जग वैभव को पाकर मैंने, निज वैभव ठुकराया है।
पुनर्जन्म सब मेटो स्वामी, अन्तर्मन अकुलाया है॥2॥

ॐ ह्रीं पुनर्जन्मविनाशनसमर्थकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदिनाथ के समशवरण में, जाकर भी वह ना सुधरा।
अहंकार के वशीभूत हो, जैन धरम को वह विसरा॥
पंचानन पर्याय में आकर, मुनिराज से ज्ञान मिला।
श्रद्धा धर चारित्र धारकर, मोक्ष मार्ग का द्वार खुला॥3॥

ॐ ह्रीं भव-भवान्तरे वीतराग-धर्म-प्राप्तये श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्त समागम जिनवर वाणी, दुर्लभता से मिलती है।
जिन मुनि दर्शन पूजन से ही, कर्म शृंखला कटती है॥
श्वासों का ना यहाँ भरोसा, एक आती इक जाती है।
तीर्थंकर पद पा जाऊँ जो, आवागमन मिटाती है॥4॥

ॐ ह्रीं जिन-मुनिसमागमाय सद्धर्म-प्राप्तये श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंह देव कनकोज्जवल राजा, सप्त स्वर्ग में जन्म हुआ।
नन्द राज नर भव को पाकर, तीर्थंकर पद बन्ध किया॥

स्वर्ग सोलहवें में जाकर के, अपना समय बीताए हैं।
त्रिशला रानी के उर आकर, तीर्थंकर कहलाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं भव-भवान्तरे-संयम-सम्यक्त्वप्राप्तये श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु चरणों में दर्शन शुद्धि, विनय ज्ञान तप शील धरा।
त्याग तपस्या वैरागी बन, देवागम गुरु सेवा करा।।
धर्म प्रभावना वात्सल्य धर, षट् क्रिया प्रवचन भक्ति।
साधु समाधि धारे-सोला, बंधति तीर्थंकर प्रकृति।।6।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि प्रवचन वात्सल्य पर्यन्त षोडश-भावनाबलेन तीर्थंकरपद प्राप्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिशला रानी कुण्डलपुर के, महलों में सपने देखे।
सिद्धारथ ने फल बतलाया, तीर्थंकर बालक जन्मे।।
अष्ट देवियाँ छप्पन कन्या, माता की सेवा करतीं।
पन्द्रह महिने रत्न बरसते, धन्य धन्य जनता कहती।।7।।

ॐ ह्रीं षोडश-स्वप्न-प्रदर्शकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन ज्ञान के धारी होकर, गर्भ वास नव मास रहे।
मंजुषा जो देव रचित थी, उस पर ही प्रवास करें।।
परिवर्तन ग्रह राज्य नगर का, पुण्य जीव का दर्शाता।
सप्त खण्ड का महल अनुपम, कुण्डलपुर में बन जाता।।8।।

ॐ ह्रीं गर्भवासे देवोपुनीत-वैभवप्रदर्शकाय आषाढ शुक्ला षष्ठ्यां गर्भमंगल-मंडिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

अन्तिम गर्भ हो चरमोत्तम तन, महावीर-सा बन जाऊँ।
महाअर्घ चरणाम्बुज देकर, वज्र कर्म सब विनशाऊँ।।
तीर्थंकर का गर्भाराधन, गर्भ दोष का नाश करे।
त्रय ज्ञानी समकित तीर्थंकर, धर्मात्मक उल्लास भरे।।9।।

ॐ ह्रीं मंजूषा विराजित श्री मंशापूर्ण-महावीर-तीर्थंकराय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय-जन्माराधना

(तृतीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चैत सुदी तेरस का शुभ दिन, तीर्थंकर अवतार हुआ।
तीन लोक में शान्ति छाई, घर घर मंगलाचार हुआ।।
देव इन्द्र हर्षित हो करके, कुण्डलपुर तत्क्षण आया।
ऐरावत पर बिठा प्रभु को, मेरु पर था न्यवहन कराया।।1।।

ॐ ह्री चैत्र शुक्ला त्रयोदश्यां जन्म-मंगल-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीर जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर रूप सलोना मनहर, जन मन आकर्षित करता।
किलकारी करते आँगन पर, नर देवा हर्षित होता।।
भक्ति सेवा पूर्व जन्म में, निर्मल भावों से करते।
अतिशय रूप सदा ही पाते, मन्द मन्द प्रमुदित होते।।2।।

ॐ ह्रीं शतेन्द्र-नेत्र-मनोहरी-दिव्यातिशयरूपमण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म पुष्प की पुलकित होकर, गन्ध प्रभावना फैलाते।
जन मन को जागृत करते वे, त्याग मार्ग को दर्शाते।।
ऐसे जन तीर्थंकर बनकर, तन सुरभित सौरभ पाते।
जिन जिन गलियों से गुजरे वे, उपवन से है महकाते।।3।।

ॐ ह्रीं सदाचरण-गन्ध-विस्तारकाय दिव्यसुगन्धिततन-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रम करते पर खेद न करते, धर्म त्याग तप मारग पर।
पद विहार या आतापन हो, अनशन आदि धारण कर।।
ऐसे तपसी जीव कदाचित्, तीर्थंकर पद को पाते।
नहीं पसीना निर्मल तन से, सबके चित को उमगाते।।4।।

ॐ ह्रीं निःरोग-तन-प्रदायकाय निःश्वेदत्व-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औदारिक तन की पुष्टि को, नर देवा कृत ले आहार।
ध्यान साधना लीन रहे पर, कभी नहीं करते निहार॥
सारे भोजन के अंशों को, दिव्य दिप्ती से नष्ट करें।
चार घातियाँ कर्म नाशकर, निज परमातम इष्ट वरें॥5॥

ॐ ह्रीं विशुद्ध-तन-प्रदायकाय-निहार-रहित-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक की सुख सुविधा पा, जनधन के वे संग रहे।
हितमित प्रिय वाणी को बोलें, नहीं किसी को तंग करें॥
मुनि बने पर मौन रहे वे, आत्म साधना ही उद्देश्य।
केवलज्ञानी बनकर जग में, जीवों को दें धर्म उपदेश॥6॥

ॐ ह्रीं मधुर-वचन-प्रस्फुटिताय हित-मित-प्रिय-वचनातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व जन्म में मुनिराज की, निशदिन वैय्या वृति करें।
संहनन वज्रवृषभ को पाकर, अतुल्य बल की शक्ति धरें॥
शक्ति पाकर कर्म नशावें, ना जीवों का घात करें।
तीर्थंकर की शक्ति संपदा, सब जीवों पे राज करें॥7॥

ॐ ह्रीं चरमोत्तम-शरीर-प्राप्ताय बज्रवृषभ-नाराच-संहनन-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पशु पक्षी या नर देवा हो, सब पर करुणा बरसाते।
भाव सदा वात्सल्य मयी रख, सब जीवों को दुलराते॥
प्रेम पूर्ण व्यवहार के कारण, रक्त श्वेत हो जाता है।
प्राणी मात्र को अभय दान दे, तीर्थंकर पद पाता है॥8॥

ॐ ह्रीं सर्व-जीववात्सल्य-प्रदायकाय क्षीरवत्-श्वेतरुधिर-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्त पाद मस्तक चिह्नांकित, शुभ लक्षण शोभित करता।
गुणरत्नों से भूषित बालक, जनमन को हर्षित करता॥

आठ सहित कुल एक हजारी, लक्षण से परिपूरित हैं।
अर्घ चढ़ाऊँ करूँ आरती, श्रद्धा से नित पूजित हैं॥9॥

ॐ ह्रीं शुभ-लक्षण-विकासकाय अष्टोत्तरसहस्रलक्षणाधिश्वराय श्रीमंशापूर्ण महावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गोल कपोल या दीर्घ भुजाएँ, उन्नत कंधे मन भाएँ।
उदर कमर या चरण लखे सब, सुन्दर नक्कासी पाएँ।
अंग अंग का नाप तोल से, सुन्दर तन निर्मित होता।
समचतुरस्र संस्थान से, तन विकृत वर्जित होता॥10॥

ॐ ह्रीं सर्वजनाकर्षकसौन्दर्यप्रदायक-समचतुरस्र-संस्थान-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशविध मुनियों की भक्ति या, पीड़ित की सेवा करते।
मन से करुणा स्रोत बहाकर, वचनों से प्रमुदित करते॥
स्वार्थ रहित हो तीन योग से, हर पीड़ा जो हरते हैं।
मन वच तन से महाबली हो, आत्म बली बन रहते हैं॥11॥

ॐ ह्रीं त्रयोबल-वर्धनाय अतुल-बल-वीर्यपराक्रमगुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

जन्म काल का अतिशय सुखकर, तीर्थंकर ही पाते हैं।
कल्याणक शुभ जन्म मनाकर, नर देवा हर्षाते हैं॥
जन्म मरण की भ्रमण शृंखला, तब पूजा से घट जाये।
अर्घ समर्पित तव चरणों में, मोह तिमिर सब छट जाये॥12॥

ॐ ह्रीं जन्मावसरे त्रिभुवन-शक्ति-प्रदायकाय चैत-सुदी-तेरस-जन्मंगलमंडिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय-नामाराधना

(चतुर्थ-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

माता त्रिशला का प्यारा वह, सिद्धारथ का नन्दन है।
सोधर्म इन्द्र का आसन कम्पा, करता तत्क्षण वन्दन है॥

मेरु पर्वत पर ले जाकर, प्रथम वहाँ अभिषेक किया।
शक्ति जानी तीर्थंकर की, 'वीर' नाम प्रथमेश दिया॥1॥

ॐ ह्रीं अभिषेक-पूर्व-सुमेरुपर्वतोपरि शक्तिज्ञाताय सौधर्मइन्द्रेण-वीर-नाम-प्रदत्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोलह सपने माता देखे, घर में सब भण्डार भरे।
राज्य शक्ति की वृद्धि होवे, रत्नों की बरसात करे॥
कुण्डलपुर के राज्य नगर में, सब सुख बढ़ता जाता है।
इसलिए शुभ नाम प्रभु का, 'वर्धमान' कहलाता है॥2॥

ॐ ह्रीं राज्य-नगर-गृह-वैभववर्धनाय पितृ-प्रदत्तवर्धमान-नामधारक श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महलों के भीतर पलने में, वर्धमान थे झूल रहे।
संजय विजय नाम के मुनिवर, शंका में थे कूल रहे॥
उसी मार्ग से गुजरे मुनिवर, दर्शन से समाधान हुआ।
नाम रखा 'सन्मति' बालक का, जगति में सम्मान हुआ॥3॥

ॐ ह्रीं शैशव-काले संजय-विजय-मुनीद्वयो शंका-समाधाने सन्मति-नाम-उद्घोषिता श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधित होकर गज गलियों में, मचा रहा था वह उत्पात।
गिरते पड़ते प्रजाजनों में, भयकारी था अति संताप॥
वर्धमान घर बाहर आए, गज को तत्क्षण शांत किया।
कुंजर ने वन्दन जब कीना, 'अतिवीर' जन नाम दिया॥4॥

ॐ ह्रीं नगरमध्ये गजोपद्रवशान्तकरणसमर्थाय नगरवासिन्ये श्री अतिवीर-नाम-प्रदत्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाभयंकर नागराज का, रूपधरा संगम आया।
वर्धमान की करूँ परीक्षा, रौद्र रूप था दिखलाया॥
फण ऊपर क्रीड़ा करते वे, नाग देव का मान हरा।
'महावीर' शुभ नाम पुकारा, चरणों का बहुमान करा॥5॥

ॐ ह्रीं संगमदेव, बाल, क्रीड़ा, समये शक्ति, परीक्षा, काले भय-विजिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु के सम्मुख आते ही कई, मनोकामना पूर्ण हुए।
धन भूमि सुत पद यश पावे, बाधाएँ कई चूर्ण हुए॥
'मंशापूर्ण महावीर' शुभ, नाम धरा जयकार किया।
'जीवन आशा' फलीभूत हो, सेवा कर उद्धार किया॥6॥

ॐ ह्रीं धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष-चतुः पुरुषार्थफल-प्राप्तिकारकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

वर्धमान अतिवीर वीर जिन, महावीर शुभ नाम कहो।
सद्बुद्धि सन्मार्ग प्रदाता, सन्मति का गुणगान अहो॥
राग-द्वेष मद लोभ मोह सब, नामोच्चारण दूर करें।
अर्घ समर्पित मंशापूरण, धर्मभाव भरपूर भरे॥7॥

ॐ ह्रीं पंचनामधारी-मंशापूर्ण-महावीर-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम वलय-दीक्षाराधना

(पंचम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

यौवन वैभव सुन्दरता पा, नहीं राग में मस्त हुए।
पूर्व जन्म की स्मृति पाकर, क्षण भर में सन्यस्त हुए॥
लौकान्तिक देवों ने आकर, वैराग्य भाव को पुष्ट किए।
महावीर प्रभु योगधार कर, मन ही मन संतुष्ट हुए॥1॥

ॐ ह्रीं जाति-स्मरण-कृत-वैराग्यप्रगटोत्सवप्राप्त-श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उगता सूरज झिलमिल झिलमिल, चमक दिखाता पानी में।
वैसे वैभव धन पद पाकर, इठलाता क्यूं जवानी में॥
जो पाया वह जाएगा यह, सत्य सदा शाश्वत मानो।
उपयोगी बन योगी बनकर, निज आतम को पहचानो॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हंमय-जीवन-प्राप्तये श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यौवन की अरुँणाभ लिये प्रभु, युवराज पद पाया है।
सुन्दर वर श्री वर्धमान है, सबका मन ललचाया है॥

शादी का बन्धन दुखकर है, मन ही मन में जान लिया।
बाल ब्रह्मचारी रहना ही, मन ही मन में ठान लिया॥3॥

ॐ ह्रीं अखण्डबालब्रह्मचारीपदधारकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रिश्ते नाते वैभव सत्ता, जीते जी की माया है।
आयु का क्रम पूरा होते, विनशे क्षण में काया है॥
माया छाया इस आतम को, भव भव में भटकाते हैं।
संयम धर सत्कृत्य करे हम, जीवन धन्य बनाते हैं॥4॥

ऊँ ह्री संसारसंतति-विनाशनाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव इन्द्र वैराग्य समय पर, प्रभु के सम्मुख आया है।
मैं दीक्षा वन ले चलता हूँ, यही भाव दर्शाया है॥
संयम की महिमा अति न्यारी, देव इन्द्र भी तरस गया।
शिविका ले संयम अधिकारी, पुण्य नरों पर बरस गया॥5॥

ॐ ह्रीं वैराग्यकाले-दीक्षावन-संन्यासावसरे वैराग्यभावनाप्रवणाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्र तजा आभूषण तजकर, पंच मुट्ठी कच लोच किया।
सिद्धों को वे नमस्कार कर, वेश दिगम्बर बोध लिया॥
यथाजात मुद्रा में रहकर, यथाख्यात चारित्र वरा।
परम पूज्य जग श्रेष्ठ धर्म पा, निज आतम पवित्र करा॥6॥

ॐ ह्रीं सर्वसावद्यविरतयथाजातमुद्राधारणाय मंगसिरवदी-दशमी-तपोमंगल-मंडिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच महाव्रत धारण करके, पंचेन्द्रिय निरोध करें।
सप्त गुणों का पालन करते, षट् आवश्यक बोध धरें॥
मूलगुणों से भूषित होकर, निज आतम श्रृंगार किया।
महावीर की मौन साधना, जगति का उद्धार किया॥7॥

ॐ ह्रीं मूलगुणधारणसमर्थाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जंगल जंगल ग्राम नगर जा, कुछ कुछ दिन का वास किया।
गृहस्थ धर्म की शिक्षा देने, चर्या की उपवास किया।।
चन्दन का बन्धन भी टूटा, महामुनि आहार किया।
नारी शक्ति को जागृत कर, भिक्षा ले उद्धार किया।।8।।

ॐ ह्रीं गृहस्थधर्मप्रतिपादकाय सर्वजीवउद्धारकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बारह वर्षों तक तप करके, आत्मान्वेषण करते हैं।
महामुनि श्री महावीर जी, ध्यान मग्न ही रहते हैं।।
मैं एकाकी मेरा कुछ ना, मैं मेरा कर्त्ता धर्त्ता।
जैसा कर्म यहाँ पर करता, वैसा फल उसका मिलता।।9।।

ॐ ह्रीं मुनिधर्मप्रतिपादकाय निजात्म भावनाप्रवणाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्यान धुरन्धर महावीर ने, ध्यान लगाया पद्मासन।
तभी रुद्र क्रोधित हो करके, कष्ट दिया निज मन भावन।।
महामना महावीर प्रभु को, विचलित ना वह कर पाया।
चरणों में झुक वन्दन करके, करनी पर वह पछताया।।10।।

ॐ ह्रीं अतिमुक्तक-रुद्र-कृतोपसर्ग-विजिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दीर्घ साधना कर्म निर्जरा, धर्म ध्यान से नित साधें।
तन मन की इच्छा ज्वाला को, शुक्ल ध्यान जल से नाशें।।
महावीर की वीतरागता, निर्मल-निच्छल-मनहारी।
पूर्णअर्घ चरणों मे अर्पित, वर्धमान दीक्षाधारी।।11।।

ॐ ह्रीं दिगम्बर-दीक्षा-साधनावसरे श्री-मंशापूर्ण-महावीर-तीर्थंकराय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम वलय-ज्ञानाराधना

(षष्ठम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चार ज्ञान के धारी वीरा, ऋद्धि तिरेसठ को पाए।
निज चैतन्य गुणों में रमते, स्वयं स्वयंभू कहलाए।।
वर्धमान बन निज स्वरूप में, वर्धमान बढ़ते जाए।
ऋजुकुला के तट पर आकर, केवलज्ञान के दीप जलाए।।1।।

ॐ ह्रीं ऋजुकूलानदीतटे बैसाखसुदी-दशमी-केवलज्ञान-मंडिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरणी कर्म विनाशे, महावीर ने धर कर ध्यान।
मति श्रुत अवधि ज्ञान तजा, और तजा मनपर्यय सुज्ञान।।
सीमातीत ज्ञान को पाकर, कहलाए सर्वज्ञ महा।
चरण कमल में अर्घ चढ़ाऊँ, बनने को आत्मज्ञ यहाँ।।2।।

ॐ ह्रीं ज्ञानावरणकर्मविनाशकाय अनन्तज्ञानगुणप्रगटिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा निद्रा-निद्रा प्रचला, प्रचला-प्रचला कर्म कहा।
बड़बोले कई काम करे, वह स्त्यानगृद्धि है कर्म महा।।
चक्षु अचक्षु अवधि केवल, दर्शनावरण नशाया है।
महावीर प्रभु आत्म दर्श कर, अनन्त दर्शन पाया है।।3।।

ॐ ह्रीं दर्शनावरणकर्म-रहिताय अनन्त-दर्शन-गुण-विलसिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन में बाधक है, कर्म मोहनीय विकट रहा।
यम नियम ना व्रत को लेवें, चारित्र मोहनीय निकट रहा।।
पूर्व जन्म के संस्कार से, सम्यग्दर्शन साथ रहे।
यथाख्यात चारित्र को पाकर, महावीर जन नाथ कहें।।4।।

ॐ ह्रीं मोहनीयकर्मरहिताय अनन्तसुखगुणधारकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाधा डाले सत्यकार्यों में, अन्तराय दुखकारी है।
श्रेष्ठ कार्य में विघ्न पड़े तो, लगता दुख अति भारी है॥
दान लाभ या भोगोपभोग, वीर्य नाम का कर्म बली।
महावीर प्रभु इन्हें नाशकर, पूज्य बने हैं कर्म दली॥5॥

ॐ ह्रीं अन्तरायकर्म-विनाशनाय अनन्तवीर्यगुणप्रगटिताय श्रीमंशापूर्णमहावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर का अतिशय अद्‌भुत, प्रगटित जब हो केवल ज्ञान।
कुशल क्षेम हो जाता क्षण में, सौ योजन तक का परिमान॥
मन वच तन का कई दूषण तो, सहज भाव से कम होता।
समवशरण के अन्दर जाकर, मन समकित पावन होता॥6॥

ॐ ह्रीं सर्व-जीव-कुशल-मंगल-करणाय शत-योजन-सुभिक्ष-ज्ञानातिशय-समकित-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरती से प्रभु पाँच हजारा, ऊपर चलते गगन गमन।
देव इन्द्र हर्षित होकर के, वन्दन करते प्रभु चरण॥
चरण कमल तल कमल बिछाते, पग धरते प्रभुवर जिस ओर।
सुन्दर मनहर दृश्य सभी लख, श्रद्धा से नत भाव विभोर॥7॥

ॐ ह्रीं प्रशस्तविहायोगति-प्राप्त-गमन-गमनत्व-केवलज्ञानातिशय-गुणमण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में पद्‌मासन या, खड़्गासन में प्रभु रहते।
चारों दिश में मुख अम्बुज के, सर्व प्राणी दर्शन करते॥
धन्य धन्य वे भाग्य सराहें, जिनदर्शन सम्मुख पाकर।
दिव्य रूप लख दिव्य भाव पा, आतम हित करते आकर॥8॥

ॐ ह्रीं सर्वजीवाकर्षकचतुर्मुख-रूप-दर्शनकेवलज्ञानातिशय-गुणमण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करुणा की धारा बहती है, जिनवर के तन से हर क्षण।
अभयदान पाकर हर प्राणी, नत मस्तक है प्रभु चरण॥

भावदया का हृदय जगाकर, तीर्थंकर विहार करें।
सर्वरोग दुख शोक मिटाकर, अतिशय मय उद्धार करें॥9॥

ॐ ह्रीं दयार्द्र-चित्त-गुण-प्रस्फुटिताय सर्व-जीव-वधावरोधकाय-केवलज्ञाना-तिशयगुणपरिपूरिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ज्ञान की ज्योति प्रगटी, तिमिर हटा उपसर्गों का।
मिथ्या दृष्टि क्रूर जीव भी, मार्ग चुने अपवर्गों का॥
अतिशय वीर प्रभु का प्रगटा, केवलज्ञान प्रगट होते।
प्रभु चरणों की पूजा कर लो, निर्मल भाव निकट होके॥10॥

ॐ ह्रीं सर्वोपसर्गनिवारकाय उपसर्गाभावकेवलज्ञानातिशयगुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमौदारिक देह बनी तब, अन्नाहार न लेते हैं।
कवलाहार रहित होकर वे, कर्मायु से जीते हैं॥
चर्या की मर्यादा ने यह, अतिशय दिव्य प्रदान किया।
महावीर की पूजा करके, जीवन का कल्याण हुआ॥11॥

ॐ ह्रीं अशनशुद्धिगुणवर्धनाय कबलाहाराभावरूपाय केवलज्ञानातिशय-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानावरण करम के छँटते, भीतर की प्रज्ञा जागी।
सर्व विद्या के ईश बने प्रभु, सर्व अविद्या है भागी॥
केवलज्ञानी जिनवर का यह, अतिशय दिव्य महान हुआ।
गौतम स्वामी चरणों में आ, गणधर-सा विद्वान हुआ॥12॥

ॐ ह्रीं अविद्या-विध्वंसकाय सर्वविद्येश्वरताकेवलज्ञानातिशयगुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन का केश नहीं नख बढ़ता, स्थिर वर्षों तक रहता।
श्वेत श्याम यह दोनों वस्तु, अन्तिम धरती पर रहता॥
केवलज्ञानी का यह अतिशय, स्थिरता को दर्शाता।
प्रभुवर की पूजा जो करता, स्थिर होकर हर्षाता॥13॥

ॐ ह्रीं स्थिर-बल-बुद्धि-प्रदायकाय नख-केश-वृद्धि-रहित-केवलज्ञानातिशय-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशाओं का हुआ खात्मा, नासा दृष्टि धार लिया।
पलक झपकना बन्द हुआ प्रभु, अपना तो उद्धार किया।
न आशा हो जीवन में प्रभु, तेरी ज्योति पाना है।
अतिशय-धारी की पूजा कर, सारे कर्म नशाना है।।14।।

ॐ ह्रीं अनिमेष-गुण-प्रगटाय पलक-स्पन्द-रहित-केवलज्ञानातिशय-गुण-विभूषिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्य चन्द्र से ज्यादा जिनवर का, जगति में तेज प्रकाश।
छाया माया रहित हुए प्रभु, चार घातियाँ कर्म विनाश।।
तेरी छत्र छाया में प्रभु, निज आतम उद्धार करूँ।
चरणों में शुभ द्रव्य चढ़ाकर, शुद्ध भाव विस्तार करूँ।।15।।

ॐ ह्रीं भगवत्छत्र-छाया-प्राप्तकाय छाया-रहित-केवलज्ञानातिशय-गुण-मण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दश अतिशय को पाय कर, मौन रहे जिन नाथ।
नरदेवा विस्मित रहे, कारण ना हो ज्ञात।।
बीते दिन छयासठ यहाँ, गौतम स्वामी आए।
दीक्षा धारण कर लिया, दिव्य ध्वनि प्रकटाय।।16।।

ॐ ह्रीं श्रावण-कृष्ण-प्रतिपदायां दिव्यध्वनिप्रस्फुटिताय श्रीमंशापूर्णमहावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि से पावन वाणी, सात शतक भाषा खिरती।
भाष अठारह महारूप कह, जन मन तिमिर सदा हरती।।
केवलज्ञानी महावीर की, वाणी जन कल्याणी है।
गणधर द्वारा आगम में आ, होती माँ जिनवाणी है।।17।।

ॐ ह्रीं द्वादशांगरूपसर्वभाषात्मकदिव्यध्वनि-केवलज्ञानातिशय-गुणप्रगटाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर की महिमा न्यारी, कदम पड़े, जिस धरती पर।
जन्म-जात शत्रु हो प्राणी, धरे मित्रता जगति पर।।

अतिशय देवों द्वारा होता, मन की कलियाँ खिल जाती।
अर्घ चढ़ाकर चरण तुम्हारे, मन की खुशियाँ मिल जाती॥18॥

ॐ ह्रीं सर्वशत्रुभावनिवारकाय सर्वजनमैत्रीभावातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वच्छ गगन हो चंदोवा-सा, मस्तक ऊपर शोभित है।
यश की चादर ताने देवा, भक्ति भाव से मोदित है॥
तीर्थंकर पद की निर्मलता, स्वच्छ गगन है दर्शाती।
प्रतिक्षण प्रभु की वन्दना करके, धर्म भाव को विकसाती॥19॥

ॐ ह्रीं सर्वदिशयशविस्तारकाय निर्मलव्योमातिशयगुणमण्डिताय श्रीमंशापूर्ण-महावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर जिस मारग से गुजरे, षट् ऋतु के फल-फूल खिलें।
सुखे मुरझाए तरुवर भी, हरी भरी अनुकूल मिले॥
महावीर की महिमा भारी, जग को विस्मित करती है।
अतिशय लखकर भव्य जीव के, मन में भक्ति जगति है॥20॥

ॐ ह्रीं सर्वजन-मनाकांक्षा-परिपूरिताय षट्ऋतु-फल-पुष्पातिशय-गुणमण्डिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट दिशाएँ निर्मलता पा, प्रभु महिमा बतलाती हैं।
निर्मलता ही दशा बदलती, मन शक्ति प्रगटाती है॥
देवों द्वारा अतिशय प्यारा, महावीर ने पाया है।
सुखमय वातावरण को पाकर, धार्मिक जन हर्षाया है॥21॥

ॐ ह्रीं अष्टदिशामंगलाय निर्मलदिशा-देवोपुनीतातिशयाय श्रीमंशापूर्ण-महावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य जीव के पुण्योदय से, तीर्थंकर विहार करें।
देव इन्द्र भक्ति दर्शाने, भू-दर्पण निर्माण करें॥
इक योजन तक चमचम चमचम, धरती दर्पण-वत् चमकी।
महावीर के समवशरण की, महिमा सारे जग महकी॥22॥

ॐ ह्रीं सर्वकंटकनिवारणाय योजनप्रमाण-दर्पणवत्-भूमिशोभिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के श्री विहार में, स्वर्ण कमल रचना रचते।
देव सदा भक्तिमय होकर, प्रभु चरणों में नत रहते॥
जिनवर अंगुल चार ऊर्ध्व रह, कदम कदम बढ़ते जाते।
प्रमुदित नर देवा सब चलते, नाच नाच चित उमगाते॥23॥

ॐ ह्रीं नरकतिर्यञ्चगतिभ्रमणनिवारणसमर्थाय चरण-कमल-तले-स्वर्ण-कमल रचनातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु विहार का उत्सव भारी, जय जय जय का नाद हुआ।
भक्ति भाव से आराधन कर, मन में अति आह्लाद हुआ॥
मुनि आर्यिका नर अरुँ नारी, देव पशु सब हर्षित हैं।
जय जय-कार प्रभु का होता, शत इन्द्रों से वन्दित हैं॥24॥

ॐ ह्रीं दिव्य-जयनाद-मण्डिताय आह्लादकरणाय देवोपुनीतातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्द-मन्द वायु का चलना, आनन्दित तन को करता।
खेद कष्ट न रहता उस क्षण, समवशरण जब है लगता॥
अतिशय देवों द्वारा प्यारा, भू अम्बर पर दिखता है।
महावीर के चरण कमल में, अर्घ समर्पित करता है॥25॥

ॐ ह्रीं श्रम-खेद-कष्टहराय परमानन्दसमर्थकाय मन्दपवनातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर के गगन गमन में, गन्धोदक वृष्टि होती।
रोग शोक भय बाधा विनशे, अन्तस में तृप्ति होती॥
मेघ कुमार के देव सदा ही, प्रभु की सेवा यूँ करते।
महावीर का अतिशय अनुपम, अवसर को हम क्यूँ तजते॥26॥

ॐ ह्रीं सर्वरोगशोक-भय-बाधानिवारकाय दिव्य-गन्धोदकवृष्टि-देवोपुनीतातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कंकड़ पत्थर धूलि कंटक, पथ की बाधा कहलाती।
तन मन को पीड़ा देकर के, अवरोधक है बन जाती॥
तीर्थंकर का अतिशय सुन्दर, पवनपति क्षण में आए।
स्वच्छ मार्ग क्षणभर में करके, प्रभु चरणों में चित लाए॥27॥

ॐ ह्रीं सर्ववातादि-रोगनिवारकाय वायुकुमारदेवोपुनीतातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में जिनवर सम्मुख, धर्म चक्र आगे रहता।
यक्ष देव मस्तक पर लेकर, हर्षित हो आगे बढ़ता॥
महावीर के धर्म तीर्थ को, सारे जग में फैलाता।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजा कर लूँ, पाने अक्षय सुख साता॥28॥

ॐ ह्रीं सद्धर्मवर्धनाय यक्षेन्द्रमस्तकोपरी-धर्मचक्रप्रवर्तनाय देवोपुनीतातिशय-युक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेज पुँज-सी कान्ति मनहर, महावीर की छटा महान।
गुणवत्ता आकर्षित करती, चाहे मिथ्या दृष्टि महान्॥
दर्शन का सुख अद्भुत अनुपम, आप ओर ही खींच रहा।
हर्षमयी सृष्टि को करके, धर्म नीर से सींच रहा॥29॥

ॐ ह्रीं स्वाभाविकहर्षातिरेकातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्रायः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंगल जिनवर मंगलकारी, सर्व अमंगल हरते हैं।
प्रतिहार्य भी आठ सजे हैं, मंगल द्रव्य भी रखते हैं॥
प्रतिहार्य जिनवर की शोभा, वसुमंगल शुभ कारक हैं।
मंशापूरण महावीर की, भक्ति दुक्ख निवारक है॥30॥

ॐ ह्रीं सर्वमंगलपरिपूरिताय वसुमंगलद्रव्यसमन्विताय देवोपुनीतातिशयाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पादप सुन्दर हरा भरा है, उन्नत छवि दर्शाता है।
जिनवर उसके नीचे तिष्ठे, शोक सभी हर जाता है॥
प्रातिहार्य जिनवर का पहला, नाम अशोक कहाता है।
भक्ति ध्यान कर पूजा कर लो, धर्म भाव बढ़ जाता है॥31॥

ॐ ह्रीं सर्वशोकनिवारणाय अशोकवृक्षप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मासन सिद्धि का आसन, महावीर ने धार लिया।
कर्म नाश कैवल्य प्राप्त कर, आतम का शृंगार किया॥
रत्नमयी सुन्दर सिंहासन, देवों द्वारा निर्मित है।
अंगुल चार विराजे ऊपर, वन्दन अर्घ समर्पित है॥32॥

ॐ ह्रीं पूज्यपदप्रदायक-सिंहासनप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नील गगन-सा छत्र मनोहर, त्रयरत्नों से शोभित है।
पाप ताप संताप निवारक, तीन लोक मनमोदित है॥
त्रिभुवन का आकार लिए वह, त्रिभुवन स्वामी दर्शाता।
तीन लोक के सर्व जीव को, छत्र छाया दे हर्षाता॥33॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकपदविराजिताय छत्रत्रयप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौंसठ ऋद्धि के स्वामी प्रभु, नम्रभाव से भरे हुए।
नम्रीभूत सब देव प्रभु पर, ढोरे चँवर सब खड़े हुए॥
झुकते उठते निकट सदा ही, विनय भाव प्रगटाते हैं।
जितना झुकते उतना उठते, सम्यग्ज्ञान सिखाते हैं॥34॥

ॐ ह्रीं सर्वजन-विनय-शिक्षा-प्रदायकाय चतुषष्ठिचामरप्रातिहार्य-संयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य पुष्प की वृष्टि करते, देव अंजुलि भर भरके।
भव्य सुगन्धित वायु बहती, परस प्रभु का तन करके॥
गुण गरिमामय पुष्प खिलाऊँ, अन्तर्मन की भक्ति से।
समवशरण की पूजा कर लूँ, हृदय कमल की शक्ति से॥35॥

ॐ ह्रीं हृदयकमलविकासनहेतवे पुष्पवृष्टि-प्रतिहार्य-संयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोहिनूर फीका पड़ जाता, जिनकी चमक चाँदनी से।
सात भवों का ज्ञान कराता, भामण्डल सब सादगी से॥
क्या थे हम क्या होवेंगे यह दर्पण सम झलकता है।
भामण्डल का आभामण्डल, प्रभु पृष्ठ दमकता है॥36॥

ॐ ह्रीं आभामण्डलविस्तारकाय भामण्डलप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर के श्री विहार में, दुन्दुभि यश का गान करे।
दशों दिशा में प्रमुदित होकर, तेरा ही सम्मान करे॥
गगन मार्ग में जैनधर्म की, त्याग पताका फहरावे।
आओ प्रभु का दर्शन कर लो, वीतराग पथ अपनावे॥37॥

ॐ ह्रीं जिनधर्मप्रभावनायैः दुन्दुभिप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व जीव की भाषा में ढल, दिव्यध्वनि खिर जाती है।
मोक्ष महल का मार्ग बताकर, निज कल्याण कराती है॥
समवशरण में भव्य जीव को, हितकर सत्संदेश दिया।
निज प्रभुता को जानो भव्यों, करुणामय उपदेश दिया॥38॥

ॐ ह्रीं सर्वप्राणी-कल्याणकारक-दिव्यध्वनिप्रातिहार्यसंयुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

केवलज्ञानी अतिशय धारी, चार घातियाँ नाश किया।
प्रातिहार्य आठों सज्जित है, समवशरण प्रवास किया॥
विपुलाचल वैभार गिरी या, पुण्यवान जग जीव जहाँ।
दर्शन पूजन व्रत उपदेशा, पाकर तिरते जीव यहाँ॥39॥

ॐ ह्रीं समवशरण विराजित द्वादश सभा मध्ये चतुर्मुखी जिन विराजित श्री मंशापूर्ण महावीर जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम वलय-देशनाराधना

(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

गौतम स्वामी चरणों में आ, निज अभिमान मिटाया है।
निर्मल परिणामी हो करके, जिन दीक्षा को पाया है॥
गणधर पद आसीन हुए, तब दिव्य ध्वनि खिर जाती है।
गुरु पूर्णिमा वीर का शासन, महत्वपूर्ण कहलाती है ॥1॥

ॐ ह्रीं गौतमस्वामी-प्रमुखगणधरपदस्थिताय दिव्यध्वनिप्रदर्शकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सात तत्व को जानकर, श्रद्धा मन में धार।
सम्यग्दर्शन प्रगट कर, कर लो निज उद्धार॥2॥

ॐ ह्रीं सम्यकदर्शनप्राप्तये सप्ततत्त्वोपदेशकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छः द्रव्यों की शक्ति से, चलता है ब्रह्माण्ड।
अपनी अपनी शक्ति में, सब ही है प्रकाण्ड॥3॥

ॐ ह्रीं षट्द्रव्योपदेशकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भावना से भाव का, होता है संयोग।
भावें बारह भावना, जागृत होवे योग॥4॥

ॐ ह्रीं वैराग्यभावप्रकाशकाय द्वादशभावनायै: श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म अहिंसा सत्य का, करुणामयी सन्देश।
तज चोरी अब्रह्म को, परिग्रह का ना लेश॥5॥

ॐ ह्रीं अहिंसा-सत्य-अचौर्य-ब्रह्मचर्या-परिग्रहव्रतप्रतिपादकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावक के षट् कर्म का, पालन करना धर्म।
जो कर्त्तव्य सदा करे, पावे निज का मर्म॥6॥

ॐ ह्रीं श्रावकोचित-षट्कर्त्तव्योपदेशकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अणुव्रती या महाव्रती, बनना ही उद्देश्य।
महावीर का श्रेष्ठतम, एकमात्र उपदेश।।7।।

ॐ ह्रीं अणुव्रत-महाव्रत-धारणशक्तिसमर्थाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्त रौद्र अरुँ धर्म शुक्ल, ध्यान चार प्रकार।
दो धारो दो छोड़ दो, करो आत्म उद्धार।।8।।

ॐ ह्रीं आर्त्तरौद्रध्यानविवर्जिताय धर्म-शुक्ल-ध्यान-प्राप्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिमा से प्रतिभा जगे, श्रावकोत्तम पुरुषार्थ।
ग्यारह प्रतिमा धारकर, साधो निज परमार्थ।।9।।

ॐ ह्रीं आत्म-प्रतिभा-जागृताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शनमय अरुँ ज्ञान मय, जीवो का उपयोग।
चार आठ के भेद से, चेतन का संयोग।।10।।

ॐ ह्रीं आत्मदर्शनज्ञानोपयोगाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सैनी असैनी जीव से, भरा हुआ संसार।
इस बंधन को तोड़कर, खोलो मुक्ति द्वार।।11।।

ॐ ह्रीं संज्ञी-असंज्ञी-पर्यायरहिताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण स्थान औ मार्गणा, चोदह जीव प्रकार।
संसारी साकार हैं, सिद्ध जिन निराकार।।12।।

ॐ ह्रीं गुणस्थानमार्गणा जीव-स्वरूपकाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ कर्म के योग से, जीव भ्रमें संसार।
अष्ट कर्म को नष्ट कर, आत्म शुद्ध आधार।।13।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्म-विनाशनाय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

अल्पज्ञान लब्ध्यक्षरा, पूरण केवल ज्ञान।
महावीर की देशना, करें आत्म कल्याण॥14॥

ॐ ह्रीं दिव्य, देशना, प्रदायकाय श्री, मंशापूर्ण, महावीर, तीर्थंकराय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वलय-मोक्षाराधना

(अष्टम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

तीस वर्ष तक भव्य जीव के, पुण्योदय से भ्रमण करें।
धर्म दान संयम प्रदान कर, जीवों के भव भ्रमण हरें॥
श्रेणिक मेढक चन्दन बाला, का प्रभु ने उद्धार किया।
अन्त काल में योग निरोधकर, स्थिरता स्वीकार किया॥1॥

ॐ ह्रीं त्रिंशत्वर्षपर्यन्तसमवशरणविहारधर्मसंयमप्रदायक श्रीमंशापूर्णमहावीर जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन की शुचि चादर में प्रभु, व्यसनों का बहुदाग लगा।
तव दर्शन की शुभ्र वारि से, तन मन का कालुष्य मिटा॥
भावों का शुभ परिवर्तन ही, सर्व विघ्न का नाश करे।
मंशापूरण महावीर जी, मम दुर्गुण का ह्रास करें॥2॥

ॐ ह्रीं व्यसन-मुक्ति-जीवनार्थे पवित्रभावजागृताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्धकारमय जीवन सारा, तव दर्शन से ज्योति जली।
कर्म शृंखला अशुभ पाप की, धीरे धीरे सारी टली॥
भेदज्ञान संयम श्रद्धा से, पुण्य कर्म बढ़ जाता है।
शुद्ध शुक्ल जब ध्यान मग्न हो, पुण्य पाप नश जाता है॥3॥

ॐ ह्रीं सर्व-पुण्य-पाप-कर्म-रहिताय योग-निरोधत्रयोदश्यां तिथौ श्रीमंशापूर्ण महावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रिय भोग सदा चाहा प्रभु, इन्द्र समा ना भक्ति की।
परस गन्ध रस शब्द में फँसकर, तन सुख की आसक्ति की॥

आज आपका रूप लखा प्रभु, निज स्वरूप का भान हुआ।
मंशापूरण महावीर की, पूजा से कल्याण हुआ।।4।।

ॐ ह्रीं इन्द्रिय-सुख-भोग-विसर्जिताय रूपातीतध्यानस्थितिताय रूप-चतुर्दश्यां श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्ल ध्यान में स्थिर होकर, कर्म अघाति विनशावें।
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति में रम, निराकारता प्रगटावें।।
कार्तिक कृष्णा के अन्तिम क्षण, पावापुर से गए निर्वाण।
अर्घ चढ़ाऊँ मोद मनाऊँ, मम आतम का हो कल्याण।।5।।

ॐ ह्रीं कार्तिकवदी अमावस्या मोक्षमंगल-मंडिताय पावापुर-पद्म सरोवरमध्ये सर्व-कर्म-विमुक्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर का शासन अनुपम, निराबाध चलता आया।
गौतम जम्बू सुधर्मस्वामी, अनुबद्ध केवली पद पाया।।
फिर मुनिवर की चली श्रृंखला, वीरांगज तक बनी रहे।
भक्ति भाव से अर्घ चढ़ाऊँ, मम श्रद्धा यूँ जमी रहे।।6।।

ॐ ह्रीं महावीर-निर्वाण-पश्चात्-गौतम-जम्बु-सुधर्मास्वामी-अनुबद्ध-केवली-भद्रबाहु श्रुत-केवली-तत्पश्चात्-वीरागंज-पर्यंत-सर्व-मुनिवरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू भीतर देवों द्वारा ही, पूजा सेवा नित होती।
वर्षों तक ना पुण्योदय था, दर्शन फिर कैसे होती।।
सात नवम्बर भू से प्रगटे, मंशापूरण श्री भगवान।
अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति गाऊँ, वर्धमान महावीर महान।।7।।

ॐ ह्रीं मंगसिर सप्तयां तिथौ भूगर्भ-प्रगटिताय दिव्य-दर्शनाय श्रीमंशापूर्ण-महावीरजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

भक्ति में तन्मय हो करके, चिन्मय मुरत पाया है।
सिद्ध निरामय निर्मल निश्चल, अविनाशी सुख पाया है।।

हो विरक्त जग उलझन से प्रभु, तेरे दर पर आऊँगा।
आत्म ओज का उद्‌भव होवे, महावीर गुण गाऊँगा।।8।।

ॐ ह्रीं अविनाशी-सिद्ध-सुख-प्राप्ताय श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्णार्घ्य

सुख राशि गुणदाता जिनवर, दया सिन्धू महावीर प्रभो।
विघ्न हरण हे मंशापूरण, वर्धमान अतिवीर विभो।।
परमेश्वर हो, प्रतिपालक हो, जिन शासन के नायक हो।।
महा-अर्घ्य चरणों मे अर्पित, सौरभ सागर ज्ञायक हो।।9।।

ॐ ह्रीं जिनशासन नायक श्री मंशापूर्ण महावीर तीर्थंकराय नमः सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रीं श्रीं मंशापूर्ण महावीराय नमः

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं मंशापूर्ण-महावीर-जिनेन्द्राय-सुख सौभाग्यं कुरु कुरु नमः।

दोहा

महावीर जिनराज का, अद्‌भुत है दरबार।
भक्ति से पूजा करूँ, नमन करूँ शतबार।।

जयमाला

जय वीरा बन्दो महान, जय स्याद्‌वाद सूरज जहान।
जय कर्म विजेता आत्म धीर, जय निजानंद सब हरत पीर।।1।।

जय पंच नाम धारी कहाय, जय वर्धमान गुण गण बढ़ाय।
जय न्यहवन समय में श्वास लीन, जय वीर नाम सुरेन्द्र दीन।।2।।

दो मुनि ने देखा बाल रूप, फिर नाम रखा सन्मति अनूप।
गजराज उपद्रव करता आय, अतिवीर नाम जय करके पाय।।3।।

देवों ने बल का यश गाया, संगम तत्क्षण धरती आया।
खेले बालक जिस वृक्ष पास, विकराल धरा था रूप नाग।।4।।

भय से भागे सारे बालक, पर वर्धमान सबके पालक।
नागों पर मुष्ठी प्रहार किया, तत्क्षण संगम मनुहार किया।।5।।

तुम अद्भुत बलशाली महान, गुणशाली धरा महावीर नाम।
प्रभु नाम में शक्ति है अनन्त, जो जपता कटते कर्म बन्ध।।6।।

भई तीस वर्ष की उम्र आप, छोड़े जग झंझट राज पाठ।
तप बारह वर्ष महा कीना, सब घाति कर्म भगा दीना।।7।।

प्रभु समवशरण रचना महान, दर्शन पा भक्त करे प्रणाम।
दिन पर दिन छयासठ बीते, प्रभु वाणी बिन रीते रीते।।8।।

तब इन्द्रभूति गौतम आया, प्रभुदर्श किया चित उमगाया।
पहले ही दर्शन का प्रभाव, सब वस्त्र तजा पाया स्वभाव।।9।।

पाँच शतक थे शिष्य आय, केशलोंच करी दीक्षा सुपाय।
श्री महावीर वाणी थी खिरी, सब भव्य जनों पर है बिखरी।।10।।

चहुँ ओर धरम विस्तार हुआ, प्रभु सत्य अहिंसा प्रचार हुआ।
प्रभु मूरत गढ़ पूजा करते, निधत्त निकाचित क्षय करते।।11।।

धीरे धीरे बहुकाल गया, घट बढ़ता धर्म सँभाल लिया।
आतंकी ने मन्दिर तोड़ा, प्रभु ने भू से नाता जोड़ा।।12।।

वर्षों पर वर्षों बीत गए, प्रभु धरती के ही मीत हुए।
सात नवम्बर शुभ दिन आया, झाड़ली में प्रभु दर्श दिखाया।।13।।

भक्तों ने प्रभु दर्शन कीना, खुशियों से जयकारा कीना।
तभी भक्त गुरु सम्मुख आए, महावीर तस्वीर दिखाए।।14।।

सौरभ सागर ने रूप लखा, कुछ अतिशय ऐसा भाव जगा।
मंशापूरण जाप किया है, प्रतिमा का सानिध्य लिया है॥15॥

गुरु भक्तों ने साथ निभाया, प्रतिमा गाजियाबाद है लाया।
पुण्य उदय भक्तों का आया, गंगानगर में दर्श दिखाया॥16॥

प्रतिमा से आवरण हटाया, इन्द्रों ने बरसात कराया।
सन अठारह माह जुलाई, रथ यात्रा से करी विदायी॥17॥

धूम-धाम से चली सवारी, प्रभु विहार की शोभा न्यारी॥
गंगनहर के एक किनारे, मंशापूरण वीर पधारे॥18॥

दिव्य शान्त है मूरत तेरी, दर्शन से मिटती भव फेरी।
जो भी मन से ध्यान लगाता, मंशापूर्ण फल मिल जाता॥19॥

भक्ति भाव से ज्योति जलावे, सब संकट को दूर भगावे।
महावीर जयमाला गावे, सुख शान्ति समृद्धि पावे॥20॥

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धत्ता – **जय जय महावीरा भवदधि तीरा, गुण गंभीरा अतिवीरा।**
मम धर्म बढ़ावे जिनपद पावें, सौरभ सागर नत धीरा॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीमंशापूर्णमहावीरजिनेन्द्र पंचकल्याणक संयुक्त शिवपद-कर्त्ता-भव-जल-निधी सर्वविघ्नव्याधिहर्ता तव भक्ति प्रसादात् सर्व जीव कल्याणमस्तु दीर्घायुरस्तु शुभमस्तु सुकीर्तिरस्तु धन-धान्य समृद्धिरस्तु आरोग्यमस्तु सर्व जीव रोग शोक विनाशनं भवतु सम्यग्दर्शन ज्ञान-चारित्र-वृद्धिरस्तु सर्व-ऋिद्धि-सिद्धि-भवतु रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।

पृथ्वी में नीम के वृक्ष बहुत दिखाई देते हैं। पत्थरों से पृथ्वी भरी पड़ी है परन्तु चिन्तामणि दुर्लभ है कौओं की काँव-काँव सदा सुनायी पड़ती है परन्तु कोयल की कूक चैत्र में सुनाई पड़ती है इससे ऐसा प्रतीत होता है कि यह जगत् दुर्जनों से व्याप्त है। सज्जन तो पृथ्वी पर दो चार ही हैं।

श्री मंशापूर्ण महावीर चालीसा

अरिहंतों और सिद्धों को, सदा मैं मन से ध्याऊँ।
उपाध्याय आचार्यों को, भाव से शीश नवाऊँ॥
सर्व साधु वंदू सदा, जिनवाणी माँ साथ।
मंशा पूर्ण वीर जी, तुम्हीं हमारे नाथ॥

जय वीरा महावीरा स्वामी, तुम हो प्रभुवर केवल ज्ञानी।
माँ त्रिशला के उर में आए, अष्ट देवियाँ खुशी मनाए॥1॥
हीरे मोती बरसन लागे, सकल प्रजा के भाग थे जागे।
चैत्र शुक्ल त्रयोदश को जन्मे, सिद्धारथ हरषे बहु मन में॥2॥
जाति स्मरण वैराग्य जागा, तीस वर्ष में घर को त्यागा
संयम पथ पर कदम बढ़ाए, धन वैभव भी रोक ना पाए॥3॥
वैशाख शुक्ल दशमी दिन आया, केवलज्ञान का आनन्द पाया।
अष्ट कर्म का नाश किया था, कार्तिक मावस मोक्ष भया था॥4॥
पंचम काल महा दु:ख दाई, पर जो हो तेरी शरणाई।
उससे संकट दूर ही रहते, भूत प्रेत सब दूर हैं भगते॥5॥
हरियाणा इक प्रान्त है प्यारा, झज्जर निकट झाडली ग्रामा।
धरती की हो रही खुदाई, कस्सी जाकर के टकराई॥6॥
खोदत खोदत मूरत दिखाई, हैरानी और खुशियाँ छाई।
सात नवम्बर दिन पुण्यशाली, वीरा ने झोली भर डाली॥7॥
ग्रामीणों को लगे खिलौना, अर श्रावक को वीर सलोना।
चहुँ दिशि शोर मचा था भारी, भू से प्रकटे मंगलकारी॥8॥
ग्रामीणों को मूरत भाई, ना देने की रटत लगाई।
'गुरु सौरभ' ने चित्र निहारा, तभी बही अतिशय की धारा॥9॥
दर्शन को मन तरस रहा था, आ जाओ वीरा बोल रहा था॥
निसवासर वीरा को जपते, फिर भी गुरुवर जरा ना थकते॥10॥

गुरुवर की मेहनत रंग लाई, अर वीरा को खींच के लाई।
ज्ञान योगी गुरुदेव ने जाना, मंशा पूर्ण हैं भगवाना॥11॥
गुरु भक्तों ने रंग जमाया, वर्द्धमान वीरा को पाया।
29 मार्च का शुभ दिन आया, सहस्त्र कलश से न्हवन कराया॥12॥
दूर-दूर से भक्त हैं आए, वीर प्रभु का दर्शन पाए।
ये बारह सौ बरस पुरानी, महिमा इसकी सबने जानी॥13॥
मनहारी और है सुखकारी, ये वीरा हैं अतिशय कारी।
माखन ज्यों सिंदूर मिला है, ऐसा तेरा रूप खिला है॥14॥
प्रातिहार्य के मध्य विराजे, वीरा तो सूरज सम लागे।
रोग शोक भय सब भग जावे, जो श्रद्धा से शीश नवावे॥15॥
गुरु सौरभ जी भक्त तुम्हारे, मनोभाव से चरण पखारे।
दर दर की ठोकर हम खाए, आज प्रभु तेरे दर आए॥16॥
मेरा सोया भाग जगा दो, आत्म परमात्म से मिला दो।
हम संसारी मन चंचल है, पर जिनवर तू बड़ा सरल है॥17॥
वरद हस्त मम शीश पे धरना, खुशियों से झोली तू भरना।
शुद्ध भाव से जो जपता है, अन्तर का कोना खिलता है॥18॥
'आशा' ने प्रयास किया है, भक्ति भाव से भजन किया है।
सुख वैभव की वर्षा कर दो, मन में प्रेम का अमृत भर दो॥19॥
हृदय कमल पर आन विराजो, मुक्ति रमा से मिलन करा दो।
अतिशय अपना तुम दिखलाओ, वीरा हमको पार लगाओ॥20॥

पाठ करो चालीस दिन, दीपक पास जलाय।
चालीस बार अखंड कर, ले मंशा पूर्ण मनाय॥
ऋद्धि सिद्धि की निधि मिले, कमी रहे ना कोय।
रोग शोक सब दूर हो, जीवन मंगल होय॥

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ठें ऊँ मंशापूर्ण महावीर जिनेन्द्राय सुख-सौभाग्यं कुरु कुरु स्वाहा।

4. श्री नवग्रह जिनदेव विधान

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

4. श्री नवग्रह जिनदेव विधान

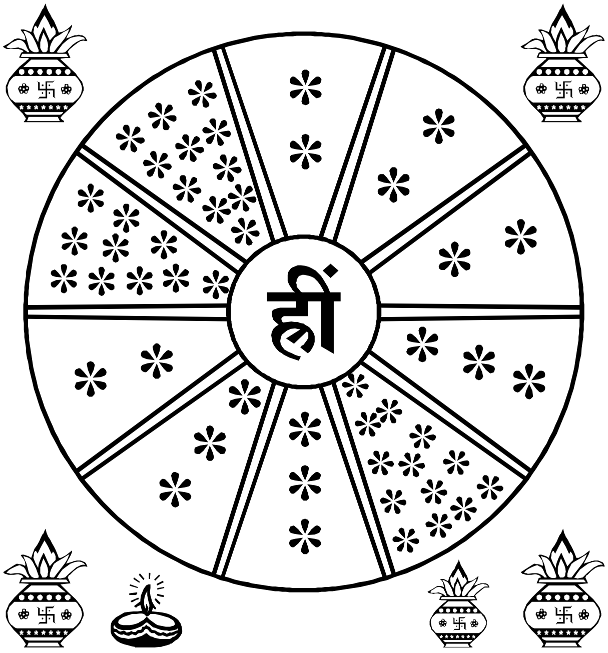

पूर्णार्घ्यं 10, महार्घ्यं 1 = कुल अर्घ्य 62

प्रथम वलय 3, द्वितीय वलय 3, तृतीय वलय 2, चतुर्थ वलय 10, पंचम वलय 11
षष्टम वलय 2, सप्तम वलय 2, अष्टम वलय 2, नवम वलय 3, दशम वलय 13

श्री नवग्रह जिनदेव व्रत विधि

व्रतारम्भ : स्वयं के जन्म वार–ग्रह पीड़ा वार या तद् जिनदेव जन्म कल्याणक तिथि

अवधि : 9–माह 9–वर्ष अथवा जितने वर्ष की ग्रह दशा हो। सप्ताह में करें तो प्रत्येक वार, माह में करें तो तिथि अनुसार।

व्रतपूजा : गृह निवारक जिनेन्द्र देव की पूजा–विधान।

जाप : पेज नं 163 पर देखें।

व्रत विधि : अभिषेक शांतिधारा करें या देखें, एकासन उपवास–चार रस त्याग या सात्विक तद्वर्ण खाद्य वस्तु त्याग।

श्री नवग्रह जिनदेव विधान

स्थापना

जय तीथङ्कर आत्म हितंकर, पद्म चन्द्र प्रभु जिनराज।
पुष्पदन्त जय वासुपूज्य जय, शान्तिनाथ जी जग सरताज॥
आदिनाथ जय मुनिसुव्रत जय, नेमि पारस ध्यान धरूँ।
आह्वानन स्थापन करके, गृह कर्म दोष अवसान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः अत्र मम सन्निहतो भव भव वषट् सन्निधकरणम्।

जल

सिद्धक्षेत्र की पावन भूमि, से निर्मल जल ले आउँ।
श्री जिनवर के चरण पूजकर, जन्मजरा मृत विनशाउँ॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

आत्म वृक्ष चंदन सम सुरभित, अष्टकर्म के नाग पले।
भक्ति मोर का दिव्य नाद सुन, आत्मवृक्ष को छोड़ चले॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः भव-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

श्वेत वर्ण मोती सम उज्ज्वल, अक्षय अक्षत लाए हैं।
सिद्धालय पा जाएँ भगवन, अक्षत चरण चढ़ाए हैं॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः अक्षय-पद-प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

मन उपवन की क्यारी से कुछ, भक्ति सुमन चुन लाया हूँ।
चरण कमल की सौरभ पाने, पुष्प चढ़ा हर्षाया हूँ॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः कामवाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

क्षुधा वेदिनी महाडाकिनी, सदा पाप करवाती है।
चरण कमल नैवेद्य चढ़ाऊँ, भव संताप मिटाती है॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

ना बाती ना घृत का दीपक, फिर भी त्रिभुवन उजियारा।
केवल ज्ञान की ज्योति अनुपम, दूर भगाती अंधियारा॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

धूपायन में धूप समर्पित, कर्म धुम्र मेटो स्वामी।
पाप ताप संताप मिटाओ, त्रिभुवन के अन्तर्यामी॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

फल की इच्छा सभी कार्य में, सब प्राणी को होती है।
पूजा का फल मोक्ष महाफल, यही भक्ति की ज्योति है॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः मोक्ष-फल-प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

जल गंधाक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाए हैं।
ग्रहकर्म दोष मेटो सारे प्रभु, चरणन अर्घ चढ़ाए हैं॥
आदि पदम चन्दा प्रभु स्वामी, वासुपूज्य शान्ति सुखदाय।
मुनिसुव्रत श्री नेमि पारस, पुष्पदंत पद शीश नवाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-चन्द्रप्रभु-वासुपूज्य-शांतिनाथ-आदिनाथ-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-पारसनाथ-नवग्रह-अरिष्टनिवारक नव-जिनेन्द्राय नमः अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **नवग्रहों के भवन में, अकृत्रिम जिनदेव।**
एक सो दश योजन बसें, नवग्रहों के देव॥

(मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

प्रथम वलय

(सूर्य ग्रह अरिष्ट निवारक श्री पद्मप्रभु अर्घ्यावली)

दोहा– **मेरु पर्वत परिक्रमा, देव लगाते नित्य।**
अढाई द्वीप के ज्योतिषी, देव पाँच हैं सत्य॥

(प्रथम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

आतम ध्यानी महा विरागी, पदम प्रभु जिनराज महान।
बंधन कुंजर देख सके ना, धारा मुनिव्रत कर्मन हान॥

जन्म राशि अक्षांश समय से, कर्म उदय आ कष्ट दिए।
सूर्य ग्रह के दोष सतावे, पदम प्रभु जप नष्ट किए॥1॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–पद्मप्रभुजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मान मिले ना सफल कार्य ना, जनक सदा दुख पाते हैं।
राज कृपा ना सूर्य दोष से, जीवन में पा पाते हैं॥
पदम प्रभु का जाप करूँ नित, जन्मदाता सम्मान करूँ।
सूर्य ग्रहों का दोष निवारे, सिद्ध प्रभु का ध्यान धरूँ॥2॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–पद्मप्रभुजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भरत चक्री भी प्रातः उठकर, महलों के छत पर जाता।
उगते सूरज में अकृत्रिम, जिन प्रतिमा दर्शन पाता॥
सूर्य ग्रहों का दोष टालने, पूर्वाभिमुख जाप करें।
जिन प्रतिमा प्रक्षालन वन्दन, करके सारे पाप हरें॥3॥

ॐ ह्रीं सूर्यग्रह–अरिष्टनिवारक सूर्यविमानस्थित–अकृत्रिम–सिद्ध–परमेष्ठी–प्रतिमा सह–श्री–पद्मप्रभुजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

अपनी शक्ति अपनी क्षमता, अपने कर्मों का भुगतान।
अपने द्वारा अर्जित है जो, अपने को ही हो फलवान॥
अपने को जाने समझे हम, अपनों से अपनापन हो।
पद्म प्रभु सा पद्म खिलाऊँ, आत्म सूर्य का दर्शन हो॥

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः सूर्यमहाग्रह–सर्व–अरिष्टग्रह–रोगकष्टनिवारणं कुमुलयक्ष–मनोवेगायक्षी–सेविताय श्री–पद्मप्रभुतीर्थंकराय नमःपूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय

(चन्द्र ग्रह अरिष्ट निवारक श्री चन्द्र प्रभु अर्घ्यावली)

दोहा– **चंद्र सूर्य की गतिविधि, जाने भूत भविष्य।**
महा निमित्तक ज्ञान है, अनुमानों का सत्य॥

(द्वितीय–वलय–मण्डलस्योपरि–पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

बादल छटता देख चंद्र ने, क्षणभंगुर जग को जाना।
लोकांतिक शिविका ले आये, दीक्षा वन ले मुनि बाना।।
चंद्र नाथ की चंद कृपा से, चंद्र दोष सब टल जाएँ।
चंद्रप्रभु अरिहंताणं जप, सर्व दोष मम गल जाएँ।।1।।

ॐ ह्रीं चन्द्रग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–चन्दप्रभुजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

मन अस्थिर भावुक हो जावे, माता कष्ट सदा पावे।
चंद्र ग्रहों के दोष मिटाने, चंद्रप्रभु को नित ध्यावे।।
श्वेत वर्ण के चंद्रप्रभु को, हृदय कमल मस्तक धारें।
अरिहंताणं मोती माला, चंद्र दोष झटपट टारे।।2।।

ॐ ह्रीं चन्द्रग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–चन्दप्रभुजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

चंद्र बिंब तो सिद्ध शिला का, चंद्राकार प्रतीक कहा।
अकृत्रिम प्रतिमा सिद्धों की, ध्यान लगा मन शांत महा।।
घटता बढ़ता जीवन का क्रम, मन स्थिरता न ह्रीं तजें।
रोग शोक भय भोग भगावे, चंद्र दोष भी शीघ्र टलें।।3।।

ॐ ह्रीं चन्द्रग्रह–अरिष्टनिवारक चन्द्रविमानस्थित–अकृत्रिम–सिद्ध–परमेष्ठी–प्रतिमा सह–श्री–चन्दप्रभुजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

ग्रह बाधा से डरे नहीं मन, कर्मोदय का भान रहे।
निर्मल मन से परमेष्ठी भज, अग्रज का सम्मान करें।।
स्त्री का अपमान करे ना, पर धन पर ना दृष्टि हो।
व्यसनों से मन बचा रहे और, चन्द्रप्रभु नित भक्ति हो।।

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः चन्द्रमहाग्रह सर्व–अरिष्टग्रह–रोगकष्ट निवारणं विजययक्ष–ज्वालामालिनीयक्षी–सेविताय श्री–चन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय

(मंगल दोष निवारक श्री वासुपूज्य भगवान अर्घ्यावली)

दोहा– **गणित फलित दो जानिए, ज्योतिष विद्या रूप।**
जन्म भाग्य पुरुषार्थ से, बने रंक या भूप।।
(तृतीय-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

वासुपूज्य जिन बाल ब्रह्म हैं, लाल वर्ण गहरा पाया।
मंगल दोष निकट ना आवे, निश्चल मन से जो ध्याया।।
प्रतिशोध का भाव जगे ना, समता मय जीवन पाऊँ।
चरणों में शुभ अर्घ्य समर्पित, सिद्ध प्रभु को नित ध्याऊँ।।1।

ॐ ह्रीं मंगलग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रक्तिम आभा मंगल की जो, क्रोधी पापी बना रहा।
मन घबरावे कार्य घटावे, शुभ में बाधा सदा रहा।।
वासुपूज्य की मूँगे माला, सिद्धाणं की जाप करें।
मंगल ग्रह के दोष निवारण, ब्रह्मचर्य ले ताप हरें।।2।।

ॐ ह्रीं मंगलग्रह-अरिष्टनिवारक मंगलग्रह विमानस्थित-अकृत्रिम-सिद्ध-परमेष्ठी-प्रतिमा सह श्री-वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

मंगल ग्रह में कर्म दोष बलि, उसे नाशने करूँ जतन।
वासुपूज्य जिन परमेष्ठी की, नित्य करूँ प्रातः वंदन।।
मात-पिता वृद्धों की सेवा, भ्राता भगिनी प्रेम रखूँ।
अतिथि हो या वक्त का मारा, सबका मंगल सदा चहूँ।।

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्र: मंगलमहाग्रह सर्व-अरिष्टग्रह-रोगकष्ट-निवारणं षण्मुखयक्ष-गांधारीयक्षी-सेविताय श्री-वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय

(बुध ग्रह अरिष्ट निवारक अष्ट जिनदेव अर्घ्यावली)

दोहा– **आदिनाथ महावीर जिन, जैन धर्म सरताज।**
मिथ्या तज सम्यक भजे, भव्य जीव जिनराज।।
(चतुर्थ-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

चक्रवर्ती तीर्थंकर पद पा, कामदेव से सुंदर थे।
वैभव रूप धरम पाकर भी, निज आतम के अंदर थे।।
शांति नाथ सह उपाध्याय की, जाप हरें बुध ग्रह पीड़ा।
जन्म कुंडली दोष निवारे, शांतिनाथ नित जप धीरा।।1।।

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-शांतिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वाणी चंचल हो अशुद्ध या, रिश्ते से ना बढ़े मिलाप।
बुद्धि विकृत बुध ग्रह कारण, शांतिनाथ की नित कर जाप।।
हित मित प्रिय वाणी हो मधुरिम, शांत रहें बुध गृही विकार।
हरित वर्ण की माला फेरें, शांतिनाथ की कर जयकार।।2।।

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-शांतिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम करे इज्जत ना पावे, सब कुछ है पर मान नहीं।
बुधग्रह पीड़ा देता रहता, अवसर पर बहुमान नहीं।।
विमल अनंत धर्म जिन शांति, कुंथु अरह का ध्यान करूँ।
नमिनाथ श्री वर्धमान जप, बुध दोष अवसान करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक बुधग्रहविमानस्थित-अकृत्रिम-सिद्ध-परमेष्ठी-प्रतिमा सह श्री-विमलनाथ-अनन्तनाथ-धर्मनाथ-शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ, नमिनाथ-वर्धमानजिनेन्द्राय नमः अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विमलनाथ भगवान

दुख के काले बादल छाये, या सुख की बौछारें हो।
दोनों क्षण समता को धारूँ, जीवन स्थिर सारे हो॥
विमलनाथ सम विमल बुद्धि कर, अमल विमल गुणवन्त रहें।
कर्मातीत करे जिन दर्शन, विमलनाथ भगवंत कहे॥4॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-विमलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंतनाथ भगवान

क्षण भंगुर जीवन वैभव पर, वर्षों तक स्थिर रहता।
सुख दुख हानि लाभ दिखाकर, जीवन क्रम हर क्षण चलता॥
काल अन्नतों बीत चुके प्रभु, भटक भटक कर हे स्वामी।
अंत करो भव भटकन जिनवर, अनंतनाथ शिवपथ गामी॥5॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-अनन्तनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मनाथ भगवान

धर्मनाथ जिन शरणा पाकर, दूर करें सब पाप विकार।
वस्तु का स्वरूप जानकर, धर्म करें तज बाह्य विचार॥
भक्ति मिली जिनदेव आपकी, भाग्य मेरा बलवान हुआ।
सद् बुद्धि सन्मार्ग मिला है, स्वयं बोध सम्मान हुआ॥6॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-धर्मनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

कुंथुनाथ भगवान

चौदह रत्नों के स्वामी थे, कामदेव का रूप मिला।
तीर्थंकर पदवी के धारी, तन सुख मन अनुरूप खिला॥
मेरा भाग्य जगा दो जिनवर, भक्ति का फल मुक्ति मिले।
चंचल मन स्थिर हो जाये, ऐसी अदभुत शक्ति मिले॥7॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-कुन्थुनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरहनाथ भगवान

अरहनाथ अरिदमन करन को, संन्यासी बन वन पहुँचे।
त्याग साधना सघन विपिन में, कर्म नशे आतम चमके॥
मन कितना कमजोर मेरा प्रभु, दुख पाकर ही मचल गया।
अरहनाथ तेरी शरणा पा, भक्ति गाकर सँभल गया॥8॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–अरहनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

नमिनाथ भगवान

नयन मनोहर नासा दृष्टि, वीतराग मुद्रा गंभीर।
नमन नशावे दोष ग्रहों का, भक्ति करें जो होके अधीर॥
नीरधार कोमल होकर भी, चट्टानों को तोड़ रही।
भक्ति की निर्मल धारा भी, कर्मशिला को फोड़ रही॥9॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–नमिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

वर्धमान भगवान

पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण, धर्म ध्वजा फहराया है।
शासन नायक वर्धमान जिन, धर्म भाव विकसाया है॥
वर्धमान के नाम जाप से, बुध ग्रह कृत सब दोष टलें।
भक्ति आराधन नित करता, सुख दुख में संतोष फले॥10॥

ॐ ह्रीं बुधग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–वर्धमानजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

नवग्रह के सब ज्योतिष देवा, हाथ जोड़कर खड़े रहे।
तीर्थंकर का अतिशय अद्भुत, चरणों मे नित पड़े रहे॥
जन्म राशि गण वर्ण योनि अरुँ, नाड़ी और नक्षत्र मिले।
शान्तिनाथ से अपनी संधि, जोड़ भक्ति सर्वत्र खिले॥

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः बुधमहाग्रह–सर्व–अरिष्टग्रह–रोगकष्टनिवारणं गरुड़ यक्ष महामानसीयक्षी–सेविताय श्री–शांतिनाथजिनेन्द्राय प्रतिमा नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम वलय

(गुरु ग्रह अरिष्ट निवारक श्री आदिनाथ जिनेन्द्र सहित अष्ट जिनदेव अर्घ्यावली)

दोहा– **पुष्परत्न फल धान्य हो, या प्रतिमा तद् वर्ण।**
दोष ग्रहों का टालते, धर्म कृत्य हो संग।
(पंचम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्।)

आदिनाथ भगवान

आदिनाथ जी श्रेष्ठ गुरु हैं, बृहस्पति नित गुण गाये।
गुरु ग्रह पीड़ा नाम जाप से, दूर रहे ना दुख लाये।।
आदर देकर आदर पायें, जो विनम्र व्यवहार करें।
छोटे होकर दिखे बड़प्पन, गुरुजन भी सत्कार करें।।1।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–आदिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

परम गुरु हे प्रथम गुरुदेव, आदिनाथ जिनदेव महान।
असि मसि षट् कर्म जिविका, धर्म ग्रहस्थी पूजा दान।।
श्रावक और श्रमण धर्म का, मार्ग आपने बतलाया।
जगत गुरु हे तीर्थ प्रवर्तक अर्घ चढ़ा मन हर्षाया।।2।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक प्रथम गुरु श्री–आदिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु कृपा से वंचित रहता, गुरु ग्रह जब पीड़ा देता।
पंच गुरु परमेष्ठी भक्ति, आदिनाथ जप दुख हरता।।
ऋषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमतिनाथ सुपार्श्व जपो।
शीतल और श्रेयांस आठ जिन, नम्रभाव से सदा भजो।।3।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक गुरुविमानस्थित–अकृत्रिम–सिद्ध–परमेष्ठी–प्रतिमा सह श्री–आदिनाथ–अजितनाथ–संभवनाथ–अभिनंदननाथ–सुमतिनाथ–सुपार्श्वनाथ–शीतलनाथ–श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ भगवान

कर्म विजेता महाप्रभावी, अजितनाथ बहु गुण धारी।
गज चिन्हांकित चतुर्थ काल के, तीर्थंकर है अविकारी।।
तीर्थराज सम्मेद शिखर से, मोक्ष द्वार को खोला है।
गुरु ग्रह पीड़ा हर गरिमामय, गुरु कृपा अनमोला है।।4।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–अजितनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संभवनाथ भगवान

जय संभव नाथा गाउ गाथा, कर्म शृंखला अंत करूँ।
शुभ अर्घ चढाऊँ भक्ति गाऊँ, ध्यान लगा अरिहंत वरूँ।।5।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–संभवनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अभिनंदननाथ भगवान

जय जय अभिनन्दन–चरणनन् वंदन, क्रंदन कर्म नशाया है।
ग्रहदोष निवारे सुख विस्तारे, श्रद्धाफल सुख पाया है।।6।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमतिनाथ भगवान

छत्र चँवर भामंडल आदि, आस पास शोभा पाते।
देव शतेन्द्र नमें तव चरणा, पुलकित होकर गुण गाते।।
तीन लोक के ज्ञाता दृष्टा, फिर भी हो अंतर्यामी।
सुमतिनाथ तुमको वंदु मैं, सुमति दो मुझको दानी।।7।।

ॐ ह्रीं गुरुग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–सुमतिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सुपार्श्वनाथ भगवान

भक्त जनों के अघ को हरते, उदय अस्त से रहित हुए।
मुनिगण में चंदा सम सोहे, आठ गुणों से सहित हुए।।

चरण कमल तल कमल बिछा है, उसके ऊपर चलते आप।
नाथ सुपारस जय हो तेरी, दूर करो सारे मम पाप॥8॥

ॐ ह्रीं गुरुग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतलनाथ भगवान

ध्यान धुरन्धर दिव्य देवता, शीतल समकित सरवर हो।
मन वांछित फल देने वाले, कल्प वृक्ष सम तरूवर हो॥
मोक्ष मार्ग पर चलुँ निरन्तर, कर्म रहित जीवन कर दो।
शीतल नाथ सदा सुखदायी, शुद्ध चेतना का वर दो॥9॥

ॐ ह्रीं गुरुग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-शीतलनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेयांसनाथ भगवान

श्रेष्ठ कार्य का श्रेय मिले तो, श्रेय अंश सबको बाटें।
न गरूर हो गुरु तम गरिमा, गुरु ग्रह पीड़ा सब छाटें॥
श्रेयांसनाथ हितकर तीर्थंकर, निज आश्रय में वास किया।
चरण कमल की नित्य अर्चना, दर्शन ज्ञान प्रकाश दिया॥10॥

ॐ ह्रीं गुरुग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सूर्य चन्द्र या राहु केतु, मंगल बुध गुरु ग्रह नाम।
शुक्र शनि ज्योतिष देवा हैं, करते रहते अपने काम॥
तिथि वार नक्षत्र योग अरुँ, करण कहाते हैं पंचांग।
आदिनाथ पंचांग नमो सब, पंच पाप तजकर सर्वांग॥11॥

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः गुरुमहाग्रह-सर्व-अरिष्टग्रहरोगकष्ट-निवारणं गोमुखयक्ष-चक्रेश्वरीयक्षी-सेविताय श्री-आदिनाथजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्टम वलय

(शुक्र ग्रह अरिष्ट निवारक श्री पुष्पदंत भगवान अर्घ्यावली)

दोहा– **शांति तुष्टि पुष्टि करें, वैभव आयु लाभ।**
भद्र भाग्य वृद्धि सदा, जिन चरणा मन लाग।।

(षष्टम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

सुख दाता सब दोष निवारे, कर्म विनाशी श्री भगवान।
पुष्पदंत की जाप करो नित, शुक्र ग्रह पीड़ा की हान।।
जल में रहकर मगरमच्छ से, बैर नहीं करते ज्ञानी।
शुक्रगुजार करो सब जन का, नम्र मिले या अभिमानी।।1।।

ॐ ह्रीं शुक्रग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-पुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संबंधों में परेशानी हो, सुख सामग्री नहीं मिले।
वस्तु बिगड़े धन हानि हो, शुक्र ग्रह बलवान खिलें।।
श्वेत वर्ण के पुष्पदंत प्रभु, फटिक जाप से अरिहंता।
नित्य करूँ मैं ध्यान साधना, वस्तु मिले सब सुख वन्ता।।2।।

ॐ ह्रीं शुक्रग्रह-अरिष्टनिवारक शुक्रविमानस्थित-अकृत्रिम-सिद्ध-परमेष्ठी-प्रतिमा सह-श्री-पुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

भौतिकता की राह पकड़कर, भगवत्ता को भूल गया।
नश्वर वस्तु में रम करके, निज ईश्वर प्रतिकूल गया।।
पुष्पदंत प्रभु आप शरण आ, नव लब्धि को पा जाऊँ।
जग में रहकर जग को तजकर, केवल ज्योति जला जाऊँ।।

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः शुक्रमहाग्रह सर्व-अरिष्टग्रह-रोगकष्टनिवारणं अजितयक्ष-महाकालीयक्षी-सेविताय श्री-पुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम वलय

(शनिग्रह अरिष्ट निवारक श्री मुनिसुव्रत भगवान अर्घ्यावली)

दोहा– **प्रतिकूल शनि ग्रह हुए, यश धन साथी खोए।**
अनुकूल शनि पुण्य मयी, मिले गए सब कोय॥

(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अपना कर्म प्रभाव भाव ही, शनि पीड़ा वर्धन करता।
मुनिसुव्रत-सा संयम पाले, ग्रह बाधा हर क्षण हरता॥
णमो लोए सव्व साहूणं की, मुनिसुव्रत संग जाप करें।
सादा जीवन रखकर सबके, क्लेश दोष सब माफ करें।1॥

ॐ ह्रीं शनिग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कलह रुकावट या दरिद्रता, बीमारी पग की पीड़ा।
कार्य विफलता घर भी ना हो, अपनों ने भी हो छोड़ा॥
मुनिसुव्रत की पूजा धारा, करके सादा जीवन हो।
व्यर्थ कल्पना मिटा शांत मन, निष्कांक्षी नित पावन हो।2॥

ॐ ह्रीं शनिग्रह-अरिष्टनिवारक शनिविमानस्थित-अकृत्रिम-सिद्ध-परमेष्ठी-प्रतिमा सह-श्री-मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पशु रक्षा सेवा कर सबकी, सादा जीवन शुद्ध विचार।
संतोषी रह उम्र गुजारे, ग्रह दोष का स्वयं निवार॥
लाभ हानि सुख दुख सारे ये, धूप, छाँव से रहते हैं।
उदासीन मन पुलकित करके, मुनिसुव्रत जप जीते हैं॥

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः शनिमहाग्रह-सर्व-अरिष्टग्रह-रोगकष्टनिवारणं वरुणयक्ष बहुरूपिणीयक्षी-सेविताय श्री-मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वलय

(राहु ग्रह अरिष्ट निवारक नेमिनाथ भगवान अर्घ्यावली)

दोहा– **भयकारी राहु महा, छिपा फूल में शूल।**
समता भक्ति धैर्य से, दोष छटे जड़ मूल।।

(अष्टम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

नेमिनाथ जी दया मूर्ति हैं, पशु पीड़ा लख दीक्षा ली।
हिंसक जीव ही राहु जग में, इनसे बचना शिक्षा दी।।
रोगी को औषध देकर के, पक्षी को दाना डालें।
दया भाव सब जीवों पर रख, राहु ग्रह दुख सब टालें।।1।।

ॐ ह्रीं राहुग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धोखा खाना कर्मोदय पर, धोखा देना पाप महा।
पर की हानि गलत संगति, राहु का संताप कहा।।
व्यन्तर बाधा प्रगति रुके तो, अरिष्ट नेमि की जाप करें।
नश्वर जीवन कलह उपेक्षा, अकस्मात सब ताप हरें।।2।।

ॐ ह्रीं राहुग्रह-अरिष्टनिवारक राहुविमानस्थित-अकृत्रिम-सिद्ध-परमेष्ठी-प्रतिमा सह-श्री-नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

जिनवर के गुण गाता निशदिन, पर अवगुण ना तज पाता।
गज स्नान समा भक्ति से, कर्म मैल ना धुल पाता।।
दुविधा में रहता मन मेरा, नेमिनाथ की शरण लहूँ।
तेरे बिन ना मेरा कोई, सब दुखड़ा तब चरण कहूँ।।

ॐ आं क्रों ह्रीं ह्रः राहुमहाग्रह-सर्व-अरिष्टग्रह-रोगकष्टनिवारणं गोमेद यक्ष-कुष्मांडीयक्षी-सेविताय श्री-नेमिनाथजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवम वलय

(केतु ग्रह अरिष्ट निवारक मल्लिनाथ भगवान एवं पार्श्वनाथ भगवान अर्घ्यावली)

दोहा– **खानपान की शुद्धि हो, चुगली व्यसन निवार।**
सेवा और विनम्रता, करें केतु संहार।।

(नवम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

पार्श्वनाथ भगवान

केतु का जो कष्ट घनेरा, पारस भक्ति दूर करें।
करो सदा पूजा जलधारा, केतु ग्रह सुख पूर करें।।
कुष्ठ चर्म या अग्नि पीड़ित, दया दान कर कष्ट हरें।
केतु के हेतु जो जग में, साहूणं पढ़ इष्ट वरें।।1।।

ॐ ह्रीं केतुग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ भगवान

मन मर्कट-सा मचल रहा हो, मंत्र जाप वश में करता।
इन्द्रिय वश कर मल्लि नाथ सम, ब्रह्मचर्य व्रत दृढ़ रहता।।
कौतुकता में केतु ग्रह भी, किञ्चित ना नुकसान करें।
मोह मल्ल मल्लि सम नाशे, मल्लिनाथ गुणगान करें।।2।।

ॐ ह्रीं केतुग्रह-अरिष्टनिवारक श्री-मल्लिनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्र तंत्र में रुचि जगावे, धार्मिकता से दूर रहे।
पूर्वज भी बैरी सम होवे, केतु कष्ट भरपूर रहे।।
कमठ केतु तांत्रिक-सा जीवन, धर्म भाव ना चित लाये।
कमठ भाव से दूर रहे नित, पार्श्व प्रभु के गुण गावें।।3।।

ॐ ह्रीं केतुग्रह-अरिष्टनिवारक केतुविमानस्थित-अकृत्रिम-सिद्ध-परमेष्ठी-प्रतिमा सह-श्री-पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

सुख दुख में समता जागृत हो, ऐसी शक्ति प्रदान करो।
जीवन के सब कष्ट मिटें प्रभु, मेरा भी कल्याण करो।।
तुच्छ तिरस्कृत हूँ जिनवर, तुम श्रेष्ठ पुरस्कृत ईश्वर हो।
चिन्तामणि हे पारस प्रभुवर, सर्व सिद्धि के सरवर हो।।4।।

ॐ आं क्रों ह्रीं हः केतुमहाग्रह–सर्व–अरिष्टग्रह–रोगकष्टनिवारणं धरणेन्द्रयक्ष–पद्मावतीयक्षी–सेविताय श्री–पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महार्घ्य

गृह में रहकर नवग्रह पीड़ा, पास मेरे ना आ पावे।
चौबीसी जिनवर की भक्ति, सारे कष्ट मिटा जावे।।
कर से कायोत्सर्ग करूँ मैं, नवग्रह बारह राशि हो[1]।
सौरभ सागर जाप करे नित, सर्व कर्म का नाशी हो।।

ॐ ह्रीं नवग्रह–अरिष्टनिवारक श्री–चतुर्विंशतिजिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशम वलय

दोहा– **संस्थापक जिनधर्म के, आदिनाथ भगवान।**
विस्तारक महावीर हैं, परम् ज्योति निष्काम।।

(दशम–वलय–मण्डलस्योपरि–पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(चौपाई)

सात धनुष की ऊँची काया, देव गति की सारी माया।
चंद्र सूर्य दो इंद्र कहाते, बारह सहस किरण चमकाते।।

---

1. सर्वश्रेष्ठ **करमाला** होती है। 12–राशी, 9–ग्रह दोनों का दोष दूर करने हेतु 12×9=108 जाप अन्य माला से नहीं **करमाला** से कायोत्सर्ग मुद्रा में करें।

एक राजू लंबा चौड़ा है, एक सौ दश योजन मोटा है।
सात सौ नब्बे योजन ऊपर, ज्योतिष देव रहे निज घर पर॥1॥[1]

ॐ ह्रीं सूर्य चन्द्र इंद्रेण–स्वपरिवारसहितेन पाद पद्मार्चिताय जिननाथाय तथैव पद–प्रदाय श्री–पद्मप्रभु–चन्द्रप्रभुजिनेन्द्राय नमः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

राहु ऊपर चंद्र विमाना, केतु ऊपर सूर्य बखाना।
ध्वज दण्ड से ऊपर चउ अंगुल, प्रतिदिन भ्रमते सोलह पथ कुल॥
चंद्रकला जब एक दिखाई, मावस की बेला है आई।
बढ़ते क्रम से पूर्ण दिखे तब, पूरणमासी लोक कहे सब॥2॥

ॐ ह्रीं राहु–केतु–इंद्रेण–स्वपरिवारसहितेन पाद–पद्मार्चिताय जिननाथाय तथैव पद–प्रदाय श्री मल्लिनाथ–नेमिनाथ–पार्श्वनाथजिनेन्द्राय नमः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

चन्द्र किरण शीतल मन भावन, सूर्य किरण अति उष्ण तपावन।
ढाई सहस उज्ज्वल किरणें हैं, शुक्र ग्रह के क्या कहने हैं।
मंगल गुरु बुध शनि ग्रह छोटे, मंद मंद किरणें उद्योते।
जिन प्रतिमा से युक्त विमाना, भ्रमते रहते क्षेत्र प्रमाणा॥3॥

ॐ ह्रीं मंगल–बुध–गुरु–शुक्र–शनि–इंद्रेण–स्वपरिवारसहितेन पाद–पद्मार्चिताय जिननाथाय तथैव पदप्रदाय श्री–वासुपूज्य–शांतिनाथ–आदिनाथ–पुष्पदंत–मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय नमः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

गीता छंद– **सप्तेएकादश दश अठ उन्नीस, सोलह तेईस सहस जपों।**
अट्ठारह अरुँ सप्त सहस जप, विधिपूर्वक ही सहज जपों॥
पक्ष वार दिश समय वर्ण सब, प्रतिकूल मन क्लान्त करें।
वन्दन पूजन हवन जाप्य कर, ग्रह दोषों को शांत करें॥4॥[2]

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अनाहत–विद्यायै णमो अरिहंताणं मम सर्व ग्रह–अरिष्टनिवारक नव तीर्थंकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

1. तिल्लोय पण्णति, सर्वार्थ सिद्धि, त्रिलोक सार
2. सभी ग्रहों की शांति हेतू मंत्र जाप्य हेतू पेज नं. 163 देखें

माणिक मोती मूँगा पन्ना, पुखराज-सा रत्न अहो।
स्फटिक नीलम नीला अरुँ, काला रत्न हकीक कहो।।
तीर्थंकर तद् वर्ण समा जो, रत्न मन संतुष्ट करें।
धान्य पुष्प फल वस्त्र समर्पित, कार्य पूर्ण परिपुष्ट करें।।5।।[1]

ॐ ह्रीं श्वेत-श्याम-रक्त-स्वर्ण-हरित वर्ण युक्त-सर्व-ग्रहदोष-कष्ट-क्लेश निवारक चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जन्म वार को मंदिर आकर, भावों से अभिषेक करें।
नग धारे या द्रव्य चढ़ावे, नव देवा जप नेक करें।।
दीन दुखी पशु सेवा करले, तीर्थंकर गुरु सुमरे नाम।
नवग्रह नव जिन देवा ध्यावें, सुधरे बिगड़े सारे काम।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा पद्म चन्द्र वसु शान्ति आदि पुष्पदंत-मुनिसुव्रत नेमि-पार्श्व-जिन सम अप्रतिहत शक्तिर्भवतु ह्रीं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सूर्य चंद्र बुध शुक्र शनि, या केतु ग्रह के दोष जगे।
तीर्थराज सम्मेद शिखर जा, तद् जिनवर की भक्ति रचें।।
तद् वर्णों की सामग्री ले, परिक्रमा कर टोंक नमें।
तीर्थंकर श्री सिद्ध अर्चना, छहों ग्रहों के दोष नशें।।7।।

[2]**सूर्यग्रह दोष निवारणार्थ**–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **सूर्यग्रह** अरिष्टनिवारक **श्री-पद्मप्रभु जिनेन्द्रादि** मुनि, 99 करोड़, 87 लाख, 43 हजार, 757 मुनि सम्मेदशिखर के मोहन कूट से सिद्ध हुए उनके चरणारविन्द को मेरा बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चन्द्रग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **चन्द्रग्रह**-अरिष्टनिवारक **श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्रादि** मुनि, 984 अरब, 12 करोड़, 80 लाख, 84 हजार, 595 मुनि ललित कूट से सिद्ध भये जिनके चरणारविंद को मेरा मन-वचन-काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. पृष्ठ संख्या 164 देखें।
2. *(नोट-जो श्रावक जिस ग्रह से पीड़ित हों वही अर्घ्य समर्पित करें)*

बुधग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **बुधग्रह**–अरिष्टनिवारक **श्री–शांतिनाथजिनेन्द्रादि** मुनि, 9 कोड़ा कोड़ी, 9 लाख, 9 हजार, 999 मुनि कुंदप्रभ कूट से सिद्ध भये जिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्रग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **शुक्रग्रह**–अरिष्टनिवारक **श्री–पुष्पदंतजिनेन्द्रादि** मुनि, 1 कोड़ा कोड़ी, 99 लाख, 7 हजार, 780 मुनि सुप्रभ कूट से सिद्ध भये जिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शनिग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **शनिग्रह**–अरिष्टनिवारक **श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्रादि** मुनि, 99 कोड़ा कोड़ी, 99 करोड़, 99 लाख, 999 मुनि निर्जर कूट से सिद्ध भये जिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

केतुग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **केतुग्रह**–अरिष्टनिवारक **श्री–पार्श्वनाथजिनेन्द्रादि** मुनि, 82 करोड़, 84 लाख, 45 हजार, 742 मुनि सुवर्णभद्र परम पुनीत कूट से सिद्ध भये जिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपापुर का क्षेत्र महाशुभ, पाँचों कल्याणक पाया।
वासुपूज्य वसुपूज्य पुत्र हैं, बालयति पद मन भाया।।
मंगल दोष रहे जीवन में, तीर्थ करें मंदारगिरि।
मंगलमय मंगल जीवन हो, मंगल दोष हरे सब हीं।8।।

मंगलग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **मंगलग्रह** अरिष्टनिवारक **श्री–वासुपूज्य जिनेन्द्रादि** चम्पापुर के मंदारगिरि से 1 हजार मुनि सिद्ध हुए जिनके चरणारविन्द को मेरा मन–वचन–काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

नेमिनाथ की शादी में क्यों, छल से पशुओं को बाँधा ।
सांसारिक खुशियों के क्षण में, राजुल को आई बाधा।।
धोखा हानि हवा पराई, कुसंगत राहु कारण।
सिद्ध क्षेत्र गिरनार वंदना, नेमिनाथ जप मन धारण।।9।।

राहुग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **राहुग्रह**–अरिष्टनिवारक **श्री–नेमिनाथ जिनेन्द्राय** गिरनारपर्वते 72 करोड़ 700 मुनीराज मोक्ष पधारे जिनके चरणारविन्द को मेरा मन–वचन–काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जन्मभूमि अयोध्या तीरथ, हस्तिनापुर आहार लिया।
सिद्ध क्षेत्र अष्टापद सुमरे, एक पाठ साकार किया।।
शतक वर्ष प्राचीन बिंब हो, कलशों सें अभिषेक करें ।
गुरु ग्रह पीड़ा तत्क्षण सिमटे, गुरु कृपा अतिरेक वरें।।10।।

गुरुग्रह दोष निवारणार्थ–ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं **गुरुग्रह**–अरिष्टनिवारक **श्री–आदिनाथ जिनेन्द्राय** अष्टापद सिद्ध क्षेत्र से मुक्ति पधारे दश सहस्र मुनिवर सहित अयोध्या हस्तिनापुर क्षेत्रे सर्व जिन प्रतिमाभ्यो नमः जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

नवग्रह निवारक अतिशय क्षेत्र अर्घ्यावली

पद्मपुरी सोनागिर तीरथ, हस्तिनापुर अतिशय कारी।
काकंदी पैठण अहिक्षेत्रा, जिन प्रतिमा ग्रह दुख हारी।।
जप विधान चालीसा करके, पद्म चंद्र शांति भज ले।
पुष्पदंत मुनिसुव्रत पारस, वंदन कर सब सुख वर ले।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु पदमपुरी–सोनागिर–हस्तिनापुर–काकंदी–पैठन–अहिक्षेत्रअतिशय क्षेत्रे विराजित षट्–ग्रह–दोष निवारक श्री–पद्मप्रभु–चन्द्रप्रभु–शांतिनाथ–पुष्पदंत–मुनिसुव्रत–पारसनाथ–अतिशयकारी सर्व–जिन–प्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपापुर गिरनार अयोध्या, अतिशय सिद्ध क्षेत्र प्यारा।
मंगल राहु गुरु ग्रह नाशक, तीरथ मंदिर हितकारा।।
शतक वर्ष प्राचीन बिम्ब हो, द्रव्य भाव से सदा नमें।
जप विधान चालीसा करके, वासु नेमि आदि भजें।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा अप्रतिहत शक्तिर्भवतु चम्पापुर-गिरनार-अयोध्या-अतिशय-क्षेत्रे विराजित-त्रयग्रहदोषनिवारक श्री-वासुपूज्य-नेमिनाथ आदिनाथ-अतिशयकारी-जिनप्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पगिरि का तीरथ पावन, अतिशय क्षेत्र महान है।
सहस्र वर्ष प्राचीन पार्श्व जिन, चमत्कारी भगवान है।।
निर्मल मन से करूं प्रार्थना, द्वंद क्लैश दुख छट जायें।
शांति नेमी पद्म प्रभु जिन, अर्घं चढ़ा मन सुख पायें।।13।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरि-अतिशयक्षेत्रे भू प्रगटित सहस्रवर्षप्राचीन-श्री-पार्श्वनाथ-नेमिनाथ-शांतिनाथ-सह-पद्मप्रभु-आदिनाथ-चन्द्रप्रभु-पुष्पदंत-मुनिसुव्रत-वर्धमान-बाहुबली-तीन-चौबीसी आदि सर्व-जिनबिम्बेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

नवग्रह की नव जिन प्रतिमाएँ, नव उल्लास हृदय भरतीं।
पुष्पगिरि में नव विधान की, रचना ज्योतिर्मय करती।।
पुष्पदंत गुरुदेव कृपा से, पाठ रचा ग्रह दुख हारी।
सौरभ सागर निज ग्रह ध्याता, जिन ग्रह पूजा सुखकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं नवग्रह-दोषनिवारक श्री-चतुर्विंशतितीर्थंकराय पंचकल्याणकसंयुक्ताय शिवपददाता सर्वविघ्न-व्याधिहर्ता तव भक्ति-प्रसादात सर्वजीव कल्याणमस्तु-दीर्घायुरस्तु-शुभमस्तु-सुकीर्तिरस्तु-सद् बुद्धिरस्तु-धनधान्य-समृद्धिरस्तु-सर्व-रोगशोकपीड़ाविनाशनम् भवतु सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र-वृद्धिरस्तु-सर्व ऋद्धि सिद्धि भवतु रक्ष रक्ष हूं फट् स्वाहा अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जयमाला

वीतराग जिनदेव की, भक्ति करे निःराग।
रागी मैं भक्ति करूँ, त्याग मार्ग अनुराग।।

लोक प्रकाशक तीर्थंकर हैं, पाप विनाशक कृपा निधान।
रत्नत्रय के दिव्य रूप हैं, जग हितकर भी देव महान।।
उपमा से महिमा गरिमा का, व्यवहारिक संबंध रहा।
कर्मातीत निरत शुद्धातम, सिद्धालय आनन्द महा।।1।।

क्षायिक नव लब्धि के धारी, नव ग्रह के जिन देव कहे।
भक्ति पूजा निशदिन करता, नव ग्रह के सब कष्ट बहे।।
नव तीर्थंकर नवकार जप, नवधा भक्ति नित्य करें।
नव निधि नव जीवन पाकर के, नव नव आनंद नित्य वरें।।2।।

दो गोरे दो लाल मनोहर, दो काले दो हरे महान।
सोलह कंचनमय तीर्थंकर, कर्म दोष सब हरे जहान।।
मन से भक्ति करूँ मैं जिनवर, कर्म दोष से मुक्त रहूँ।
जब तक तन में साँस चलेगी, तब तक तव पद भक्त रहूँ।।3।।

तारण हारे पद्म चन्द जिन, वासुपूज्य शांति जिनराज।
आदिनाथ श्री पुष्पदंत प्रभु, मुनिसुव्रत नेमि महाराज।।
पारसनाथ जिनेश्वर पूजूँ, दया दृष्टि नित बनी रहे।
मिथ्यामत से बचा रहुँ बस, श्रद्धा जिनपर जमी रहें।।4।।

न अपराध न दोष करूँ मैं, पापों का ना करूँ चयन।
पुण्य व्रती सेवा संयम धर, करूँ सदा निर्वाण गमन।।
परमेष्ठी की भक्ति करूँ मैं, जिनवाणी का अध्ययन हो।
दीन दुखी पशु दश विध मुनियों, की सेवामय जीवन हो।।5।।

नर भव देवों से ऊँचा है, त्याग साधना कर सकते।
पंचम से चौदह गुण श्रेणी, चढ़कर सिद्धालय वरते।।

देव देवियाँ नर वश होकर, कार्य सिद्धि कर जाते हैं।
चमत्कार या अतिशय करके, मुनि सखा बन जाते हैं॥6॥

ग्रह दोष में कारण माने, देव सभी खेचर जानें।
तीर्थंकर के जन्म काल पर, भक्ति करें निज हित माने॥
भवनवासी में शंख ध्वनि कर, भेरी नाद व्यन्तर करते।
सिंहनाद ज्योतिष देवाकर, स्वर्गों में घण्टे बजते॥7॥

जय हो जय हो दिव्यनाद कर, देव सभी धरती आते।
बालक की आराधन करके, दुर्लभ मानुष गुण गाते॥
सर्व देव के इष्ट जिनेश्वर, चौबीसों तीर्थंकर हैं।
मालिक की भक्ति कर प्राणी, कष्ट हरे ये जिनवर हैं॥8॥

जब कर्मोदय आ दुख देते, दुनिया हँसती हम रोते हैं।
जिससे मन की बात कहुँ, वे रस ले पर से कहते हैं॥
नश्वर दुनिया में अपना था, ना अपना कोई प्राणी।
फूल शूल में समता रख शुभ, कर्म करूँ हे शिवगामी॥9॥

दु:खों का विष पीकर जीया, श्रद्धामृत अब पीऊँगा।
ज्योति पुँज है दया निधि, मैं अजर अमर हो जीऊँगा॥
स्वस्थ रहूँ मैं व्यस्त रहूँ, मैं धर्म कार्य में मस्त रहूँ।
द्वेष करूँ ना दीन रहूँ प्रभु, पाप कर्म से मुक्त रहूँ॥10॥

प्रस्तर में मूरत को ढूंढे, जंगल में मंजिल की राह।
कोलाहल में गीत ढूंढले, मावस में किरणों की चाह॥
साहस हो उत्साह लगन हो, जग सारे बौने होंगे।
मनराजी जग राजी जिनवर, कृपा दृष्टि तेरे होंगे॥11॥

मैं हूँ भव भव का दुखिया, तेरे चरणों में आया हूँ।
आओ आओ प्रभु दर्शन दो, मैं यही भावना भाया हूँ॥
इक बार सहारा दो जिनवर, सब कष्ट मिटे मुक्ति पाऊँ।
मन कमल खिला दो किरणों से, तव भक्ति में ही खो जाऊँ॥12॥

आँखों से दर्शन तेरे हो, हाथों से नित्य करूँ पूजन।
कदमों से चलकर दर आऊँ, अर्न्तमन से होवें सुमिरन॥
हे महागुणी! निर्ग्रन्थ देव! हे धर्म वीर! ध्रुव धाम रहे।
हे ज्ञानेश्वर! हे परमेश्वर! सौरभ सागर प्रणाम कहे॥13॥

धत्ता

जय नव जिनदेवा, कर्म खिपेवा, सब सुखदेवा, हितकारी।
जय विघ्न विनाशी, ज्ञान प्रकाशी, अविनाशी, मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्री नवग्रह अरिष्ट निवारक चतुर्विंशती जिनेन्द्राय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **नवग्रहों की शान्ति को, चरण नमूँ शत बार।**
नव लब्धि पाऊँ प्रभु, गा गा मंगलाचार॥

शांति शांति शांतिधारा

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी का अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्पों की, सामग्री यह पावन है।
दीप धूप नैवेद्य फलों से, अर्घ बना मन भावन है॥
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदन्त गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य श्री पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलयोः अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य श्री सौरभ सागर जी का अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप फल ले आए।
तब चरणों में अर्घ चढ़ा के, अष्टम वसुधा पा जाए॥
हम अर्घ समर्पित करते हैं, गुरुवर तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अनर्घ-पद-प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य

सूर्यग्रह पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं / ॐ ह्रीं श्रीं पद्मप्रभजिनेन्द्राय नमः मम सूर्य ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 7000 संख्या में शुक्ल पक्ष के प्रथम रविवार से पूर्व दिशा की तरफ मुँह करके प्रातःकाल लाल रंग की माला से करें।

चन्द्रग्रहपीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं / ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभ-जिनेन्द्राय नमः मम चन्द्र ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु / जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 11000 संख्या में शुक्ल पक्ष के प्रथम सोमवार से मोती की माला से संध्याकाल में करें।

मंगल ग्रह की शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं / ॐ ह्रीं श्रीं वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः मम भौमग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 10000 संख्या में शुक्ल पक्ष के प्रथम मंगलवार से मूँगे की माला से प्रातःकाल करें।

बुधग्रह की पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं/ ॐ ह्रीं श्रीं शांतिनाथजिनेन्द्राय नमः मम बुधग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 8,000 संख्या में शुक्ल पक्ष के प्रथम बुधवार से हरे हकीक की माला से प्रातः काल, करें।

गुरु ग्रह की पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं / ॐ ह्रीं श्रीं ऋषभनाथ जिनेन्द्राय नमः मम गुरु ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 19,000 संख्या में शुक्ल पक्ष के प्रथम गुरुवार से पीली माला पर संध्याकाल में करें।

शुक्र ग्रह की पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं / ॐ ह्रीं श्रीं पुष्पदंतजिनेन्द्राय नमः मम शुक्र ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 16,000 संख्या में सफेद स्फटिक की माला पर प्रातः काल करें।

शनि ग्रह की पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं / ॐ ह्रीं श्रीं मुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय नमः मम शनि ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु

कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 23,000 संख्या में काले हकीक या लौंग पर संध्याकाल में शुक्ल पक्ष के प्रथम शनिवार से उत्तर दिशा में मुँह करके करें।

राहु ग्रह की पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं / ॐ ह्रीं श्रीं नेमीनाथ जिनेन्द्राय नमः मम राहु ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 18,000 संख्या में रात्रि के समय शुक्लपक्ष के प्रथम शनिवार से नीले, काले हकीक की माला या लौंग पर करें।

केतु ग्रह की पीड़ा शांति हेतु मंत्र–ॐ ह्रीं णमो लोए सव्वसाहूणं / ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः मम केतु ग्रह अरिष्ट शांतिं कुरु कुरु। जिन मतानुसार किसी भी एक मंत्र का जाप 7,000 संख्या में रात्रि के समय शुक्ल पक्ष के प्रथम रविवार/मंगलवार से नीले, काले हकीक की माला या लौंग पर करें।

1. सर्व एव हि जैनानाय-प्रमाणं लौकिकौ विधि।
यंत्र सम्यक्त्व हानि र्न यत्र न व्रत दूषणं॥

लोक प्रचलित वह सभी व्यवहार जैनियों को प्रमाण रूप से मान्य है जिसमें सम्यक्त्व की हानि और व्रत में दूषण न लगता हो अतः ग्रह पीड़ित सज्जन अपने ग्रह दोष निवारणार्थ उसी वर्ण के धान्य दान गरीबों में कर सकते हैं, पुष्प अर्पित कर सकते हैं, फल वस्त्र भी गरीबों में-दीन-दुखियों में बँटवा सकते हैं। ग्रह दोष निवारण के साधनभूत रत्न भी अँगुली में धारण कर सकते हैं। जिस प्रकार बीमारी में औषधी ग्रहण करके तन रोग निवारण का साधन है उसी प्रकार कष्ट-परेशानी में रत्न धारण, वस्तुदान मन रोग निवारण संतुष्टि का माध्यम है।

नोटः-रत्न को गंधोदक में डालकर शुद्ध करें, दीपक के प्रकाश में तपायें और जिस ग्रह का दोष हो उसी नग को ***ॐ ह्रीं नमो अर्हते रक्ष रक्ष हूं फट् सूर्य दोष निवारणार्थ श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय नमः पदम्-वर्ण-माणिक्य रत्न धारयामि इति स्वाहा।*** *जितनी उम्र हो उतनी बार या 9 बार जाप करें और अनामिका अँगुली में धारण करें।*

श्री समन्तभद्राचार्य प्रणीत

5. श्री स्वयंभू चौबीसी विधान

(स्वयंभू स्तोत्र)

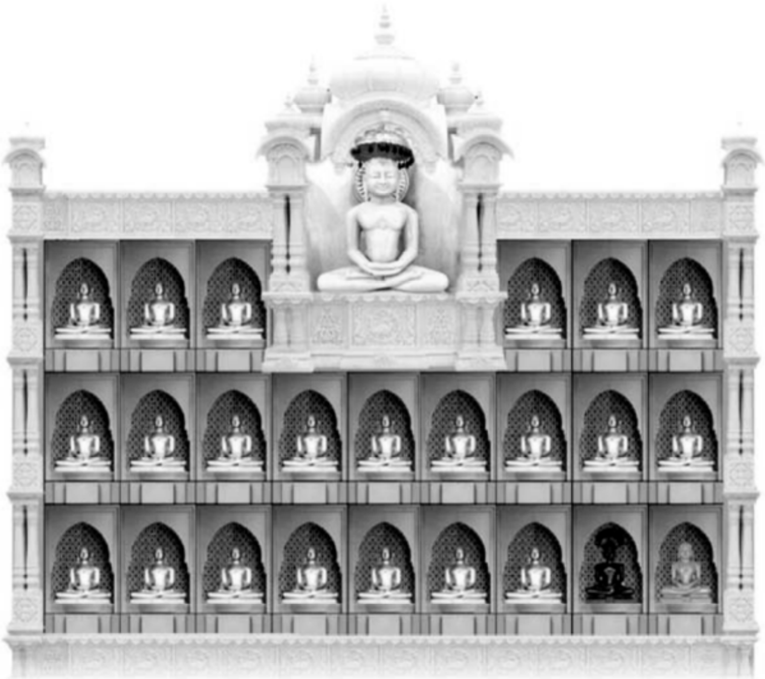

रत्नमय चौबीसी

सौरभाँचल, गन्नौर (हरियाणा)

पद्यानुवादक

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

5. श्री स्वयंभू चौबीसी विधान

माण्डला एवं 25 ध्वजाएँ

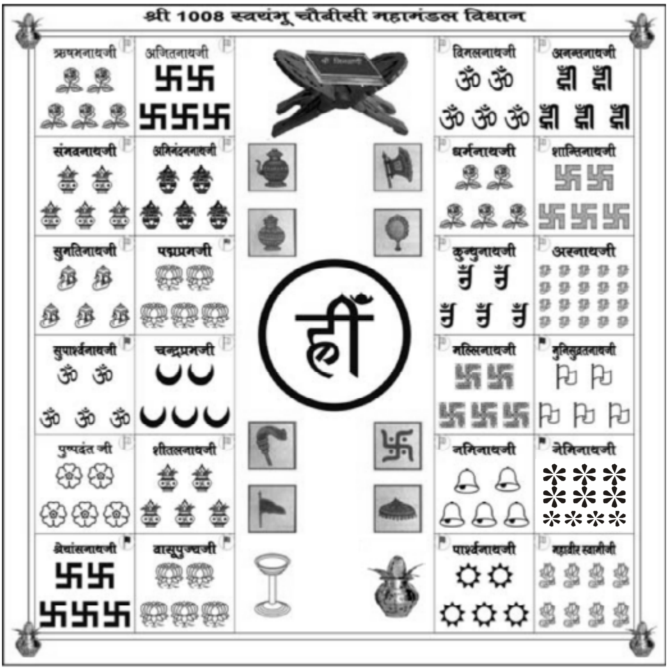

कुल अर्घ्य 170 : 25 ध्वजाएँ–16 पीली, 2 लाल, 2 सफेद, 2 काली, 2 हरी, 1 पंचरंगी

स्वयंभू चौबीसी व्रत विधि

व्रतारम्भ : किसी भी तीर्थंकर के कोई भी कल्याणक की तिथि से

अवधि : 1 वर्ष से 12 वर्ष

व्रतपूजा : व्रत वाले दिन स्वयंभू चौबीसी विधान, काव्यानुसार पूजा या जिस तीर्थंकर का कल्याणक है उनकी पूजा।

जाप : जिस तीर्थंकर का कल्याणक है उन्हीं के नाम की जाप या ॐ ह्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री वृषभादिवीर पर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

व्रत विधि : 143 उपवास या एकासन या 4 रस त्याग या जिस तीर्थंकर के कल्याणक पर व्रत है उन तीर्थंकर के वर्णानुसार अनाज, फल, सब्जी एवं कपड़ो का त्याग। जैसे–पार्श्वनाथ भगवान का वर्ण (रंग) हरा है तो हरी मूंग, पालक, हरे फल आदि का त्याग।

श्री स्वयंभू चौबीसी विधान प्रारम्भ

स्थापना

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमतिनाथ स्वामी गुणखान।
पद्म सुपारस चन्दा प्रभु जी, पुष्पदन्त जिन कर लूँ ध्यान॥
हे शीतल प्रभु शीतल करदो, श्रेयनाथ जिन हृदय विशाल।
वासुपूज्य पद बाल ब्रह्म हैं, विमल अनन्त धरम जयमाल॥
शान्ति कुन्थु अर मल्लि जिनेश्वर, मुनिसुव्रत व्रत पाऊँगा।
नमिनाथ नम नेमि शरण पा, पारस वीर को ध्याऊँगा॥
चौबीसों जिनराज हमारे, आज पुकारूँ करुणा धार।
अत्र पधारो हृदय विराजो, कर्म खपाओ हे अविकार॥
तीर्थंकर हे धर्म शिरोमणि, कर्म नाश भव पार करो।
भक्ति भाव से पूजा करता, मम विनती स्वीकार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति तीर्थंकर! अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

जग की ज्वाला में जल जल कर, जीवन व्यर्थ गवाया है।
जल की धारा चरण कमल दें, जन्म जरा विनशाया है॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, जलधारा स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

चन्दन चुटकी ले आया प्रभु, वन्दन भाव जगा करके।
शीतल सुरभित मन हो जाए, पूजा पाठ रचा करके॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, चन्दन यह स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि महावीरपर्यन्त चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

उज्ज्वल तन्दुल भाव मृदुल कर, श्री जिन सम्मुख ले आऊँ।
अक्षय निधी अक्षय संयम धर, सिद्धालय को पा जाऊँ॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, अक्षत यह स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षय-पदप्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

हृदय कमल कोमल करुणामय, काम बाण से रहित करो।
इन्द्रिय भोग तजूँ मैं जिनवर, ब्रह्मभाव को उदित करो॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, पुष्पाञ्जलि स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

इच्छाओं को दूर भगाया, नित उपवास किया करते।
क्षुधा वेदिनी नाश करन को, अन्नपान तजा करते॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, नैवेद्यम् स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

मिथ्यातम में फँसा रहा पर, अन्तर दीप न जल पाया।
तेरी अनुपम दिव्य ज्योति से, अन्तर मन उज्ज्वल छाया॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, जगमग दीप स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

दीक्षा लेकर महा तपस्या, करते चौबीसों मुनिराज।
योग साधना निजानन्दमय, अद्‌भुत अनुभूति निजसाध॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, धूपं यह स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

तरुवर फल तन पुष्ट करावें, बाहर बढ़ता फलता है।
अन्तर मन का मोक्ष महाफल, भक्ति ध्यान से मिलता है॥
तीर्थंकर हे चौबीस जिनवर, श्रद्धा फल स्वीकार करो।
पाप ताप संताप हरण कर, जगति का उद्धार करो॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्ष-महाफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

ऋजु भावों का शुभ जल लेकर, समता का चन्दन लाया।
ध्यान अवस्था के अक्षत ले, भक्ति पुष्प मन खिलवाया॥
चाहत की नैवेद्य चढ़ाकर, श्रद्धा दीप जलाऊँगा।
अष्ट मदों की धूप समर्पित, निराकार फल पाऊँगा॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ बनाकर, चरणों में अर्पित करता।
चौबीसी की पूजा करके, अन्तर मन हर्षित होता॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच कल्याणक

(चौपाई)

सोलह कारण भावना भाई, दया धर्म मन में प्रकटाई।
सोलह स्वप्न शगुन दर्शाता, पन्द्रह माह रतन बरसाता॥

तीर्थंकर का एक ही क्रम है, नाहीं संशय ना विभ्रम है।
गर्भ विषे जो जीव पला है, तीर्थंकर जग जीव भला है॥1॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो गर्भ-मंगल-मण्डिताय मम-गर्भ-दोष-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट देवीयाँ मंगल गाये, माता की सेवा चित लाये।
जन्म हुआ प्रभु का धरती पर, सुख शान्ति त्रय लोक में क्षणभर॥
देव इन्द्र सौधर्म भी आये, पाण्डुक वन अभिषेक कराये।
चिह्न लखा अरुँ नाम पुकारा, जन्म कल्याणक अति सुख कारा॥2॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्ममंगल-मण्डिताय मम-जन्मरोग-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगति के इन्द्रिय सुखभोगे, राज काज सब नित अवलोके।
पूर्व जन्म की यादें आई, या घटना ने भाव जगाई॥
लौकान्तिक सब देव भी आए, मनहर शिविका में बिठलाएँ।
छोड़ दिया नश्वर संसारा, भेष दिगम्बर अनुपम धारा॥3॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो तपोमंगल-मण्डिताय मम-चारित्र-वर्धनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्षों जंगल में तप कीना, कभी कभी आहार है लीना।
धर्म गृहस्थी या संन्यासी, पथ दोनों दे तप अभ्यासी॥
पद्मासन खड्गासन रहते, परिषहों को हर क्षण सहते।
शुक्ल ध्यान चउ कर्म नशाया, केवलज्ञान कल्याण मनाया॥4॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो केवलज्ञान-मण्डिताय मम-कुज्ञान-विनाशनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रय योगों से मुक्त हुए हो, ध्यान अवस्था युक्त हुए हो।
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति ध्याना, व्युपरत किरिया अरि सब हाना॥
अ-इ-उ-ऋ-लृ लघु शब्दा, कर्म जला तत्क्षण प्रभु सिद्धा।
निराकार चैतन्य प्रकाशी, चरण नमें पाने सुख राशि॥5॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षमंगल-मण्डिताय मम-सर्व-कर्म विध्वंसनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

आदि जिनेश्वर जग हितकारी, अजित नाथ जित कर्म विकारी।
संभव भव का नाश किया है, अभिनन्दन जग जान लिया है॥

सुमतिनाथ सन्मार्ग प्रदाता, पद्म प्रभु जी जग विख्याता।
नाथ सुपारस जय हो तेरी, चन्द्रप्रभु काटो भव फेरी॥

पुष्पदन्त श्री जिनवर नामा, शीतल शीतलता ध्रुव धामा।
श्रेयनाथ गुण दया निधाना, वासुपूज्य पूजित अविरामा॥

विमलनाथ निर्मलता धारी, है अनन्त अक्षय सुखकारी।
धर्मनाथ जिन धर्म बढ़ावें, शान्तिनाथ मन शान्त करावें॥

कुन्थुनाथ जी काम विजेता, अरहनाथ त्रिपद के नेता।
मल्लिनाथ सब शल्य मिटावें, मुनिसुव्रत व्रत में तिष्ठावें॥

नमिनाथ को नमन हमारी, नेमिनाथ दुख संकटहारी।
पारसनाथ सदा ही ध्याऊँ, महावीर पद शीश नवाऊँ॥

दोहा

चौबीसों के चरण में, वन्दन बारम्बार।
धर्म ध्यान बढ़ता रहे, भक्तिभाव उरधार॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूणार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य- ॐ ह्रीं वृषभादि वीराय नमः।

अष्ट प्रातिहार्य स्थापना

तरुवर वृक्ष अशोक कहावे, सिंहासन में शोभा पावें।
तीन छत्र मस्तक पर सोहे, भामण्डल शुभ मन को मोहें॥
दिव्य ध्वनि ऊँकार स्वरूपा, गगन सुमन वृष्टि हो हर्षा।
चौंसठ चँवर विनय प्रगटावें, दुन्दुभि नाद प्रभु गुण गावें॥
प्रातिहार्य शुभ आठ सजे हैं, समवशरण कुबेर रचे हैं।
इन्द्र शतक दर्शन को आवें, नतमस्तक हो प्रभु गुण गावें॥

भक्ति से विधान रचावें, प्रातिहार्य मण्डप सजवावें।
दर्शन कर मन पावन होवें, चौबीसी विधान संजोवें॥

(मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(अष्ट प्रातिहार्य स्थापित करें)

तद्वर्ण ध्वज अर्पण

दोहा

हेम वर्ण सम गात है, सोलह श्री भगवान।
सोलह ध्वज अर्पित करूँ, पूजोत्सव महान्॥

ॐ ह्रीं ऋषभ-अजित-संभव-अभिनन्दन-सुमति-शीतल-श्रेयांस-विमल-अनन्त-धर्म-शान्ति-कुन्थु-अरनाथ-मल्लि-नमि-महावीर-पर्यन्त-षोडश-तीर्थंकरेभ्यो स्वर्णवर्ण-ध्वजा-समर्पयामि।

(पहले सोलह पीली ध्वजा स्थापित करें)

पद्म प्रभु सुन्दर महा, मूँगा सम तन जान।
वासूपूज्य भी लाल हैं, ध्वज अर्पित सुखखान॥

ॐ ह्रीं पद्मप्रभु-वासुपूज्य-तीर्थंकरेभ्यो रक्तवर्ण-ध्वजा-समर्पयामि।

(फिर दो लाल वर्ण की ध्वजा स्थापित करें)

चन्द्र पुष्प दो तीर्थ हैं, श्वेत वर्ण विख्यात।
ध्वज मोती सम श्वेत हैं, अर्पित क्लेश निजात॥

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभु-पुष्पदन्त-तीर्थंकरेभ्यो श्वेत-वर्ण-ध्वजा-समर्पयामि।

(फिर दो श्वेत ध्वजा स्थापित करें)

मुनिसुव्रत नेमि प्रभु, श्याम वर्ण नभ रूप।
श्याम घटा सी ध्वजा ले, अर्पित जिनवर भूप॥

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रत-नेमिनाथ-तीर्थंकरेभ्यो श्यामवर्ण-ध्वजा-समर्पयामि।

(दो काली ध्वजा स्थापित करें)

नाथ सुपारस पार्श्व का, हरित धरासा वर्ण।
शान्ति सदा बिखरी रहे, ध्वज अर्पित तद्वर्ण॥

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथ-पार्श्वनाथ-तीर्थंकरेभ्यो हरितवर्ण-ध्वजा-समर्पयामि।

(फिर दो हरी रंग की ध्वजा स्थापित करें)

सोलह तीर्थंकर अतिप्यारे, स्वर्ण वर्ण-से हैं उजियारे।
दो काले दो हरे जिनेश्वर, गोरे दो दो लाल मनोहर॥
वर्ण ध्यान कर ध्वजा लगावे, परमेष्ठी वाचक कहलावें।
चौबीसी विधान रचावें, आशीर्वाद सदाही पावें॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंरेभ्यो पंचरंगी-धवजा-समर्पयामि।

(फिर एक पंचरंगी ध्वजा स्थापित करें)

(मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

1. श्री आदिनाथ भगवान की जय

स्वयम्भु वा भूत-हितेन भूतले,
समञ्जस-ज्ञान-विभूति-चक्षुषा।
विराजितं येन विधुन्वता तमः,
क्षपा-करेणेव गुणोत्करैः करैः॥1॥

स्वयं बोध से बोधित जिनवर, मोक्ष मार्ग को जान लिया।
सर्व प्राणी के हितकारक हैं, सम्यग् ज्ञान प्रकाश किया॥
गुण रत्नों से भूषित प्रभुवर, चन्द्र कान्ति से व्याप्त हुए।
ऋषभ नाथ हे प्रथम जिनेश्वर, कर्म काटकर आप्त हुए॥1॥

ॐ ह्रीं स्वयंबोधित-श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषुः,
शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः।
प्रबुद्ध-तत्त्वः पुनरद्भुतोदयो,
ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः॥2॥

प्रजापति हे आदि जिनेश्वर, षट् कर्मों का ज्ञान दिया।
जीवन आशान्वित प्राणी को, जीने का अधिकार दिया॥

इन्द्रों सा वैभव पाकर भी, हित अहित् को जान लिया।
मोह रहित हो त्याग धारकर, निज आतम कल्याण किया।।2।।

ॐ ह्रीं षट्कर्मोपदेशक मोहरहित-श्री-आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विहाय यः सागर-वारि-वाससं,
वधुमिवेवां वसुधा-वधूं सतीम्।
मुमुक्षुरिक्ष्वाकु-कुलादिरात्मवान्,
प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः।।3।।

इक्ष्वाकु वंशज के दाता, मोक्ष मार्ग के अनुरागी।
इन्द्रिय जेता आत्माराधक, परिषह जयते संन्यासी।।
मध्यलोक की सर्व भूमि तज, मोक्ष मार्ग पर गमन किया।
यम नियम व्रत से अच्युत हो, जिन दीक्षा को ग्रहण किया।।3।।

ॐ ह्रीं इक्ष्वाकुवंश-प्रणेता-मोक्षमार्ग-निर्माता-श्री-आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व-दोष-मूलं स्व-समाधि-तेजसा,
निनाय यो निर्दय-भस्मसात्क्रियाम्।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा,
बभूव च ब्रह्म-पदा-मृतेश्वरः।।4।।

शुक्लध्यान की वह्नि लेकर, निर्दयता से कर्म जला।
दोष मुक्त सब कर्म नाशकर, दिव्यज्ञान का वृक्ष फला।।
भव्य जीव को सप्त तत्व का, हितकारी उपदेश दिया।
आत्म स्वरूप में स्थिर होकर, सिद्धशिला प्रवेश किया।।4।।

ॐ ह्रीं कर्मनाशक-धर्मोपदेशक-श्री-आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स विश्व-चक्षुर्वृषभोऽर्चितः सतां,
समग्र-विद्याऽऽत्म-वपुर्निरञ्जनः।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो,
जिनोऽजित-क्षुल्लक-वादि-शासनः।।5।।

विश्व चक्षु हे जगतपूज्य, हे सर्व विद्या से युक्त जिनेश।
कर्म जयी हे आत्मान्वेषी, अन्तिम कुलकर के पुत्रेश॥
ध्वंस किया एकान्तवाद को, जिन शासन चारित्र धरो।
आदिनाथ की कोटि वन्दना, मम हृदय को पवित्र करो॥5॥

ॐ ह्रीं मिथ्यामतनाशक-सम्यकमत-प्रकाशक-श्री-आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

आदिनाथ प्रथमेश जिन, धर्म कर्म दातार।
भव वारिधी से पार कर, मेटो मम संसार॥

ॐ ह्रीं श्री-आदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

2. श्री अजितनाथ भगवान की जय

यस्य प्रभावात् त्रिदिवच्युतस्य,
क्रीडास्वपि क्षीवमुखारविन्दः।
अजेय-शक्तिर्भुवि बन्धुवर्ग
श्चकार नामाऽजित इत्यबन्ध्यम्॥1॥

भूमण्डल की सारी शक्ति, अजितनाथ सम्मुख आई।
बंधु वर्ग को क्रीड़ा में भी, मुख पुलकित कर हर्षाई॥
स्वर्ग लोक से धरती पर आ, मोह जीत कर अजित हुए।
एक सौ सत्तर तीर्थंकर सह, ढाई द्वीप में नमित हुए॥1॥

ॐ ह्रीं एकसौसत्तर-तीर्थंकर-सह-अढाईद्वीप-मध्ये विराजमान-अजितनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अद्यापि यस्याजितशासनस्य,
सतां प्रणेतुः प्रतिमंगलार्थम्।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं,
स्वसिद्धि-कामेन जनेन लोके॥2॥

भव्य जीव के मंगल कर्ता, अनेकान्त शासन नायक।
मिथ्यावाद को दूर भगाकर, बन गए चिदानन्द ज्ञायक॥

नाम आपका परम पवित्रा, सादर भक्त ग्रहण करते।
आत्म सिद्धि के हेतु भविजन, रात-दिवस सुमिरन करते॥2॥

ॐ ह्रीं मिथ्यामतनिवारक-आत्मसिद्धिकारक-श्री-अजितनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यः प्रादुरासीत्-प्रभु-शक्ति-भूम्ना,
भव्याऽऽ शयालीन-कलङ्क-शान्त्यै।
महामुनिर्मुक्त - घनोपदेहो,
यथाऽरविन्दाभ्युदयाय भास्वान्॥3॥

अन्तरमन की कर्म कालिमा, वाणी तेरी दूर करें।
गज चिन्हांकित अजितनाथ की, शिक्षा गुण भरपूर भरें॥
मेघ युक्त हो सूरज जैसे, अपनी किरणें फैलाता।
परस मात्र से सरस कमल ज्यों, पल भर में ही खिल जाता॥3॥

ॐ ह्रीं मोक्षमार्गप्रकाशक-श्री-अजितनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

येन प्रणीतं पृथु-धर्म-तीर्थं,
ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम्।
गाङ्गं ह्रदं चन्दन-पङ्क-शीतं,
गज-प्रवेका इव घर्म-तप्ताः॥4॥

धर्म तीर्थ के प्रखर प्रणेता, मोक्षमार्ग प्रभावक हो।
सर्व जीव के दुख हर्ता प्रभु, भव्य जीव के तारक हो॥
ग्रीष्म काल की तीव्र ताप से, पीड़ित गज क्लेशित होते।
चन्दन-सी शीतलता पाने, गंगाजल स्नपित होते॥4॥

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थ-प्रणेता-श्री-अजितनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स ब्रह्मनिष्ठः सम-मित्र-शत्रु-
र्विद्या-विनिर्वान्त-कषाय दोषः।
लब्धात्मलक्ष्मीरजितोऽजितात्मा,
जिन-श्रियं मे भगवान् विधत्ताम्॥5॥

ब्रह्मनिष्ठ हो शत्रु मित्र में, समता धरकर पार हुए।
आत्म ज्ञान व आत्म ध्यान से, क्रोध क्षोभ सब नाश किये॥

अनंत चतुष्टय प्राप्त किया सब, इन्द्रिय पर जय पाया है।
अरहन्त गुणों से भूषित जिनवर, अजितनाथ मन भाया है॥5॥

ॐ ह्रीं समताधारक-कर्मनिवारक-अजितनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

धर्मधुरा धारी प्रभु, धर्म बढ़ावें रोज।
अजितनाथ भगवान के बन्दूँ चरण सरोज॥

ॐ ह्रीं श्री-अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

3. श्री संभवनाथ भगवान की जय

त्वं शम्भवः संभव-तर्ष-रोगैः,
संतप्यमानस्य जनस्य लोके।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो,
वैद्यो यथाऽनाथरुजां प्रशान्त्यै॥1॥

भव्य जीव संसारी प्राणी, भोग रोग से घिरा हुआ।
दीन अनाथ का कर्मोदय से, सुख का मुख तो फिरा हुआ॥
ऐसे जो संतप्त जीव हैं, उसके उद्धारक मुनिराज।
संभव भव के रोग हरण में, निष्कांक्षी वैद्यक ऋषिराज॥1॥

ॐ ह्रीं भवरोगहराय श्री-संभवनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनित्यमत्राणमहंक्रियाभिः,
प्रसक्त-मिथ्याऽध्यवसाय-दोषम्।
इदं जगज्जन्म-जराऽन्तकार्तं,
निरञ्जनां शान्तिमजीगमस्त्वम्॥2॥

मैं और मेरा बुद्धि लिए जो, मिथ्या भाव से दूषित हैं।
जन्म जरा मृत्यु के कारण, जगति में सब पीड़ित हैं॥
है अनित्य अशरण संसारा, उसमें उलझा रहता हूँ।
संभवनाथ की शरण में आकर, सुलझा सुलझा रहता हूँ ॥2॥

ॐ ह्रीं अहंकार-ममकारभाव-विनाशनाय श्री-संभवनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शतह्रदोन्मेष-चलं हि सौख्यं,
तृष्णाऽऽमयाऽप्यायन-मात्र-हेतुः।
तृष्णाभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं,
तापस्तदायासयतीत्यवादीः॥3॥

विद्युत की चमचम से चंचल, इन्द्रिय सुख का भान रहा।
तृष्णा से भव रोग बढ़ाने, करता मैं सम्मान रहा॥
पर पदार्थ के आकर्षण में, अपने को परेशान किया।
ऐसा संभव श्री जिनवर ने, हमको सम्यग्ज्ञान दिया॥3॥

ॐ ह्रीं इन्द्रियातीत-सुखानुभवाय श्री-संभवनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतू,
बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः
स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं,
नैकान्तदृषेस्त्वमतोऽसि शास्ता॥4॥

बंध मोक्ष और उसका कारण, साथ निवारण ज्ञान दिया।
जीव कर्म का नीर क्षीर सम, बंधन हैं यह भान हुआ॥
स्याद्वाद अनेकान्त दृष्टि से, सुन्दर-सा व्याख्यान किया।
संभवनाथ की वाणी से ही, तत्वारथ का ज्ञान हुआ॥4॥

ॐ ह्रीं तत्वज्ञानप्रकाशकाय श्री-संभवनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः,
स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशो-ज्ञः।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो,
ममार्य! देयाः शिवतातिमुच्चैः॥5॥

जिनवर तेरे गुण वर्णन को, इन्द्र भी असमर्थ रहा।
मैं अज्ञानी गुण गाने को, किञ्चित ना समर्थ हुआ॥
अन्तर्मन की दिव्य प्रेरणा, पाद पद्म स्तुति करता।
निर्मल अतिशय उच्च सुखों को, पाने तब भक्ति रचता॥5॥

ॐ ह्रीं अपवर्गसुखप्राप्ताय श्री-संभवनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

संभव सम भव अन्त हो, पाऊँ सिद्ध स्वभाव।
भावों में समभाव हो, तजूँ विकारी भाव॥

ॐ ह्रीं श्री-संभवनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

4. श्री अभिनन्दननाथ भगवान की जय

गुणाऽभिनन्दादभिनन्दनो भवान्,
दयावधूं क्षान्ति-सखीमशिश्रियत्।
समाधि-तन्त्रस्तदुपोपपत्तये,
द्वयेन नैर्ग्रन्थ्य-गुणेनचायुजत्॥1॥

गुण रत्नों से भूषित जिनवर, अभिनन्दन स्वामी भगवान।
दया वधु और क्षमा सखि के, आश्रित हैं तब आत्म महान॥
आत्मधर्म का ध्यान किया और, भाव समाधि को धारा।
द्वय निर्ग्रन्थ पने को पाकर, निज आतम को शृंगारा॥1॥

ॐ ह्रीं दयाक्षमा-गुण-विभूषिताय श्री-अभिनन्दननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च,
ममेदमित्याऽभिनिवेशिक-ग्रहात्।
प्रभंगुरे स्थावर-निश्चयेन च,
क्षतं जगत्-तत्त्वमजिग्रहद्भवान्॥2॥

जड़ चेतन से बंधकर प्राणी, घोर महा दुख पाता है।
मैं मेरे का भाव धरे से, मिथ्या भाव भ्रमाता है॥
नाशवान अस्थिर वस्तु को, स्थिर मान के मोह करे।
करुणाधर कर अभिनन्दन जी, सप्त तत्व संबोध करे॥2॥

ॐ ह्रीं तत्वज्ञान-प्रतिबोधकाय श्री-अभिनन्दननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षुदादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थिति-
र्न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाल्प-सौख्यतः।

ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो
रितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत्॥3॥

भूख प्यास के प्रतिकार को, भोजन पान ग्रहण करता।
पंचेन्द्रिय के विषय भोगकर, जीव कभी न सुख वरता॥
तन न तन धारी आतम की, स्थिति ना उद्धार हुआ।
ऐसा उद्बोधन दे प्रभुवर ने, जगति का उपकार किया॥3॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहिताय श्री-अभिनन्दननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जनोऽतिलोलोऽप्यनुबन्धदोषतो,
भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते।
इहाऽप्यमुत्राऽप्यनुबन्धदोषवित्,
कथं सुखे संसजतीति चाऽब्रवीत्॥4॥

विषयासक्ति मोही प्राणी, भय से पाप तजा करता।
धर्म कर्म करता रहता और, पुण्य पाप वरता रहता॥
सम्यग्ज्ञानी इह परभव का, दोष सदा जाना करता।
इसमें ना फँसना है मुझको, ऐसा वह माना करता॥4॥

ॐ ह्रीं इन्द्रियासक्तिभाव-निवारकायै श्री-अभिनन्दननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स चाऽनुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्,
तृषोऽभिवृद्धि सुखतो न च स्थितिः।
इति प्रभो लोक-हितं यतो मतं,
ततो भवानेव गतिः सतां मतः॥5॥

आसक्ति का भाव जीव को, निशदिन संतापित करता।
तृष्णा की वो आग लगाकर, सुख से विस्थापित करता॥
इसलिए प्रभु अभिनन्दन ने, भव उद्धारक ज्ञान दिया।
भव्य जीव सज्जन पुरुषों ने, शरणभूत कल्याण किया॥5॥

ॐ ह्रीं शरणागत-वत्सलाय श्री-अभिनन्दननाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

अभिनन्दन वन्दन करूँ, क्रन्दन कर्म नशाय।
जग बन्धन को तोड़कर, सिद्धालय को पाय॥

ॐ ह्रीं श्री-अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

5. श्री सुमतिनाथ भगवान की जय

अन्वर्थसंज्ञः सुमतिर्मुनिस्त्वं,
स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम्।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति,
सर्व-क्रिया-कारक-तत्त्व-सिद्धिः॥1॥

सुमतिनाथ ने सुमति पाकर, सम्यक मत विस्तार किया।
आत्म ज्ञान से युक्ति युक्त हो, तत्वारथ स्वीकार किया॥
सर्व क्रिया कारक तत्वों की, तेरे मत से सिद्धि हैं।
अनेकान्त ही समन्वयक हैं, बाकी मत मिथ्या दृष्टि हैं॥1॥

ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञान-उद्योतनाय श्री-सुमतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं,
भेदाऽन्वयज्ञानमिदं हि सत्यम्।
मृषोपचारोऽन्तरस्य लोपे,
तच्छेषलोपोऽपि ततोऽनुपाख्यम्॥2॥

एक वही है नेक वही है, भेद वही अभेद वही।
पर्यायों से नेक वही, पर द्रव्यापेक्षा एक वही॥
द्रव्य बिना पर्याय टिके ना, पर्याय बिना ना द्रव्य रहे।
भेदाभेद उभय स्वरूपी, काल अवस्थित जिनमत कहे॥2॥

ॐ ह्रीं द्रव्य-पर्याय-विवेचकाय सुमतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सतः कथंचित् तदसत्त्व-शक्तिः,
खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम्।

सर्व-स्वभाव-च्युतमप्रमाणं,
स्व-वाग्-विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत्॥3॥

सत् रूपी जो आत्म तत्व है, अपनी शक्ति के कारण।
परापेक्षा असत् रूप जो, होकर भी ना हो धारण॥
पुष्पवृक्ष में अस्ति सिद्ध है, नभ में नास्ति रूप अहो।
निज वचनों के विमुख रहे वह, अन्यभाव दुख रूप कहो॥3॥

ॐ ह्रीं सत्स्वरूपाय श्री-सुमतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति,
न च क्रिया-कारकमत्र युक्तम्।
नैवाऽसतो जन्म सतो न नाशो,
दीपस्तमः पुद्गलभावतोऽस्ति॥4॥

एक रूप ना नित्य मान ना, क्रिया-कारक युक्त कहा।
इन भावों से जैसा वैसा, उत्पाद व्यय संयुक्त रहा॥
ना जन्में ना विनशे जगमें, ऐसा ज्ञान प्रगट कर लो।
तम हो चाहे उज्ज्वल किरणें, पुद्गल पर्याये समझो॥4॥

ॐ ह्रीं उत्पादव्यय धोव्ययुक्ताय-श्री-सुमतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधिर्निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ,
विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं,
मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ॥5॥

अनेकान्त है एक मथानी, विधि निषेध से मन्थन है।
मुख्य गौण करना वक्ता के, इच्छा रूप ही चिन्तन है॥
सुमतिनाथ जिनवर की शैली, तत्वों का प्रतिपादन है।
तेरी भक्ति बुद्धि शुद्धि का, साक्षात् सम्पादन है॥5॥

ॐ ह्रीं स्याद्वाद-अनेकान्त-धर्म प्रतिपादकाय श्री-सुमतिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

मिथ्यावाद को दूर कर, स्याद्वाद प्रगटाय।
दुर्बुद्धि दुर्ध्यान तज, सुमतिनाथ शिर नाय।।

ॐ ह्रीं श्री-सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

6. श्री पद्मप्रभु भगवान की जय

(हे दीन बंधु श्रीपति)

पद्मप्रभः पद्म-पलाश-लेश्यः,
पद्मालयाऽऽलिङ्गितचारुमूर्तिः।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणां,
पद्माऽऽकराणामिव पद्मबन्धुः।।1।।

हे पद्म प्रभु पद्म, प्रभा के सदाधारी।
हे चारुमूर्ति समवशरण, के ही विहारी।।
हे भव्य जीव को, चरण सूर्य किरण है।
मन पद्म सद्य खिल रहा, जो तेरी शरण है।।1।।

ॐ ह्रीं चारुमूर्तये श्री-पद्मप्रभदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बभार पद्मां च सरस्वतीं च,
भवान् पुरस्तात् प्रतिमुक्तिलक्ष्म्याः।
सरस्वतीमेव समग्र-शोभां,
सर्वज्ञ-लक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः।।2।।

दिव्य ध्वनि रूप ले, माँ भारती आई।
मोक्ष गमन पूर्व, सदा आरती गाई।।
सर्व शोभा धार रहे, समवशरण में।
कर्म जला मोक्ष गए, एक क्षण में।।2।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनि रूपाय श्री-पद्मप्रभुदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते,
बालाऽर्क-रश्मिच्छविराऽलिलेप।

नराऽमराऽऽकीर्ण-सभां प्रभावच्-
छैलस्य पद्माऽऽभमणेः स्व-सानुम्॥3॥

लाल वर्ण बाल, सूर्य सी प्रभा लिए।
चमक रहे चतुर्मुखी, रूप विभा लिए।।
घेर लिए देव गण, से भरी सभा।
ज्यों धरा घेर रहा, सूर्य की प्रभा।।3।।

ॐ ह्रीं समवशरण विराजित-चतुर्मुखजिनाय श्री-पद्मप्रभुदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नभस्तलं पल्लवयन्निव त्वं,
सहस्रपत्राऽम्बुज - गर्भचारैः।
पादाऽम्बुजैः पातित-मार-दर्पो,
भूमौ प्रजानां विजहर्थ भूत्यै॥4॥

नभतल पल्लव से परिपूरित, स्वर्ण कमल की रचना है।
उसके ऊपर चलते जिनवर, लखते मेरे नयना हैं।।
कदम कदम पर कमल रचा था, जब प्रभु ने विहार किया।
सुर नर पशु गति के जीवों को, धर्म देय उपकार किया।।4।।

ॐ ह्रीं चरण-कमलाधिपतये श्री-पद्मप्रभुदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुणाऽम्बुधेर्विप्रुषमप्यजस्रं,
नाऽऽखण्डलः स्तोतुमलं तवर्षेः।
प्रागेव मादृक् किमुताऽतिभक्ति,
र्मां बालमालाऽऽपयतीदमित्थम्।।5।।

तेरे गुण सागर को जिनवर, देव इन्द्र ना गा सकता।
मैं अज्ञानी मतिहीन हूँ, गुण गौरव क्या कह सकता।।
फिर भी मेरी अन्तर्शक्ति, बालक सम बनकर आई।
शब्दों का आश्रय ले करके, मन प्रेरित हो हर्षाई।।5।।

ॐ ह्रीं प्रवचन-वाचस्पतये श्री-पद्मप्रभुदेवाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पद्मासन बैठे प्रभू, आतम पद्म खिलाय।
पद्म खिले निज ध्यान का, पद्म प्रभु सिर नाय॥

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

7. श्री सुपार्श्वनाथ भगवान की जय

स्वास्थ्यं यदाऽऽत्यन्तिकमेष पुंसां,
स्वार्थो न भोगः परिभंगुराऽऽत्मा।
तृषोऽनुषङ्गान् न च तापशान्ति,
रितीदमाख्यद् भगवान् सुपार्श्वः॥1॥

अविनाशी अविकारी आतम, कर्म रहित चिन्मय सुख धाम।
यही प्रयोजन जीव तत्व का, क्षण भंगुर सब भोग विराम॥
भोगों की तृष्णा बढ़ती है, चाह दाह न शान्त हुए।
जो भी इन्द्रिय भोग में फँसता, नाथ कहे वह क्लान्त हुए॥1॥

ॐ ह्रीं इन्द्रीयातीत-चिदानंदाय श्री-सुपार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजंगमं जङ्गम-नेय-यंत्रं,
यथा तथा जीव-धृतं शरीरम्।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च,
स्नेहो वृथाऽत्रेति हितं त्वमाख्यः॥2॥

जड़ न चलता बुद्धि पूर्वक, उसे चलावे जीव सदा।
ऐसा ही जड़ तन है सारा, चेतन जीव चलावे मुदा॥
सन्तापित नश्वर गन्दापन, उसका न अनुराग करो।
व्यथा समय उसको दे करके, न नरभव बर्बाद करो॥2॥

ॐ ह्रीं जड़तत्व-विमुक्ताय श्री-सुपार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अलङ्घ्यशक्ति - र्भवितव्यतेयं,
हेतु-द्वयाऽऽविष्कृत-कार्य-लिङ्गा।

अनीश्वरो जन्तुरहंक्रियाऽर्त:,
संहत्य कार्येष्विति साध्ववादी:॥3॥

कर्मोदय न लाँघ सकेगा, उसकी शक्ति अद्‌भुत है।
बाह्याभ्यन्तर द्वय कारण से, कार्य सदा ही उद्‌भुत है॥
शुभ कर्मों से कार्य बने पर, अहंकार बाधा डाले।
नाथ सुपारस बात बताकर, कर्मोदय सब मम टाले॥3॥

ॐ ह्रीं सर्वकर्म-विमुक्ताय श्री-सुपार्श्वनाथाय नम: अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो,
नित्यं शिवं वाञ्छति नाऽस्य लाभ:।
तथाऽपि बालो भय-काम-वश्यो,
वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादी:॥4॥

भयकारी मृत्यु से डरता, पर छुटकारा ना मिलता।
सिद्धशिला चाहे यह प्राणी, वो भी ना उसको मिलता॥
जन्म मरण मद काम क्रोध से, सदा दुखी रहता प्राणी।
आराधन कर निज जिनत्व की, नाथ सुपारस की वाणी॥4॥

ॐ ह्रीं सर्वभय-मुक्ताय श्री-सुपार्श्वनाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता,
मातेव बालस्य हिताऽनुशास्ता।
गुणाऽवलोकस्य जनस्य नेता,
मयाऽपि भक्त्या परिणूयसेऽद्य॥5॥

सर्व तत्व के ज्ञाता दृष्टा, दोष रहित जिनदेव महान।
माता सम हितकारी माने, तव उपदेश करे कल्याण॥
मोक्ष मार्ग के जन गण नेता, सत् पथ दर्शक इष्ट जिनेश।
भक्ति पूर्वक स्तुति करता, पाने तेरा मोक्ष प्रदेश॥5॥

ॐ ह्रीं सतपथदर्शकाय श्री-सुपार्श्वनाथाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

वीतराग निज ज्ञान में, झलके तीनों लोक।
तत्व प्रकाशक महामुनि, चरण सुपारस धोक॥

ॐ ह्रीं श्री-सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नम: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

8. श्री चन्द्रप्रभु भगवान की जय

चन्द्रप्रभं चन्द्र-मरीचि-गौरं,
चंन्दं द्वितीयं जगतीव कान्तम्।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम्॥1॥

चन्द्र किरण सम शुक्ल वर्ण के, तन धारी जिनवर भगवान।
दिव्य चन्द्र सम उज्ज्वल मनहर, कान्ति मई है केवलज्ञान॥
कर्म रिपु को जीत जिनेश्वर, चन्द्रशिला पर वास किया।
ऋषि मुनियों ने वन्दन करके, निज आतम प्रकाश किया॥1॥

ॐ ह्रीं ईषत्प्रागभार-चन्द्रशिला-स्थिताय श्री-चन्द्रप्रभु-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेष-भिन्नं,
तमस्तमोऽरेरिव रश्मिभिन्नम्।
ननाश बाह्यं बहु मानसं च,
ध्यान-प्रदीपाऽतिशयेन भिन्नम्॥2॥

सूर्य किरण की तीव्र प्रभा से, अंधकार नश जाता है।
चन्द्र नाथ की चन्दकृपा से, कर्म तिमिर छट जाता है॥
शुक्ल ध्यान की अद्भुत महिमा, निज आतम में प्रखर हुई।
केवलज्ञान की दिव्य प्रभा से, प्रमुदित होकर निखर गई॥2॥

ॐ ह्रीं शुक्लध्यानपवित्राय श्री-चन्द्रप्रभुजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता,
वाक्सिंह-नादैर्विमदा बभूवुः।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगण्डा,
गजा यथा केसरिणो निनादैः॥3॥

सिंह नाद जब करता वन में, हस्ति मस्ती खो देता।
गोल कपोल से मद जो झरता, वो भी क्षण में खो देता॥

हे नाथ! आपके दिव्य वचन से, मिथ्या तम सब दूर हुआ।
सम्यग्ज्ञान जगत में फैला, धर्म ध्यान भरपूर हुआ॥3॥

ॐ ह्रीं धर्मध्यान-विस्तारकाय श्री-चन्द्रप्रभु जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाऽद्भुत-कर्मतेजाः।
अनन्त-धामाऽक्षर-विश्वचक्षुः,
समन्तदुःख-क्षय-शासनश्च॥4॥

सर्व लोक के हितकारी हो, परमेष्ठी पद के धारी।
सर्व जीव को निज भाषा में, उपदेश दिए विस्मय कारी॥
अविनाशी ज्योतिर्मय जिनवर, विश्व चक्षु बन निरख रहे।
दुःख नाशक हे सुखकारक प्रभु, तेरे दरश को तड़फ रहे॥4॥

ॐ ह्रीं सर्वभाषा-प्रबोधकाय श्री-चन्द्रप्रभुजिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषाऽभ्र-कलङ्क-लेपः।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान् मनो मे॥5॥

भव्य जीव के हृदय कमल को, विकसाने वाले चन्द्रेश।
राग द्वेष से रहित आप हो, त्रिभुवन ज्ञायक हे अखिलेश॥
ज्ञान कोश से न्याय वचन की, सुन्दर माला बनवाई।
मन मन्दिर को पावन कर दो, कर्म रहित जिन सुखदाई॥5॥

ॐ ह्रीं ज्ञायकस्वरूपाय श्री-चन्द्रप्रभु-जिनाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

अखिलेश्वर हे महाव्रती, तीर्थ प्रवर्तक आप।
धवल वर्ण तन आत्मा, चन्द्र प्रभु निष्पाप॥

ॐ ह्रीं श्री-चन्द्रप्रभु-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

9. श्री पुष्पदन्त भगवान की जय

एकान्तदृष्टि-प्रतिषेधि तत्त्वं,
प्रमाण-सिद्धं तदतत्-स्वभावम्।
त्वया प्रणीतं सुविधे! स्वधाम्ना,
नैतत्समालीढ-पदं त्वदन्यैः॥1॥

पुष्पदन्त जी जिनवर प्यारे, मत एकान्त निषिद्ध किया।
अनेकान्त के पोषक होकर, तत्व प्रमाण से सिद्ध किया॥
विधि निषेध से वस्तु तत्व का, सुन्दर सा व्याख्यान किया।
अन्य धर्म में किसी रूप में, अनुभव न सद्ज्ञान दिया॥1॥

ॐ ह्रीं विधिनिषेधश्च-ज्ञाता श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तदेव च स्यान् न तदेव च स्यात्,
तथाप्रतीतेस्तव तत्कथञ्चित्।
नात्यन्तमन्यत्वमनन्यता च,
विधेर्निषेधस्य च शून्य-दोषात्॥2॥

जिनमत अस्ति नास्ति स्वरूपा, भिन्न भिन्न अपेक्षा से।
स्वपर चतुष्टय के कारण से, सत् असत् अनुप्रेक्षा से॥
ना मानो तुम सदा सर्वदा, भेदा-भेद पना ज्ञानी।
सुविधि ज्ञान से समझो उसको, शून्य दोष ना हो प्राणी॥2॥

ॐ ह्रीं अस्तिनस्तिरूप-धर्म-प्रकाशकाय श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्यं तदेवेदमिति प्रतीते-र्न,
नित्यमन्यत्-प्रतिपत्ति-सिद्धेः।
न तद्विरुद्धं बहिरन्तरङ्ग,
निमित्त-नैमित्तिक-योगतस्ते॥3॥

जो पहले था आज वही है, जो दिखता वह कल ना था।
ये प्रतिती ही नित्या नित्या, जैनागम सिद्धि करता॥

बाह्याभ्यन्तर कारण जो हैं, निमित्त उपादान कारण।
नहीं विरोधाभास है किंचित, समझो जानो कर धारण॥3॥

ॐ ह्रीं निमित्तोपादन-प्रतिपादकाय श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकमेकं च पदस्य वाच्यं,
वृक्षा इति प्रत्ययवत् प्रकृत्या।
आकाङ्क्षिणः स्यादिति वै निपातो,
गुणाऽन-पेक्षे नियमेऽपवादः॥4॥

शब्द कहो या पद वाचक है, प्रगट पदार्थ ही वाच्य कहा।
एकानेक जो वस्तु रूप है, ऐसा वृक्ष ही साध्य कहा॥
मनगत शब्द स्वभाव रूप ही, अर्थ बोध करवाता है।
गुणपेक्षा एकान्त कथन ही, बाधक बनकर आता है॥4॥

ॐ ह्रीं निश्चय-व्यवहारधर्म-उद्घोषकाय श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुण-प्रधानार्थमिदं हि वाक्यं,
जिनस्य ते तद् द्विषतामपथ्यम्।
ततोऽभिवन्द्यं जगदीश्वराणां,
ममापि साधोस्तव पादपद्मम्॥5॥

मुख्य गौण से वाक्य सदा ही, अपना अर्थ बताता है।
"स्यात्" शब्द से सज्जित वक्ता, द्वयार्थ बोध कराता है॥
वस्तु स्वरूप झलकाने वाले, पुष्पदन्त प्रभु तुम्हें प्रणाम।
मोक्ष मार्ग के प्रखर प्रवक्ता, देव इन्द्र करते सम्मान॥5॥

ॐ ह्रीं शतेन्द्रअर्चिताय श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

भव भंजक भगवान हैं, पुष्पदंत शुभ नाम।
मगर चिह्न तन श्वेत है, शत शत करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

10. श्री शीतलनाथ भगवान की जय

न शीतलाश्चन्दनचन्द्ररश्मयो,
न गाङ्गमम्भो न च हारयष्टयः।
यथा मुनेस्तेऽनघवाक्यरश्मयः,
शमाम्बुगर्भाः शिशिरा विपश्चिताम्॥1॥

शीतल चन्दन चन्द्र रश्मियाँ, न गंगा का जल शीतल।
ना मोती की माला शीतल, वाणी तेरी है शीतल॥
पाप रहित निर्दोष वचन तो, मुनियों द्वारा मुखरित हैं।
शान्त निराकुल सुख देती वो, भेद ज्ञान से प्रगटित है॥1॥

ॐ ह्रीं आत्मशान्ति-प्रदायकाय श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखाऽभिलाषाऽनल-दाह-मूर्च्छितं,
मनो निजं ज्ञानमयाऽमृताम्बुभिः।
व्यदिध्यपस्त्वं विष-दाह-मोहितं,
यथा भिषग्मंत्र-गुणैः स्व-विग्रहम्॥2॥

इन्द्रिय सुख की अभिलाषा को, तप अग्नि से जला दिया।
आत्म ज्ञान की अमृतधारा, देकर उसको जगा दिया॥
नाग डसे तो विष पूरित हो, मूर्च्छामय यह तन होता।
मांत्रिक के मंत्रों द्वारा ज्यों, यह प्राणी चेतन होता॥2॥

ॐ ह्रीं इन्द्रियसुख-विमुक्ताय श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व-जीविते काम-सुखे च तृष्णया,
दिवा श्रमाऽऽर्ता निशि शेरते प्रजाः।
त्वमार्य! नक्तं-दिवमप्रमत्तवा,
नजागरेवाऽऽत्म-विशुद्ध-वर्त्मनि॥3॥

काम भोग में रचे पचे जो, नर हरदम पीड़ित रहते।
उसको पाने निशदिन प्राणी, श्रम करते थकते रहते॥

आत्म शुद्धि के प्रबल भाव से, तज प्रमाद जागृत रहते।
जिनवर शीतलनाथ सदा ही, मम आतम उपकृत करते।।3।।

ॐ ह्रीं प्रमाद-रहिताय श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपत्य-वित्तोत्तर-लोक-तृष्णया,
तपस्विनः केचन कर्म कुर्वते।
भवान् पुनर्जन्म-जरा-जिहासया,
त्रयीं प्रवृत्तिं समधीरवारुणत्।।4।।

सम्यक श्रद्धा के विन प्राणी, धन सुत सुख वांछा करते।
कर्मों के ही वशीभूत हो, नाना विध कांछा करते।।
जन्म जरा मृत्यु का नाशक, आप सदा ही तप करते।
मन वच तन की चंचलता तज, रत्नत्रय अनुभव करते।।4।।

ॐ ह्रीं निदानवंध-रहिताय श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वमुत्तम-ज्योतिरजः क्व निर्वृतः,
क्व ते परे बुद्धि-लवोद्धव-क्षताः।
ततः स्व निःश्रेयस-भावनापरै-
र्बुध-प्रवेकैर्जिन-शीतलेड्यसे।।5।।

उत्तम ज्योति पुंज के धारक, पुनर्जन्म से रहित हुए।
आप समा ना कोई जग में, ज्ञान गर्व से रहित रहे।।
मोक्ष मार्ग अनुरागी गणधर, आराधन तेरी करते।
शीतलनाथ की स्तुति करते, मोक्ष निकेतन को वरते।।5।।

ॐ ह्रीं पुनर्जन्म-रहिताय श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

धर्मामृत का दान दे, शीतल शिवपद पाय।
मम आतम शीतल करे, छोड़े विषय कषाय।।

ॐ ह्रीं श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

11. श्री श्रेयांसनाथ भगवान की जय

श्रेयान् जिनः श्रेयसि वर्त्मनीमाः,
श्रेयः प्रजाः शासदजेयवाक्यः।
भवांश्चकासे भुवनत्रयेऽस्मिन्,
नेको यथा वीतघनो विवस्वान्॥1॥

श्रेयनाथ ने श्रेय वचन से, श्रेयस्कर उपदेश दिया।
संसारी प्राणी ने सुनकर, अपने हित संदेश लिया॥
तीन लोक में आप अकेले, दिव्य सूर्य से चमक रहे।
जिनवर श्री श्रेयांसनाथ जी, समवशरण में दमक रहे॥1॥

ॐ ह्रीं श्रेयमार्गं सिद्धिदायक श्री–श्रेयांसनाथाय–नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विधिर्विषक्त–प्रतिषेधरूपः,
प्रमाणमत्राऽन्यतरत्प्रधानम्।
गुणोऽपरो मुख्य–नियामहेतु–र्नयः,
स दृष्टान्तसमर्थनस्ते॥2॥

प्रामाणिक है ज्ञान आपका, सर्व ज्ञान में मुख्य रहा।
विधि निषेध के रूप में रहकर, वक्ता का मन्तव्य कहा॥
वस्तु में जो नेक धर्म हैं, मुख्य गौण कर–कर कहता।
अभिप्राय को जान अरे नर, सर्व द्वन्द सुख से टलता॥2॥

ॐ ह्रीं अनेकान्तधर्म–प्रतिपादकाय श्री–श्रेयांसनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो,
गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते।
तथाऽरिमित्रानुभयादि–शक्तिः,
द्वयाऽवधिः कार्यकरं हि वस्तु॥3॥

जिनके बारे में चर्चा है, मुख्य विवक्षित कहलाता।
अविवक्षित गौण रूप है, जिन दर्शन यह बतलाता॥
शत्रु मित्र अरुँ अनुभय शक्ति, हर वस्तु में होती है।
मर्यादा का आश्रय लेकर, कार्यकारी ही होती है॥3॥

ॐ ह्रीं सर्वविवाद–निरोधकाय श्री–श्रेयांसनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टान्त-सिद्धावुभयोर्विवादे,
साध्यं प्रसिद्ध्येन्न तु तादृगस्ति।
यत्सर्वथैकान्त-नियामिदृष्टं,
त्वदीय-दृष्टिर्विभवत्यशेषे।।4।।

वादी हो या प्रतिवादी हो, वह विवाद में रहता है।
दृष्टांतों से निर्णय लेकर, साध्य सिद्ध को कहता है।।
दोनों की बातें बन जाती, एकान्तवाद मिट जाता है।
अनेकान्त ही सर्व मतों में, सहज भाव जुट जाता है।।4।।

ॐ ह्रीं शुभसंवाद-प्रदर्शकाय श्री-श्रेयांसनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकान्त-दृष्टि-प्रतिषेध-सिद्धि-
न्यायेषुभिर्मोहरिपुं निरस्य।
असि स्म कैवल्य-विभूति-सम्राट्,
ततस्त्वमर्हन्नसि मे स्तवाऽर्हः।।5।।

अनेकान्त के प्रतिपादन से, छट जाता एकान्त विचार।
न्याय वाण से मिथ्या भ्रम का, झट हो जाता है संहार।।
मोह शत्रु को विदितयोग ने, ध्यान शस्त्र से मार दिया।
समवशरण में दिव्य ध्वनि दे, भव्यों का उपकार किया।।5।।

ॐ ह्रीं ध्यानधुरन्धराय श्री-श्रेयांसनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

जय जय श्रेयांशम तव गुण पासं, कर्म विनाशं भक्ति करम्।
पावन पद बन्दों जय जिन चन्दों, कृपा करिंदो शान्ति प्रदम्।।

ॐ ह्रीं श्री-श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

12. श्री वासुपूज्य भगवान की जय

शिवासु पूज्योऽभ्यूदय-क्रियासु,
त्वं वासुपूज्यस्त्रिदशेन्द्र-पूज्यः।
मयाऽपि पूज्योऽल्प-धिया मुनीन्द्र,
दीपार्चिषा किं तपनो न पूज्यः।।1।।

कल्याणक शुभ पंच प्राप्त कर, वासुपूज्य जग पूज्य हुए।
देव नरेन्द्र ने सेवा करके, अपना जीवन धन्य किए॥
अल्पज्ञानी मैं भक्ति करता, श्रद्धा से भरकर जिनराज।
क्या दीपक की मन्द ज्योति से, नहीं पूजा जाता नभराज॥1॥

ॐ ह्रीं प्रथमबालब्रह्मचारी-तीर्थंकर श्री-वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

न पूजयाऽर्थस्त्वयि वीतरागे,
न निन्दया नाथ विवान्त-वैरे।
तथापि ते पुण्य-गुण-स्मृतिर्नः,
पुनातु चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः॥2॥

वीतराग हो वीतद्वेष हो, निज पूजा से भिन्न रहे।
वैर रहित निन्दा होने पर, नहीं आप प्रभु खिन्न हुए॥
फिर भी पुण्य गुण स्मरण से, पाप गलित हो जाता है।
वासुपूज्य की दिव्य प्रभा से, मन पवित्र हो जाता है॥2॥

ॐ ह्रीं निन्दा-स्तुति-रहिताय श्री-वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूज्यं जिनं त्वार्चयतो जनस्य,
सावद्य-लेशो बहु-पुण्य-राशौ।
दोषाय नालं कणिका विषस्य,
न दूषिका शीत-शिवाऽम्बुराशौ॥3॥

तेरी पूजा से हे जिनवर, पुण्यों का भण्डार भरें।
लेशमात्र भी दोष लगे तो, वो भी निज उपकार करें॥
विष की एक कणिका जैसे, जल सागर में आ जावे।
अपने दुर्गण को तजकर वह, जल सम होकर इतरावे॥3॥

ॐ ह्रीं सर्वसावद्यपाप-विनाशनाय श्री-वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यद्वस्तु बाह्यं गुण-दोष-सूते-
र्निमित्तमभ्यन्तर - मूलहेतोः।

अध्यात्म-वृत्तस्य तदङ्गभूत
मभ्यन्तरं, केवलमप्यलं ते।।4।।

बाह्य द्रव्य तो पुण्य पाप के, बन्धन का तो साधन है।
भीतर का जो परिणाम है, वही सत्य आराधन है।।
जैसा भाव प्रगट होता है, वैसा भव निर्मित होता।
पुण्य पाप या भाव शुभा शुभ, कर्मों से चिह्नित होता।।4।।

ॐ ह्रीं पुण्यपापभाव-प्रतिपादकाय श्री-वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्येतरोपाधि - समग्रतेयं,
कार्येषु ते द्रव्य-गतः स्वभावः।
नैवाऽन्यथा मोक्ष-विधिश्च पुंसां,
तेनाऽभिवन्द्यस्त्वमृषिर्बुधानाम्।।5।।

बाह्याभ्यन्तर के कारण ही, पूर्ण कार्य हो द्रव्य स्वभाव।
मोक्ष मार्ग भी द्वय कारण से, डाले साधन में प्रभाव।।
साधन के बिन साध्य न मिलता, यही आपने धर्म कहा।
ऋद्धिधारी गणधर स्वामी, वन्दन कर शिव शर्म लहा।।5।।

ॐ ह्रीं साध्य-साधन-समर्थकाय श्री-वासुपूज्याय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पाँचों कल्याणक महा, चम्पापुर में पाय।
बाल ब्रह्मचारी प्रथम, वासुपूज्य जिनराय।।

ॐ ह्रीं श्री-वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

13. श्री विमलनाथ भगवान की जय

य एव नित्य-क्षणिकादयो नया,
मिथोऽनपेक्षाः स्व-पर-प्रणाशिनः।
त एव तत्त्वं विमलस्य ते मुनेः,
परस्परेक्षाः स्व-परोपकारिणः।।1।।

नित्य क्षणिक एकान्त रूप नय, मिथ्यापेक्षा नाशक हैं।
एक दूजे से भिन्न रहे तो, एक दूजे के घातक हैं।।

विमलनाथ के विमल ज्ञान से, परस्पर सापेक्ष रहे।
एक दूजे का भला करें वे, यथार्थ रूप संक्षेप कहे॥1॥

ॐ ह्रीं परस्पर-सापेक्ष-धर्माय श्री-विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यथैकशः कारकमर्थ-सिद्धये,
समीक्ष्य शेषं स्व-सहाय-कारकम्।
तथैव सामान्य-विशेष-मातृका,
नयास्तवेष्टा गुण-मुख्य-कल्पतः॥2॥

एक दूजे के सहयोगी बन, कार्य सिद्धि में समर्थ हुए।
निज शक्ति तो उपादान है, और निमित्त तो व्यर्थ रहे॥
ऐसे ही सामान्य विशेषा, मुख्य गौण से बात कहे।
कार्य सिद्धि के हेतु जिनवर, आप कृपा मम साथ रहे॥2॥

ॐ ह्रीं कर्म-क्षयंकराय श्री-विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परस्परेक्षाऽन्वय-भेद-लिङ्गतः,
प्रसिद्ध-सामान्य-विशेषयोस्तव।
समग्रताऽस्ति स्व-पराऽवभासकं,
यथा प्रमाणं भुवि बुद्धि-लक्षणम्॥3॥

स्व-पर प्रकाशक ज्ञान आपका, जगति में प्रमाणिक है।
सामान्य कहे विशेष रहे वह, तव मत में स्वाभाविक है॥
पूर्ण रूप से स्व-पर प्रबोधक, ज्ञान सदा पावन करता।
विमलनाथ की विमल प्रभा से, मन सुरभित पावन रहता॥3॥

ॐ ह्रीं स्वपर-प्रकाशकाय श्री-विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विशेष्य-वाच्यस्य विशेषणं वचो,
यतो विशेष्यं विनियम्यते च यत्।
तयोश्च सामान्यमतिप्रसज्यते,
विवक्षितात्स्यादिति तेऽन्यवर्जनम्॥4॥

द्विधर्मी है वस्तु स्वरूपा, वाह्य विशेषण नाम दिया।
धर्म वाच्य विशेष हुआ तो, सामान्य विशेषण जान लिया॥

जिनमत की सुन्दर धारा में, अति प्रसंग का दोष नहीं।
स्यात् कथंचित् शब्दावली से, अविवक्षित में भी रोष नहीं।।4।।

ॐ ह्रीं दोषरहित-जिनमताय श्री-विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नयास्तव स्यात्पद-सत्य-लाञ्छिता,
रसोपविद्धाः इव लोह-धातवः।
भवन्त्यभिप्रेत-गुणा यतस्ततो,
भवन्तमार्याः प्रणता हितैषिणः।।5।।

विमलनाथ की दिव्य ध्वनि में, लक्षण सत् ही स्यात् कहा।
जैसे रस की धारा पाकर, लोह स्वर्ण सम गात रहा।।
आप समागम को पाकर के, आनन्दित हो जाते हैं।
आत्म हितैषी बनने को वे, नत मस्तक हो जाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं आत्म-कल्याणकाय श्री-विमलनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

बाहर भीतर स्वच्छता, विमल अमल गुणवन्त।
अर्घ चढ़ाकर पूजता, पाने पद अरहन्त।।

ॐ ह्रीं श्री-विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

14. श्री अनन्तनाथ भगवान की जय

अनन्त-दोषाशय-विग्रहो ग्रहो,
विषङ्गवान् मोहमयश्चिरं हृदि।
यतो जितस्तत्त्वरुचौ प्रसीदता,
त्वया ततोऽभूर्भगवाननन्तजित्।।1।।

दोष अनन्ता आतम में है, राग द्वेष मद मोह कहो।
तत्व रुचि सम्यग् दर्शन से, जीत लिए सब कर्म अहो।।
इसीलिए हे अव्यय भगवन, नाम अनन्त को पाये हो।
कर्मों का सब अन्त किया प्रभु, अनन्त चतुष्टय पाए हो।।1।।

ॐ ह्रीं दोषरहित सम्यग्दर्शन-उत्पन्नाय श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कषाय-नाम्नां द्विषतां प्रमाथिना,
मशेषयन्नाम भवानशेषवित्।
विशोषणं मन्मथ दुर्मदाऽऽमयं,
समाधि-भैषज्य-गुणैर्व्यलीनयत्॥2॥

क्रोध काम मद लोभ मोह ने, आतम को संताप दिया।
कलुषित करता जो आतम को, जड़ से उसका नाश किया॥
ध्यान समाधि की औषध ले, परमातम में लीन हुए।
वीतरागी निर्ग्रन्थ-पना पा, निजानन्द लवलीन हुए॥2॥

ॐ ह्रीं कषायमुक्ताय समाधिसम्पन्नाय श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिश्रमाऽम्बुर्भय-वीचि-मालिनी,
त्वया स्वतृष्णा-सरिदाऽऽर्य! शोषिता।
असङ्ग-घर्मार्क-गभस्ति-तेजसा,
परं ततो निर्वृति-धाम तावकम्॥3॥

श्रम के जल से भरी आत्मा, भय तरंग से बल खाए।
तृष्णा रूपी बहे सरिता, जग प्राणी गोते खाए॥
द्विधा संग से मुक्त हुए, और तप सूरज से सुखा दिया।
आत्म ओज को जागृत करके, तीन लोक को झुका दिया॥3॥

ॐ ह्रीं अन्तरंग-बहिरंगपरिग्रह-विमुक्ताय श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुहृत्त्वयि श्रीसुभत्वमश्नुते,
द्विषंस्त्वयि प्रत्ययवत्प्रलीयते।
भवानुदासीनतमस्तयोरपि,
प्रभो परं चित्रमिदं तवेहितम्॥4॥

हृदय कमल भक्ति से भरकर, गुण गौरव को गाता है।
स्वर्ग मोक्ष का सुख पाकर के, आनन्दित हो जाता है॥
द्वेष करे निन्दक मिथ्यात्वी, प्रत्यय सम विलीन हुआ।
राग द्वेष से मुक्त क्रियाएँ, विस्मय स्व तल्लीन हुआ॥4॥

ॐ ह्रीं जिनगुण-प्रतिपादकाय श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वमीदृशस्तादृश इत्ययं मम,
प्रलाप-लेशोऽल्प-मतेर्महामुने।
अशेष-माहात्म्यमनीरयन्नपि,
शिवाय संस्पर्श इवामृताम्बुधेः॥5॥

तव गुण मणिमय शब्द सजाकर, कहता आप ऐसे वैसे।
अल्पबुद्धि आलाप करूँ मैं, श्रद्धा से भरकर जैसे॥
तेरे गुण महिमा सागर के, परस मात्र से सुख होता।
भक्ति मुक्ति देती जग में, सिद्धशिला सम्मुख होता॥5॥

ॐ ह्रीं भक्तजन-वत्सलाय श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

सुख अनन्त पाया प्रभु, कर कर कर्मन अन्त।
अर्घ चढ़ा वन्दन करूँ, अनन्तनाथ भगवन्त॥

ॐ ह्रीं श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

15. श्री धर्मनाथ भगवान की जय

धर्म-तीर्थमनघं प्रवर्तयन्,
धर्म इत्यनुमतः सतां भवान्।
कर्म-कक्षमदहत्तपोऽग्निभिः,
शर्म शाश्वतमवाप शङ्करः॥1॥

धर्म तीर्थ पावन विकसाए, धर्मनाथ शुभ नाम है पाए।
तप अग्नि से कर्म जलाया, शाश्वत शिव शंकर गुण गाया॥1॥

ॐ ह्रीं धर्मतीर्थ-विकसिताय धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव-मानव-निकाय-सत्तमै,
रेजिषै परिवृतो वृतोबुधैः।
तारका-परिवृतोऽतिपुष्कलो,
व्योमनीवशश-लाञ्छनोऽमलः॥2॥

उत्तम देव नरों से सोहें, गणधर घेरे मन को मोहें।
जैसे निर्मल गगन में चन्दा, ताराओं से घिरे जिनन्दा॥2॥

ॐ ह्रीं समवशरण-विराजिताय श्री-धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रातिहार्य-विभवैः परिष्कृतो,
देहतोऽपि विरतो भवानभूत्।
मोक्षमार्ग - मशिषन्नरामरान्,
नाऽपि शासन-फलैऽषणाऽतुरः॥3॥

प्रातिहार्य लागे मनभावन, तन से निरत रहे प्रभु पावन।
मोक्ष मार्ग उपदेश के दाता, फल की इच्छा विरत विधाता॥3॥

ॐ ह्रीं प्रातिहार्य-युक्ताय श्री-धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काय-वाक्य-मनसां प्रवृत्तयो,
नाऽभवंस्तव मुनेश्चिकीर्षया।
नाऽसमीक्ष्य भवतः प्रवृत्तयो,
धीर तावकमचिन्त्यमीहितम्॥4॥

काय वचन मन किरिया छोड़ी, ना करने की इच्छा दौड़ी।
ऐसा न अज्ञान के कारण, धीर अचिन्त्य विस्मय का कारण॥4॥

ॐ ह्रीं मनवचनकाय-निरोधकाय श्री-धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मानुषीं प्रकृतिमभ्यतीतवान्,
देवतास्वपि च देवता यतः।
तेन नाथ परमाऽसि देवता,
श्रेयसे जिनवृष! प्रसीद नः॥5॥

मानवीय स्वभाव अतीता, सब देवों के देव नमीता।
धर्मनाथ परमोत्तम देवा, हो प्रसन्न कल्याण करेवा॥5॥

ॐ ह्रीं परमोन्नत-गुणाय-श्री धर्मनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

ध्वनि सुनि ध्रुवधाम की, धैर्य धर्म प्रगटाय।
ध्याता बन निज ध्येय को, धर्मनाथ सम ध्याय॥

ॐ ह्रीं श्री-धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

16. श्री शान्तिनाथ भगवान की जय

विधाय रक्षां परतः प्रजानां,
राजा चिरं योऽप्रतिम-प्रतापः।
व्यधात्पुरस्तात्स्वत एव,
शान्तिर्मुनिर्दयामूर्तिरिवाऽघशान्तिम्॥1॥

सर्व शत्रु से प्रजाजनों की, रक्षा करते आप महान।
दीर्घ काल तक पराक्रमी रह, राज किया षट्खण्ड जहान॥
स्वयंबोध को पाकर शान्ति, मुनियों का सु-भेष धरे।
दया मूर्ति कहलाने वाले, शान्तिनाथ जय घोष करे॥1॥

ॐ ह्रीं परमशान्ति-विधायकाय श्री-शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्रेण यः शत्रु-भयंकरेण,
जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम्।
समाधि-चक्रेण पुनर्जिगाय,
महोदयो दुर्जय-मोह-चक्रम्॥2॥

सर्व शत्रु को भय कारी था, चक्र आपका दिव्य विराट।
जिसके कारण जीतें राजा, बन गए चक्रवर्ती सम्राट॥
लिया समाधि चक्र आपने, कर्म बली को ललकारा।
मोह चक्र सबसे पहले आ, अपनी हार को स्वीकारा॥2॥

ॐ ह्रीं धर्मचक्राय श्री-शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राज-श्रिया राजसु राज-सिंहो,
रराज यो राजसुभोग-तंत्रः।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुनरात्म-तंत्रो,
देवाऽसुरोदार-सभे रराज॥3॥

राज्याश्रित जो भोग मनोहर, उसे भोगने में स्वाधीन।
चक्रवर्ती पद को पाकर के, हुए सुशोभित राज प्रवीन॥
आत्म ओज का उद्भव करके, केवल ज्ञान को पाया है।
शत इन्द्रों से पूजित जिनवर, समवशरण मन भाया है॥3॥

ॐ ह्रीं त्रिपद-धारकाय श्री-शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्मिन्नभूद्राजनि राज-चक्रं,
मुनौ दया-दीधिति-धर्म-चक्रम्।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देव-चक्रं,
ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम्!॥4॥

चक्रवर्ती के सम्मुख नृप गण, हाथ जोड़ अभिभूत रहे।
मुनि मुद्रा में दया किरण धर, धर्म चक्र वशीभूत रहे॥
अरिहन्त अवस्था पूज्य परम पद, देव चक्र गुणगान करें।
कर्म चक्र को ध्वंस किया प्रभु, तीन लोक प्रणाम करें॥4॥

ॐ ह्रीं सर्वजन-वन्दनीयाय श्री-शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वदोष-शान्त्या-विहिताऽऽत्मशान्तिः,
शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम्।
भूयाद्भव-क्लेश-भयोपशान्त्यै,
शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः॥5॥

दोष शान्त कर आत्म शक्ति को, पाए शान्तिनाथ भगवान।
जो तेरी शरणा आ जाता, पाता शान्ति सदा विश्राम॥
भय क्लेशों से मुक्त करो प्रभु, शान्ति सुधा रस बरसाओ।
शान्तिनाथ चरणाम्बुज पाकर, सुख सिन्धु में रम जाओ॥5॥

ॐ ह्रीं शान्ति-सुधारसाय श्री-शान्तिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

जय त्रिभुवन नायक आतम ज्ञायक, कर्म विनाशक शान्ति नमो।
जय शिवपुरवासी ज्ञान प्रकाशी, धर्म विकासी शान्ति नमों॥

ॐ ह्रीं श्री-शांतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

17. श्री कुन्थुनाथ भगवान की जय

कुन्थु-प्रभृत्यखिल-सत्त्व-दयैकतानः,
कुन्थुर्जिनो ज्वर-जरा-मरणोपशान्त्यै।
त्वं धर्म-चक्रमिह वर्तयसि स्म भूत्यै,
भूत्वा पुरा क्षितिपतीश्वर-चक्रपाणिः॥1॥

कुन्थुनाथ जी कुन्थु जीव पर, दया धर्म विस्तार किया।
जन्म जरा ज्वर रोग मरण को, शान्त किया उद्धार किया।।
राज्य अवस्था में रह करके चक्रवर्ती पद को पाया।
कर्म नाश कर धर्म चक्र ले, मोक्ष मार्ग को महकाया।।1।।

ॐ ह्रीं दयाधर्म-प्रकाशकाय श्री-कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णार्चिषः परिदहन्ति न शान्तिरासा,
मिष्टेन्द्रियार्थ-विभवैः परिवृद्धिरेव।
स्थित्यैव काय-परिताप-हरं निमित्त,
मित्यात्मवान्विषयसौख्य पराङ्मुखोऽभूत्।।2।।

तृष्णा डायन अग्नि ज्वाला, चारों ओर से धधक रही।
इन्द्रिय सुख का साधन पाकर, शान्त नहीं वह भड़क रही।।
तन संताप निवारण हेतु, निमित्त भूत ही कारण है।
विरत होय सब विषय भोग से, अद्भुत आप उदाहरण हैं।।2।।

ॐ ह्रीं तृष्णा-रहिताय श्री-कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाह्यं तपः परम-दुश्चरमाचरंस्त्व,
माध्यात्मिकस्य तपसः परिबृंहणार्थम्।
ध्यानं निरस्य कलुष-द्वय मुत्तरस्मिन्,
ध्यानद्वये ववृतिषेऽतिशयोपपन्ने।।3।।

बाह्य साधना अनशन आदि, दुर्धर तप स्वीकार किया।
आध्यात्मिक उपलब्धि हेतु, आर्त रौद्र परिहार किया।।
धर्मध्यान और शुक्लध्यान से, आतम को चमकाया है।
कुन्थुनाथ चक्री तीर्थंकर, कामदेव पद पाया है।।3।।

ॐ ह्रीं द्वादशतप-धारकाय श्री-कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हुत्वा स्व-कर्म-कटुक-प्रकृतीश्चतस्रो,
रत्नत्रयाऽतिशय-तेजसि जात-वीर्यः।
बभ्राजिषे सकल-वेद-विधेर्विनेता,
व्यभ्रे यथा वियति दीप्त-रुचिर्विवस्वान्।।4।।

हवन किया कटु चार घातियाँ, रत्नत्रय अतिशय द्वारा।
दरश ज्ञान सुख शक्ति पाकर, बही ज्ञान अमृतधारा॥
समवशरण में शोभित जिनवर, मानों ऐसे लगते हैं।
मेघों से ज्यों रहित गगन पर, सूर्य तेज से सजते हैं॥4॥

ॐ ह्रीं सर्वकर्म-विमुक्ताय श्री-कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्मान् मुनीन्द्र! तव लोक-पितामहाद्या,
विद्या-विभूति-कणिकामपि नाप्नुवन्ति।
तस्माद् भवन्तमजमप्रतिमेयमार्याः,
स्तुत्यं स्तुवन्ति सुधियः स्व-हितैकतानाः॥5॥

हे मुनीन्द्र! लौकिक सब देवा, आंशिक गुण ना पा सकते।
द्वादशांग से युक्त यतीश्वर, तेरे ध्यान में जा रमते॥
जन्म मरण से रहित आप हैं, त्रिभुवन स्वामी हितकारी।
तेरी पावन स्तुति करता, कुन्थुनाथ जिन अविकारी॥5॥

ॐ ह्रीं अविकारी-जिन श्री-कुन्थुनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

कर्म जहर निज आत्मा, मरण देय भटकाय।
भक्ति कुन्थुनाथ की, सर्व जहर विनशाय॥

ॐ ह्रीं श्री-कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

18. श्री-अरहनाथ भगवान की जय

गुण-स्तोकं सदुल्लङ्घ्य, तद्बहुत्व-कथा स्तुतिः।
आनन्त्यात्ते गुणा वक्तु-मशक्यास्त्वयि सा कथम्॥1॥

अल्प गुणों को लाँघ कर, करे अधिक की बात।
अनन्त गुणों के धारी हो, कैसे कहुँ गुण नाथ॥1॥

ॐ ह्रीं गुणवर्धनाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तथाऽपि ते मुनीन्द्रयस्य, यतो नामाऽपि कीर्तितम्।
पुनाति पुण्य-कीर्तेर्नस्ततो, ब्रूयाम किञ्चन॥2॥

फिर भी मुनिगण ने सदा, नाम गुणों को गाय।
परम पवित्र यशनाम से, कर्म बन्ध नश जाय।।2।।

ॐ ह्रीं परमयशाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लक्ष्मी - विभव - सर्वस्वं, मुमुक्षोश्चक्र - लाञ्छनम्।
साम्राज्यं सार्वभौमं ते, जरत् - तृणमिवाभवत्।।3।।

लक्ष्मी वैभव चक्र जो, था सारा साम्राज्य।
जीर्ण तीर्ण सम जान तज, पाया मुक्ति राज्य।।3।।

ॐ ह्रीं सर्व-वैभव-विरक्ताय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तव रूपस्य सौन्दर्यं, दृष्ट्वा तृप्तिमनापिवान्।
द्वयक्षः शक्रः सहस्राक्षो, बभूव बहु-विस्मयः।।4।।

अतिशय रूप को देखकर, तृप्त हुआ ना इन्द्र।
सहस्र नेत्र को धार कर, अवलोके मुख चन्द्र।।4।।

ॐ ह्रीं अतिशय-कामदेव-रूपाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहरूपो रिपुः पापः, कषाय - भट - साधनः।
दृष्टि-संपदुपेक्षाऽस्त्रैस्त्वया, धीर! पराजितः।।5।।

मोह रूप रिपु पाप है, योद्धा चार कषाय।
रत्नत्रय दिव्यास्त्र ले, जीता ध्यान लगाय।।5।।

ॐ ह्रीं रत्नत्रय-रूपाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कन्दर्पस्योद्धरो दर्पस्, त्रैलोक्य - विजयाऽर्जितः।
ह्रेपयामास तं धीरे, त्वयि प्रतिहतोदयः।।6।।

कामदेव को दर्प था, लूँगा सबको जीत।
निश्चल मन के पास आ, भागा हो लज्जित।।6।।

ॐ ह्रीं मन्मथ-जिताय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आयत्यां च तदात्वे च, दु:ख - योनिर्दुरुत्तरा।
तृष्णा-नदी त्वयोत्तीर्णा, विद्या-नावा विविक्तया॥7॥

इह-पर लोक के दु:ख को, पार करे ना कोय।
तृष्णा सर धी पोत ले, पार करे जिनराय॥7॥

ॐ ह्रीं इहपरलोक-सुखाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

अन्तकः क्रन्दको नृणां, जन्म-ज्वर-सखः सदा।
त्वा-मन्त-कान्तकं प्राप्य, व्यावृत्तः काम-कारतः॥8॥

जन्म जरा ज्वर रोग का, मित्र मरण रुलवाय।
जो तेरी शरणा लहें, जन्म जरा विनशाय॥8॥

ॐ ह्रीं जन्म-जरा-ज्वर-रोग-हराय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूषा-वेषायुध-त्यागि, विद्या-दम-दया-परम्।
रूपमेव तवा चष्टे, धीर! दोष-विनिग्रहम्॥9॥

अस्त्र शस्त्र भूषण रहित, ज्ञान दया दम धार।
रूप आपका कर रहा, मोह दोष क्षयकार॥9॥

ॐ ह्रीं जन्मजरामृत्यु-रोगहराय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समन्ततोऽङ्गभासां ते, परिवेषेण भूयसा।
तमो बाह्यमपाकीर्णमध्यात्म, ध्यान - तेजसा॥10॥

सर्वओर तन किरण से, अंधकार नश जाए।
आत्म ध्यान के तेज से, उज्ज्वलता छा जाए॥10॥

ॐ ह्रीं आत्मध्यानाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वज्ञ-ज्योतिषोद्भूत-, स्तावको महिमोदयः।
कं न कुर्यात् प्रणम्रं ते, सत्त्वं नाथ! सचेतनम्॥11॥

सर्वज्ञपने की ज्योत से, महिमा बढ़ती जाए।
ज्ञानी सारे झुक रहे, चित्त को उमगाए॥11॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानातिशयाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तव वागमृतं श्रीमत्, सर्व-भाषा-स्वभावकम्।
प्रीणयत्यमृतं यद्वत्, प्राणिनो व्यापि संसदि॥12॥

वचनामृत तेरी यहाँ, सर्व भाष स्वभाव।
समवशरण की सभा में, हितकर तव प्रभाव॥12॥

ॐ ह्रीं सर्व-भाषोपदेशकाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकान्तात्मदृष्टिस्ते, सती शून्यो विपर्ययः।
ततः सर्वं मृषोक्तं स्यात्, तदयुक्तं स्वघाततः॥13॥

अनेकान्त मत सत्य हैं, बाकी सब हैं झूठ।
अन्य मतों का कथन सब, अन्यथा मिथ्या मूठ॥13॥

ॐ ह्रीं अनेकान्तधर्म-प्रतिपादकाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये परस्खलितोन्निद्राः, स्व-दोषेभ-निमीलिनः।
तपस्विनस्ते किं कुर्युरपात्रं, त्वन्मत-श्रियः ॥14॥

अनेकान्त के ज्ञान से, भागे मत एकान्त।
गज निमिलन दोष से, लख अनदेखी भ्रान्त॥14॥

ॐ ह्रीं एकान्त-विमोचकाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ते तं स्वघातिनं दोषं, शमीकर्तुमनीश्वराः ।
त्वद्विषः स्वहनो, बालास्तत्त्वाऽवक्तव्यतांश्रिताः॥15॥

स्वघातक मत दोष को, दूर करन असमर्थ।
द्वेष करे अनेकान्त से, अज्ञानी तत्वर्थ॥15॥

ॐ ह्रीं सत्यार्थ प्रकाशकाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सदेक-नित्य-वक्तव्यास्त-, द्विपक्षाश्च ये नयाः।
सर्वथेति प्रदुष्यन्ति, पुष्यन्ति स्यादितीह ते॥16॥

नित्येक सद् वक्तव्य है, तद् विपरीत नय जान।
वस्तु तत्व दूषित करे, स्यात् पुष्ट कर मान॥16॥

ॐ ह्रीं वस्तुस्वरूपाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वथानियमत्यागी, यथादृष्टमपेक्षकः।
स्याच्छब्दस्तावके न्याये, नान्येषामात्म विद्विषाम्॥17॥

सर्वथा नियम त्याग कर, यथा दृष्ट सापेक्ष।
स्यात् शब्द उपयोगकर, धारे न कोई द्वेष॥17॥

ॐ ह्रीं द्वेषरहिताय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः, प्रमाण-नय-साधनः।
अनेकान्तःप्रमाणात् ते, तदेकान्तोऽर्पितान्नयात्॥18॥

अनेकान्त अनेकान्त हैं, नय प्रमाण से सिद्ध।
अनेकान्त एकान्त हैं, विवक्षित नय प्रसिद्ध॥18॥

ॐ ह्रीं नयप्रतिपादकाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इति निरुपम-युक्त-शासनः, प्रिय-हित-योग-गुणाऽनुशासनः।
अरजिन! दम-तीर्थ-नायक-स्त्वमिव, सतां प्रतिबोधनाय कः॥19॥

हे जिनेन्द्र! तेरा शासन तो, निरुपम युक्ति युक्त रहा।
प्रियहित योग गुणों से पूरित, मिथ्या दर्शन मुक्त रहा॥
अरहनाथ पंचेन्द्रिय जेता, धर्म तीर्थ के नायक हो।
तेरे सम दुजा ना कोई, बुधजन बोधक ज्ञायक हो॥19॥

ॐ ह्रीं हितमित उपेदशकाय श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति-गुण-विभवानुरूपत-, स्त्वयि-वरदागम-दृष्टिरूपतः
गुण-कृशमपि किञ्चनोदितं, मम भवताद् दुरितासनोदितम्॥20॥

मतिमान गुण वैभवधारी, जिन आगम से जान रहा।
अपनी दृष्टि भक्ति से ही, तेरे गुण का गान रहा॥
अंश मात्र गुण वर्णन से तो, किंचित पुण्य कमाया हो।
मेरे भव का ताप हरो प्रभु, अरहनाथ गुण गाया हो॥20॥

ॐ ह्रीं भवक्षयार्थं श्री-अरहनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दर्पण में मुख रूप लख, भूला आत्म स्वरूप।
अरहनाथ सर्व दर्प हर, पाया चिन्मय रूप॥
ॐ ह्रीं श्री-अरहनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

19. श्री-मल्लिनाथ भगवान की जय

यस्य महर्षेः सकल-पदार्थ-,
प्रत्यवबोधः समजनि साक्षात्।
साऽमर-मर्त्यं जगदपि सर्वं,
प्राञ्जलि भूत्वा प्रणिपतति स्म॥1॥

महाऋषि श्री-मल्लिनाथ ने, सकल पदारथ बोध किया।
त्रैकालिक वस्तु को लखकर, निज आतम का शोध किया॥
तेरी अनुपम महिमा सुनकर, नर देवा प्राणी आए।
मन पावन कर हाथ जोड़कर, श्री-चरणों में शीश नवाए॥1॥
ॐ ह्रीं महाऋषये श्री-मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य च मूर्तिः कनकमयीव,
स्व-स्फुरदाभा-कृत-परिवेषा।
वागपि तत्त्वं कथयितुकामा,
स्यात्पद-पूर्वा रमयति साधून्॥2॥

शुद्ध स्वर्ण सा वर्ण आपका, फैलाती है दिव्य प्रभा।
आभामण्डल से परिवेष्ठित, उज्ज्वल तेरी दिव्य विभा॥
दिव्यध्वनि तो तत्व ज्ञान की, अमृतधारा बरसाती।
स्याद् पदों से चिह्नित भाषा, मुनियों के मन हर्षाती॥2॥
ॐ ह्रीं निजमन-प्रमुदिताय श्री-मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य पुरस्तात् विगलित-माना,
न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते।
भूरपि रम्या प्रतिपदमासी-ज्जात,
विकोशाम्बुज-मृदु-हासा॥3॥

जिन भगवन के सम्मुख विगलित, अहंकार हो जाता है।
भूमि पर कोई ज्ञानी फिर, प्रलाप नहीं कर पाता है।।
धरती पर विहार काल में, जहाँ पड़े पावन चरणन्।
कोमल मुस्कानों से शोभित, विकसित होते दिव्य कमल।।3।।

ॐ ह्रीं अपलाप-विनाशकाय श्री-मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य समन्ताज्जिन-शिशिरांशोः,
शिष्यक-साधु-ग्रह-विभवोऽभूत।
तीर्थमपि स्वं जनन-समुद्र,
त्रासित-सत्त्वोत्तरण-पथोऽग्रम्।।4।।

बाल ब्रह्मचारी श्री-जिनवर, मल्लिनाथ स्वामी भगवान।
शिष्य साधुगण ग्रह तारों से, परिवेष्ठित ज्यों चन्द्रमहान।।
तीर्थ आपका पावन मनहर, भव्य जीव को तार रहा।
पारावार में जैसे नौका, पथिकजनों को पार करा।।4।।

ॐ ह्रीं बाल-ब्रह्मचर्य-धारकाय श्री-मल्लिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यस्य च शुक्लं परमतपोऽग्नि-
र्ध्यानमनन्तं दुरितमधाक्षीत्।
तं जिन-सिंहं कृतकरणीयं,
मल्लिमशल्यं शरणमितोऽस्मि।।5।।

मल्लिनाथ ने शुक्ल ध्यान की, अग्नि प्रज्ज्वलित कर दी।
अष्ट कर्म सब नष्ट किया अरुँ, सिद्धालय भूमि वर ली।।
मल्लिनाथ जिन सिंह समाना, शल्य रहित कृत कृत्य हुए।
तेरी शरणा को पाकर सब, आनन्दित और धन्य हुए।।5।।

ॐ ह्रीं मल्लिनाथ-तीर्थंकराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

हे लेश्या तीता भव्या मीता, परम पुनीता मल्लि जिनेश।
जय आत्म विहारी बाल ब्रह्मचारी, आरती उतारी भक्ति विशेष।।

ॐ ह्रीं श्री-मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

20. श्री-मुनिसुव्रतनाथ भगवान की जय

अधिगत-मुनि-सुव्रत-स्थिति-
र्मुनि-वृषभो मुनिसुव्रतोऽनघः।
मुनि-परिषदि निर्बभौ भवा-
नुडु-परिषत्परिवीत-सोमवत्॥1॥

महाव्रतों से शोभित मुनिवर, मुनियों के मुनिनाथ कहे।
मुनि सभा में आप विराजे, ताराओं में चन्द्र रहे॥
चार घातियां नाश किया, सर्वज्ञपने को पाया है।
तेरी पूजा भक्ति करके, मन मेरा हर्षाया है॥1॥

ॐ ह्रीं महाव्रत-शोभिताय श्री-मुनिसुव्रतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिणत-शिखि-कण्ठ-रागया,
कृत-मद-निग्रह-विग्रहाऽऽभया।
तव जिन! तपसः प्रसूतया,
गृह-परिवेष-रुचेव शोभितम्॥2॥

कामदेव मद जीत लिया अरुँ, महाव्रतों में अटल रहे।
तन की आभा मोर कण्ठ सम, नीली नीली अचल रहे॥
तप की आभा चारों दिश में, चन्द्र प्रभा सम फैली है।
आराधन तेरी करता मैं, मन धोने जो मैली है॥2॥

ॐ ह्रीं नीलवर्ण-युक्ताय श्री-मुनिसुव्रतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शशि-रुचि-शुचि-शुक्ल-लोहितं,
सुरभितरं विरजो निजं वपुः।
तव शिवमतिविस्मयं यते!,
यदपि च वाङ्मनसीयमीहितम्॥3॥

चन्द्रकान्त या दुग्ध प्रभा सम, निर्मल श्वेत रुधिर पाया।
अतिशय रूप सुगन्धित तन पा, स्वेद खेद सब विनशाया॥

शिव स्वरूप सम सुन्दर विस्मित, शान्त सरल मुनिराज अहो।
विस्मयकारक शुभ मन वच की, क्रिया कलाप ऋषिराज कहो।।3।।

ॐ ह्रीं अष्टादश-दोषरहिताय श्री-मुनिसुव्रतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थिति-जनन-निरोध-लक्षणं,
चरमचरं च जगत् प्रतिक्षणम्।
इति जिन! सकलज्ञ-लाञ्छनं,
वचनमिदं वदतां वरस्य ते।।4।।

हे जिनेन्द्र! तव दिव्य वचन से, जड़ चेतन परिभाषित है।
बनना मिटना और ध्रौव्यता, स्वाभाविक अनुशासित है।।
आप समां ना उद्घोषक है, जग प्राणी की भाषा में।
सर्वज्ञपने का द्योतक ये सब, ज्ञान ध्यान दृग नासा में।।4।।

ॐ ह्रीं सर्वभाषात्मक-दिव्यध्वनि-उपदेशकाय श्री-मुनिसुव्रतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दूरित-मल-कलङ्कमष्टकं,
निरुपम-योग-बलेन-निर्दहन्।
अभवदभव-सौख्यवान् भवान्,
भवतु ममापि भवोपशान्तये।।5।।

अपने अनुपम योग बलों से, अष्ट कर्म का नाश किया।
जगतातीत अतिन्द्रिय सुख से, सिद्धालय में वास किया।।
आप समागम को पाकर के, निर्मल मन हर्षित होवें।
भव भ्रमण को शान्त करो प्रभु, दिव्य ध्वनि मुखरित होवें।।5।।

ॐ ह्रीं सिद्ध-स्वरूपाय श्री-मुनिसुव्रतनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

शत इन्द्रों ने भक्ति कर, नाशा भव भटकाव।
मुनिसुव्रत की अर्चना, देवे निज स्वभाव।।

ॐ ह्रीं श्री-मुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

21. श्री-नमिनाथ भगवान की जय

स्तुतिः स्तोतुः साधोः कुशल-परिणामाय स तदा,
भवेन् मा वा स्तुत्यः, फलमपि ततस्तस्य च सतः।
किमेवं स्वाधीन्याज्जगति सुलभे श्रायस-पथे,
स्तुयान्न त्वा विद्वान्, सततमभिपूज्यं नमि-जिनम्॥1॥
स्तुति जिनवर के चरणों की, शुभ परिणाम जगाती है।
देव रहे ना रहे वहाँ पर, फलीभूत हो जाती है॥
निज आतम कल्याण सुलभपथ, कौन विवेकी छोड़ेगा।
नमिनाथ की स्तुति करके, अन्तर्मन को जोड़ेगा॥1॥

ॐ ह्रीं शुभपरिमाण-जागृताय श्री-नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वया धीमन्! ब्रह्म-प्रणिधि-मनसा जन्म-निगलं,
समूलं निर्भिन्नं, त्वमसि विदुषां मोक्ष-पदवी।
त्वयि ज्ञान-ज्योतिर्विभव-किरणैर्भाति भगवन्,
नभूवन खद्योता, इव शुचिरवावन्यमतयः॥2॥
मन स्थिर कर श्रेष्ठ ज्ञान धर, आत्म स्वरूप को पाया है।
पुनर्जन्म के बन्धन तोड़े, मोक्ष मार्ग विकसाया है॥
केवलज्ञान की दिव्य ज्योत से, प्रभाहीन सब मत होते।
सूर्यप्रभा के सम्मुख जुगनु, अपनी आभा को खोते॥2॥

ॐ ह्रीं मनस्थिराय श्री-नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधेयं वार्यं चाऽनुभयमुभयं मिश्रमपि तद्,
विशेषैः प्रत्येकं, नियम-विषयैश्चापरिमितैः।
सदाऽन्योऽन्यापेक्षैः, सकल-भुवन-ज्येष्ठ-गुरुणा,
त्वया गीतं तत्त्वं, बहु-नय-विवक्षेतर-वशात्॥3॥
तीन लोक के ज्येष्ठ गुरुवर, नयधारा से तत्व कहे।
एक दूजे की सदा अपेक्षा, सप्त भंग से सत्व रहे॥
निज पर कारण अस्ति नास्ति, मिश्र अनुभय कथन करो।
बोल सके ना बोल सके सब, उभय रूप सद्वचन कहो॥3॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठ-गुरुवे श्री-नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहिंसा भूतानां, जगति विदितं ब्रह्म परमं,
न सा तत्रारम्भोऽस्त्यणुरपि च यत्राश्रमविधौ।
ततस्तत्सिद्धर्थं, परम-करुणो ग्रन्थमुभयं,
भवानेवात्याक्षीन् न च विकृत-वेषोपधि-रतः।।4।।
धर्म अहिंसा सभी जीव की, रक्षा करता ब्रह्म महा।
जहाँ कहीं आरंभ अणुभर, पूर्ण अहिंसा नहीं वहाँ।।
सर्व अहिंसा सिद्धि हेतु, द्विधा संग का त्याग करो।
परम दयालु जिन मुद्राधर, अन्य वेश परित्याग करो।।4।।

ॐ ह्रीं पूर्णअहिंसाधर्म-प्रगटाय श्री-नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वपुर्भूषा-वेष-व्यवधि-रहितं शान्त-करणं,
यतस्ते संचेष्टे, स्मर-शर-विषाऽऽतङ्क-विजयम्।
बिना भीमै, शस्त्रैरदय-हृदयामर्ष-विलयं,
ततस्त्वं निर्मोहः, शरणमसि नः शान्ति-निलयः।।5।।
सुन्दर तन वस्त्राभूषण तज, शान्त किए सब विषय विकार।
कामदेव आतंक मचाए, शील बाण से किया संहार।।
अस्त्र शस्त्र से रहित हृदय से, क्रूर क्रोध का नाश किया।
निर्मोही हे शरण प्रदाता, शान्ति निलय में वास किया।।5।।

ॐ ह्रीं शरणागत-वत्सलाय श्री-नमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

नमिनाथ नमता रहूँ, नम्र भाव मन धार।
अहंकार सब मेट कर, धारूँ शुद्ध विचार।।

ॐ ह्रीं श्री-नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

22. श्री-नेमिनाथ भगवान की जय

भगवानृषिः परम - योग - दहन - हुत - कल्मषेन्धनः।
ज्ञान-विपुल-किरणैः सकलं प्रतिबुद्धय बुद्ध-कमलायतेक्षणः।।1।।

**हे ऋषिवर जी परम योग से, दहन किया सब कल्मषता।
केवल ज्ञान की किरणें पाकर, प्रभु हुए हर तामसता।
प्राणीमात्र को अभय दान दें, स्वाभाविक विहार किया।
दिव्य ध्वनि सुन भव्य जीव नें, निज आतम उद्धार किया।।1।।**

ॐ ह्रीं सर्वतोभद्र विहारी श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

**हरिवंश - केतुरनवद्य - विनय - दम - तीर्थ - नायकः।
शील-जलधिरभवो विभीवस्त्वमरिष्टनेमि-जिनकुञ्जरोऽजरः।।2।।**

**वृहद कमल सम नयन मनोहर, हरिवंश के राज्य प्रधान।
इन्द्रियजेता विनय प्रणेता, जिन कुञ्जर नेमि गुणखान।
धीर वीर गंभीर युवापन, दिव्यरुप मोहित करता।
आदर्शों के शिखर बने श्री, नेमिनाथ सब दुख हरता।।2।।**

ॐ ह्रीं हरिवंश कुल तिलक श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

**त्रिदशेन्द्र-मौलि-मणि-रत्न-किरण-विसरोपचुम्बितम्।
पाद-युगलममलं भवतो, विकसत्कुशेशय-दलाऽरुणोदरम्।।3।।**

**मुकुट मणि की किरण आपके, चरण कमल को छूती हैं।
पाद युगल में अमल भाव से, रक्त कमल सी शोभित है।
सौ इन्द्रों से पूज्य जिनेश्वर, तीन लोक को निरख रहें।
सबको जाने सब ना जानें, यही ज्ञान में फर्क कहें।।3।।**

ॐ ह्रीं शतेन्द्र पूजित श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

**नख-चन्द्र-रश्मि-कवचाऽति-रुचिर-शिखराऽङ्गुलि-स्थलम्।
स्वार्थ-नियत-मनसः सुधियः, प्रणमन्ति मंत्र-मुखरा महर्षयः।।4।।**

**पद अंगुष्ठ के अग्रभाग को, चन्द्र किरण सम चमकाया।
मंत्र मुखर हो प्रखर भाव सें, मुनिगण नमकर यश गाया।।
चरणों का सेवक बनकर जो, मोक्ष मार्ग को स्वीकारे।
कर्मातीत निराकुल सुख पा, निज आतम को श्रृंगारें।।4।।**

ॐ ह्रीं कर्मारिध्वंसी श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्युतिमद्रथाङ्ग-रवि-बिम्ब-किरण-जटिलांशुमण्डलः।
नील-जलद-जल-राशि-वपुः सह बन्धुभिर्गरुडकेतुरीश्वरः॥5॥

नील वर्ण के धारी होकर, सूर्य बिम्बसम चक्र धरा।
गरूड़ चिन्ह ही ध्वजा थी प्यारी, तीन खण्ड के स्वामी कहा॥
नारायण भी भक्ति में नित, पारायण हो कर जोड़े।
तीर्थंकर के सम्मुख रहकर द्वन्द क्लेश बन्धन तोड़े॥5॥

ॐ ह्रीं त्रिखण्डाधिपति नारायण पूजिताय श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हलभृच्च ते स्वजनभक्ति-मुदित-हृदयौ जनेश्वरौ।
धर्म-विनय-रसिकौ सुतरां, चरणारविन्द-युगलं प्रणेमतुः॥6॥

हलधर धारी भाई बन्धु सब, प्रभुदित हो भक्ति करते।
धर्म विनय से रसिक परिजन, नेमिनाथ को नित नमते॥
संबंधो की गहरी दुनियाँ, मोह भाव से चलता हैं।
स्वर्ग नरक निजभावों का फल, सभी जीव को मिलता हैं॥6॥

ॐ ह्रीं बलभद्र पूजिताय श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ककुदं भुवः खचरयोषि-दुषित-शिखरै-रलङ्कृतः।
मेघ-पटल-परिवीत-तटस्त्व, लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा॥7॥

विद्याधर नारी से सोवित, वृषभ कंध सी शोभ रहे।
अग्रभाग भू ऊँचा सोहे, मेघ पटल से घिरा रहें।
जुनागढ़ शादी बंधन तज, पशुओं की चित्कार सुनि।
भोग वधु तज दीक्षा धारी, वीतरागता राह चुनि॥7॥

ॐ ह्रीं विवाह काले वैराग्य प्रस्फुटिताय श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वहतीति तीर्थमृषिभिश्च, सततमभिगम्यतेऽद्य च।
प्रीति-वितत-हृदयैः परितो, भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः॥8॥

इन्द्रो से चिन्हाकिंत पर्वत, तीर्थ साधु से पूजित हैं।
ऊजर्यन्त से मोक्ष पधारें, नेमिनाथ जग वन्दित हैं॥

समवशरण में दिव्य ध्वनि में, मुनि महिमा उपदेश दिया।
शेष बचे दो मिटे द्वारिका, व्यसन मुक्त संदेश दिया॥8॥

ॐ ह्रीं गिरनार गिरी मुनि प्राप्ताय श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहिरन्तरप्युभयथा च, करणमविघाति नाऽर्थकृत्।
नाथ! युगपदखिलं च सदा, त्वमिदं तलाऽऽमलकवद्-विवेदिथ॥9॥

तीन लोक अरू तीन काल को, हस्त मणि सम जान लिया।
मन इन्द्रिय जो भीतर बाहर, बाधा ना कुछ काम किया॥
विघ्न विनाशी अविनाशी जिन, जीवमात्र के हे हितकार।
चरण वन्दना भक्ति पूर्वक, है जिन शासन के आधार॥9॥

ॐ ह्रीं सर्वागम श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अत एव ते बुध-नुतस्य, चरित-गुणमद्भुतोदयम्।
न्याय-विहितमवधार्य जिने, त्वयि सुप्रसन्न-मनसः स्थिता वयम्॥10॥

अद्भूत गणधर अभ्युदय से, न्यायागम चारित्राधार।
सुरभित मन भक्ति पूर्वक प्रभु, पाया तेरा शरणाधार॥
निराकार चैतन्य विहारी, क्षायिक दान सदा करते।
नेमिनाथ की स्तुति करता, नित्य निरामय सुख वरतें॥10॥

ॐ ह्रीं चेतन्य विहारिणे श्री नेमिनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पशु बन्धन को देखकर, धार लिया वैराग्य।
सर्वदर्शी नेमी प्रभु, नमन जगावे भाग्य॥

ॐ ह्रीं श्री-नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

23. श्री-पार्श्वनाथ भगवान की जय

तमाल-नीलैः सधनुस्तडिद्गुणैः,
प्रकीर्ण-भीमाऽशनि-वायु-वृष्टिभिः।
बलाहकैर्वैरि - वशैरुपद्रुतो,
महामना यो न चचाल योगतः॥1॥

तमाल वृक्ष सम नील गगन से, विद्युत गर्जन वज्रापात।
महाभंयकर आँधी वर्षा, शत्रुभाव से तीव्राघात।।
पूर्व जन्म का बैर जानकर, तप में बाधक बन आया।
महामना पारस स्वामी का, शुक्लध्यान ना डिग पाया।।1।।

ॐ ह्रीं उपसर्ग-विजिताय श्री-पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बृहत्फणा-मण्डल-मण्डपेन यं,
स्फुरत्तडित्पिङ्ग-रुचोपसर्गिणम्।
जुगूह नागो धरणो धराधरं,
विराग-संध्या-तडिदम्बुदो यथा।।2।।

वृहद् फणों से युक्त देवता, मण्डल मण्डप रच दीना।
पीत वर्ण की आभा लेकर, मुनिवर को वेष्ठित कीना।।
जैसे मावस की बेला में, तड़ित गिरि को घेर रहा।
नागदेव धरणेन्द्र निकट आ, सेवा कर भव फेर रहा।।2।।

ॐ ह्रीं दिव्यशक्ति-सम्पन्नाय श्री-पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व-योग-निस्त्रिंश-निशात-धारया,
निशात्य यो दुर्जय-मोह-विद्विषम्।
अवापदाऽऽर्हन्त्यमचिन्त्यमद्भुतं,
त्रिलोक-पूजाऽतिशयाऽऽस्पदं पदम्।।3।।

शुक्ल ध्यान की खड्ग धार से, दुर्जय मोह शत्रु मारा।
विस्मयकारी गुण धारण कर, पद अचिन्त्य अर्हत धारा।।
पार्श्वनाथ हितकारी भगवन, अतिशय से परिपूर्ण हुए।
उपसर्गों में कर्म जीत कर, केवलज्ञान से पूर्ण हुए।।3।।

ॐ ह्रीं स्थिर-योगात्मने श्री-पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यमीश्वरं वीक्ष्य विधूत-कल्मषं,
तपोधनास्तेऽपि तथा बुभूषवः।
वनौकसः स्व-श्रम-वन्ध्य-बुद्धयः,
शमोपदेशं शरणं प्रपेदिरे।।4।।

तेरे तप की महिमा लखकर, जिनवर रूप में दर्श किया।
अपने मिथ्या तप को तजकर, तव शरणा सहर्ष लिया॥
मिथ्या तप की सतत साधना, जगति में भटकाती है।
पार्श्व प्रभु की दिव्य ध्वनि तो, सम्यकपथ बतलाती है॥4॥

ॐ ह्रीं सम्यकमार्ग-दर्शिकार्ये श्री-पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

स सत्य-विद्या-तपसां प्रणायकः,
समग्रधीरुग्रकुलाऽम्बरांशुमान्।
मया सदा पार्श्वजिनः प्रणम्यते,
विलीन-मिथ्यापथ-दृष्टि-विभ्रमः॥5॥

सम्यक विद्या सम्यक तप का, मार्ग आप बतलाते हो।
उग्रवंश के दिव्य चन्द्रमा, केवलज्ञानी कहाते हो॥
मिथ्यामत दृष्टि विभ्रम से, मुझको जिनवर मुक्त करो।
पार्श्व प्रभु की सदा वन्दना, रत्नत्रय से युक्त करो॥5॥

ॐ ह्रीं विभ्रम-विनाशनाय श्री-पार्श्वनाथाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

क्षायिक नव लब्धि महा, योग निरोध कर पाय।
पार्श्व प्रभु की वन्दना, पाऊँ निज स्वभाव॥

ॐ ह्रीं श्री-पार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

24. श्री-महावीर भगवान की जय

कीर्त्या भुवि भासि तया,
वीर! त्वं गुण-समुच्छ्रया भासितया,
भासोडुसभा - ऽऽसितया,
सोम इव व्योम्नि कुन्द-शोभासितया॥1॥

यश की किरणें सब जग फैलीं, निर्मल गुणधारी भगवान!
कुन्द पुष्प-सी श्वेत कान्ति ले, चन्द्र शोभता गगन महान॥
वीर नाम शक्ति का द्योतक, मेरु पर्वत पर पाया।
इन्द्र देव भी बाल रूप में, अन्तिम तीर्थंकर पाया॥1॥

ॐ ह्रीं सुमेरुपर्वत-पाण्डुकशिला-मध्ये वीरनाम-धारकाय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तव जिन! शासन-विभवो,
जयति कलावपि गुणाऽनुशासन-विभवः।
दोषक - शासन-विभवः,
स्तुवन्ति चैनं प्रभा-कृशासनविभवः॥2॥

जिन शासन का अनुशासन तो, कलिकाल जयवन्त रहा।
भव्य जीव को हितकर मनहर, पद तेरा अरहन्त रहा॥
ज्ञान श्रेष्ठ पा दोषक मत की, गरिमा को कृश करते हैं।
गणधर बनकर गौतम स्वामी, तव चरणों में रहते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं गणधरसेवित-जिनशासन-महिमा-प्रदर्शकाय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अनवद्यः स्याद्वादस्तव
दृष्टेष्टाऽविरोधतः स्याद्वादः।
इतरो न स्याद्वादो,
स द्वितय-विरोधान्मुनीश्वराऽस्याद्वादः॥3॥

स्याद्वाद अनेकान्त मयी तव, दोष रहित शुभ वाणी है।
नहीं विरोधाभास है इसमें, दृष्ट इष्ट गुण खानी है॥
वचन शब्द है स्यात् सहारा, वस्तु तत्व प्रतिपादक है।
एकान्तवाद से करे किनारा, वर्धमान जिन साधक है॥3॥

ॐ ह्रीं स्याद्वाद-प्रतिपादकाय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वमसि सुरासुर - महितो,
ग्रन्थिकसत्त्वाऽऽशयप्रणामाऽमहितः।
लोक - त्रय - परमहितो,
ऽनावरणज्योतिरुज्ज्वलद्धाम-हितः॥4॥

देव सुरासुर भक्ति करते, मिथ्या दृष्टि भाग रहें।
रागी द्वेषी सम तव पूजा, नहीं करे जो जाग रहें॥
तीन लोक के परम हितैषी, मोक्ष मार्ग विस्तारक हो।
अतिवीर शुभ नाम तिहारा, केवल ज्ञान के धारक हो॥4॥

ॐ ह्रीं अतिवीरनाम प्राप्ताय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सभ्यानामभिरुचितं, दधासि,
गुण - भूषणं, श्रिया चारु - चितम्।
मग्नं स्वस्यांतं रुचितं,
जयसि, च मृगलाञ्छनं स्वकान्त्या रुचितम्॥5॥

समवशरण में तेरी मूरत, भव्य जीव मन उमगाते।
प्रतिहार्य शुभ आठ सजे हैं, महिमा तेरी बतलाते॥
अपने तन की प्रखर प्रभा से, मृग लांछन को जीत रहे।
शेर चिह्न से जाने जाते, महावीर मन मीत रहे॥5॥

ॐ ह्रीं संगमदेव-विजिताय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्वं जिन! गत-मद-माय-
स्तव भावानां मुमुक्षु-कामद! मायः।
श्रेयान् श्रीमदमाय
स्त्वया समादेशि स प्रयाम-दमाऽयः॥6॥

हे प्रभु! तेरे मन मन्दिर में, ना माया ना मान रहा।
भव्यजीव भक्ति करते जो, मद माया से मुक्त कहा॥
जग लक्ष्मी तज मोक्ष लक्ष्मी वर, ऐसा शुभ सन्देश दिया।
प्रामाणिक जो ज्ञान आपका, मोक्ष मार्ग उपदेश दिया॥6॥

ॐ ह्रीं सागार-अनगार-धर्म-प्रतिपादकाय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गिरि- भित्त्य- वदानवतः,
श्रीमत इव दन्तिनः स्रवद्दानवतः।
तव शम-वद्दानवतो,
गतमूर्जितमपगत-प्रमादानवतः॥7॥

पर्वत कोण को खण्डित करता, झरता मद अभिमानी है।
बलशाली गज चले निरन्तर, नहीं कोई परेशानी है॥
सर्व प्राणी को अभय दान दें, समवशरण विहार किया।
दोष रहित सब बने निरन्तर, ऐसा सन्मति ज्ञान दिया॥7॥

ॐ ह्रीं शंका-समाधान-प्रदाताय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुगुण - सम्पदसकलं,
परमतमपि मधुर-वचन-विन्यास-कलम्।
नय-भक्त्यवतं - सकलं,
तव देव! मतं समन्तभद्रं सकलम्॥8॥

मधुर वचन हितकर आकर्षी, महा गुणों की खान रहा।
अन्य मति गुण सहित हुए ना, आतम का कुछ ज्ञान रहा॥
सप्त नयों के आभूषण से, ज्ञान आपका शोभित है।
समन्तभद्र सम हितकारी बन, 'सौरभसागर' सुरभित है॥8॥

ॐ ह्रीं दिव्य-सहस्रगुण-धारकाय जिनशासन-नायकाय श्री-महावीराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

शासन नायक वीर जिन, अनेकान्त सरताज।
समवशरण सन्देश दे, पाया मुक्ति राज॥

ॐ ह्रीं श्री-महावीर-जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महापूर्णार्घ्य

सर्व शब्द को जोड़कर, सर्व स्वरों में गाय।
सर्व वाद्य से भक्ति मय, जिनवर पूज रचाय॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरोभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस निर्वाण भूमि अर्घ्य

तीरथ है सम्मेद शिखर जी, बीस पधारे श्री निर्वाण।
आदिनाथ कैलाशगिरी से, वासुपूज्य चम्पापुर धाम॥
नेमिनाथ गिरनार शिखर से, निराकार पद पाया है।
पावापुर महावीर प्रभु ने, आठों कर्म नशाया है॥
तीर्थंकर चौबीसो जिनवर, परम धाम को पाये हैं।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाकर 'सौरभ' शीश झुकाये हैं॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाणस्थली श्रीसम्मेदशिखर-गिरनार-कैलाशगिरि चम्पापुर-पावापुर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण विराजित सर्व मुनिवरों का अर्घ्य

चार परम गुरु साधक सन्ता, पुलाक वकुश कुशील निर्ग्रन्था।
स्नातक है पंचम मुनिवर, समझो साक्षात् हैं जिनवर॥

तीर्थंकर के समवशरण में, चार संघ हैं सदा चरण में।
ऋषि मुनि हो या यति अनगारा, धर्म धुरन्धर करे भव पारा॥

अर्घ्य चढ़ाऊँ मुनिवर ध्याऊँ, व्रतदीक्षा ले कर्म खपाऊँ।
पूजा कर मैं पुण्य कमाऊँ, धीरे-धीरे जिन पद पाऊँ।

विनती मेरी सुन लो मुनिवर, हमको तारो मन निर्मल कर।
भक्ति से शक्ति बढ़ जाए, चरणों में नत अर्घ्य चढ़ाएँ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-समवशरण-स्थित एकहजारचारसौबावन-गणधर एवं अट्ठाइसलाखअड़तालिसहजार पंचप्रकार-सर्व-मुनिश्वरेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सम्पूर्ण महापूर्णार्घ्य

अतिशयकारी तारण हारी, तीर्थंकर चौबीस महान।
समता धारूँ निज को निखारूँ, अर्घ्य चढ़ा धर तेरा ध्यान॥
कोप हरो मम शोक हरो प्रभु, धर्म ध्यान विकसित कर दो।
वीतरागता प्रगट करूँ प्रभु, अन्तर्मन प्रमुदित कर दो॥

ॐ ह्रीं वृषभादि-महावीर-पर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जाप्य- ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो नमः (9 बार या 108 बार)

(नोट:-त्रिकाल चौबीसी का अर्घ चढ़ाना चाहे तो पेज नं-227 देखें)

जयमाला

दोहा- **तीर्थङ्कर चौबीस जिन-सदा करे कल्याण**
निज आतम दर्शन मिले-सिद्धालय विश्राम।

अविनश्वर अविकारी जिनवर, तत्व ज्ञान के हे भण्डार।
आत्म ध्यान में निज को लखते, लखकर भी सारा संसार॥1॥

मोह नहीं वे मोक्ष विराजें, जो पाया वह है पर्याप्त।
कर्म नशा धर नासा दृष्टि, पूज्य बने कर कर्म समाप्त॥2॥

क्षायिक नवलब्धि के धारी, स्वयं स्वयंभू कहलाते।
सोलह कारण भावना भाकर, तीर्थंकर पद को पाते।।3।।

दुर्लभ मानुष जन्म है पाया, ना इसको बेकार करूँ।
पाप विकारी भाव तजूँ मैं, पुण्य भाव स्वीकार करूँ।।4।।

गुण पर्ययवद् द्रव्यं जानो, नय निक्षेप प्रमाण विचार।
स्याद्वाद अनेकान्तमयी वह, धर्म अहिंसा प्राणाधार।।5।।

स्तुतिकर्ता स्तुति करते, जो स्तुत्य कहाता है।
स्तुति का फल भले न चाहे, फलीभूत हो जाता है।।6।।

ना रोऊँ ना दुख को बोलूँ, ना मागूँ वैभव संसार।
ना रूठूँ ना उन्हें मनाऊँ, जिनवर तो जगती के पार।।7।।

ना देते अभिशाप किसी को, ना देते वे आशीर्वाद।
फिर भी भक्ति जो भी करता, लेता इह परभव को साध।।8।।

प्रातः सूरज उगकर क्षण में, तम हरता जागृत करता।
दिनभर चलकर सर्व जीव को, उत्साहित शक्ति भरता।।9।।

जिनवर के दर्शन कर प्रातः, अन्तर आतम चमकेगा।
पाप बहिर्मुख हर क्षण होकर, धर्म भाव सब पनपेगा।।10।।

मंगल कारी जिनवर दर्शन, धर्म मार्ग का प्रथम चरण।
संस्तुति भक्ति करलो मन से, मिट जाएगा जन्म मरण।।11।।

चौबीसों तीर्थंकर मनहर, परम पूज्य हैं मंगलधाम।
श्रद्धा लोक के देव यही हैं, वीतरागी जिनवर भगवान।।12।।

ऋषभ नाथ हे आदि जिनेशा, अन्तस् कल्मषता धो दो।
अजित नाथ हे कर्म विजेता, दिव्य ध्यान शक्ति दे दो।।13।।

संभव जिनवर भवभय हर्ता, समता क्षमता पा जाऊँ।
अभिनन्दन का वन्दन करके, निज गुण वैभव प्रगटाऊँ।।14।।

सुमतिनाथ शुभ ज्ञान प्रदाता, सद् बुद्धि जागृत कर दो।
पद्मप्रभु गुण सरवर भीतर, आत्म कमल विकसित कर दो।।15।।

दया क्षमा से युक्त जिनेश्वर, नाम सुपारस पाया है।
चन्द्रप्रभु की शीतल रश्मि, रोम रोम चमकाया है।।16।।

अन्तश्चेतना के संवाहक, पुष्पदन्त प्रभु कहलाते।
रागादिक सब दोष हरो प्रभु, शीतल गुण गौरव गाते।।17।।

उलझन मन की हर लेना प्रभु, तीर्थंकर श्री नाथ श्रेयांस।
वासुपूज्य है बाल ब्रह्म जिन, संयम के मेरु दिव्यांश।।18।।

मन सुख दायक विमलनाथ जी, अन्तर्मन को विमल करो।
दोष अनन्तानन्त हृदय में, अनन्तनाथ जी रिक्त करो।।19।।

धर्म ध्यान की शक्ति पाकर, धर्मनाथ नित ध्यान करूँ।
शान्तिनाथ चंचलता मेटो, भव भ्रमण को शान्त करूँ।।20।।

कुन्थुनाथ जी ध्यान धुरन्धर, शुद्धातम में लीन रहे।
अरहनाथ अरिकुल के नाशक, परम योग परवीन रहे।।21।।

बाल ब्रह्मचारी जिनवर हैं, मल्लिनाथ निष्काम महान।
मुनिसुव्रत मन मौन करा दो, कर्मास्रव का होवे हान्।।22।।

नमिनाथ निज गुण प्रगटा दो, आत्म रूप में खो जावे।
नेमिनाथ के तेज पुँज से, ज्योतिर्मय जीवन होवे।।23।।

आकुलता में रस निज खोया, पारस रस पा परम बनूँ।
महावीर का सत्पथ पाकर, निज आतम कल्याण करूँ।।24।।

दोहा

विनती 'सौरभसागर' की, सुन लेना जिनराज।
जीवन हितकर हो सदा, देना आशीर्वाद।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इत्याशीर्वाद

त्रिकाल चौबीसी प्रत्येक अर्घ

त्रिकालिक प्रथम तीर्थंकर

धर्म प्रवर्तक आदिनाथ जी, चिन्मय मूरत प्रथम जिनेश।
तीर्थंकर निर्वाण भूत के, प्रारंभिक ज्ञायक अखिलेश।।
आने वाले महापद्म जी, धर्म ध्वजा फहरायेगें।
भूत भविष्यत वर्तमान के, प्रथम तीर्थंकर ध्यायेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ निर्वाण महापद्म त्रिकालिक तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक द्वितीय तीर्थंकर

कर्म विजेता अजितनाथ जी, गज चिन्हाकिंत द्वितीय जिनेश।
सागर से गंभीर भूत के, तीर्थंकर है अपर महेश।।
नर सुर सेवित भावी जिनवर, श्री सुरदेव सदा सुखकार।
भूत भविष्यत वर्तमान के, त्रय तीर्थंकर जय जयकार।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ, श्री सागर, श्री सुरदेव त्रिकालिक तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक तृतीय तीर्थंकर

जग में संभव सब कुछ है जब, संभवनाथ कृपा बरसे।
महासाधु सा जीवन जीकर, ध्यान मग्न जीवन हरसे।।
आने वाले तीर्थंकर श्री, सुपार्श्वनाथ[1] कल्याण करें।
भूत भविष्यत वर्तमान के, त्रय तीर्थंकर ध्यान धरें।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथ, महासाधु, सुपार्श्वनाथ त्रिकालिक तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकर**:-तृतीय तीर्थंकर का सुरिप्रभ नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक चतुर्थ तीर्थंकर

मन मर्कट सा मचल रहा हो, अभिनंदन का जाप करें।
विमलप्रभ सा निर्मल मन कर, जीवन के संताप हरें।।
तीर्थंकर श्री स्वयंप्रभ सम, स्वयं प्रभा प्रगटाऊंगा।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर गुण गाऊंगा।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदन, विमलप्रभ, श्री स्वयं प्रभ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक पंचम तीर्थंकर

सुमतिनाथ मति पाने को मन, सुमन सुमन ले नमन किया।
श्री श्रीधर[1] सम शुद्ध आत्म कर, सिद्धालय में गमन किया।।
सर्वात्मभूत जिन देव पांचवे, होने वाले तीर्थंकर।
भूत भविष्यत वर्तमान के, पूजूँ तीनों तीर्थंकर।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ, श्रीधर, सर्वात्मभूत तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक षष्टम तीर्थंकर

खिला कमल सा चिन्ह आपका, पद्मप्रभु पावन भगवान।
सुदत्तनाथ के समवशरण में, दिव्य ध्वनि खिरती अविराम।।
तीर्थंकर श्री देवपुत्र[2] जी, होवेंगें पुण्यार्थ नमूं।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थ प्रवर्तक सदा नमूं।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभु, सुदत्तनाथ, देवपुत्र तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**-पंचम तीर्थंकर सर्वदुध नाम का भी उल्लेख है।
2. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**-षष्टम तीर्थंकर जयदेव जी नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक सप्तम तीर्थंकर

स्वयं बोध स्वास्तिक से होता, नाथ सुपार्श्व का लांक्षन है।
कर्म रहित श्री अमलप्रभ[1] जी, सिद्धालय सुख हर क्षण हैं।।
कुल कीर्ति को बर्धित करने, वाले हैं कुलपुत्र[2] मुनि।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थ प्रवर्तक त्रयों मुनि।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ, अमलप्रभ, कुलपुत्र नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक अष्टम तीर्थंकर

चंद्रमणि सम चंद्रकांति मय, चंद्रप्रभु जिनराज महान।
उद्धर जिन उद्धार कराते, सिद्धालय में ज्योतिर्मान।।
उदंकनाथ भावी तीर्थंकर, चरण वंदना नित्य करूं।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर का ध्यान करूं।।

ॐ ह्रीं श्री चंद्रप्रभु, उद्धर जिन, उदंक देव तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक नवम् तीर्थंकर

भव भय भंजक पुष्पदंत प्रभु, भवोदधि के तारणहार।
भूतकाल के अंगिर जिनवर, पूजूं कर्मन नाशन हार।।
प्रोष्ठिल[3] है भावी तीर्थंकर, पायेंगे आगे निर्वाण।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर पूजूँ धर ध्यान।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्त, अंगिर, प्रोष्ठिल तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–सप्तम तीर्थंकर का सदल नाम का भी उल्लेख है।
2. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–सप्तम तीर्थंकर का उदयदेव जी का भी उल्लेख है।
   भूतकालीन तीर्थंकरः–नवम तीर्थंकर का आडिट नाम का भी उल्लेख है।
3. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–नवम तीर्थंकर का प्रश्नकीर्ति जी का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक दशम तीर्थंकर

सुखदायक कल्याणक पाया, शीतल स्वामी तप करके।
भूतकाल के सन्मति देवा[1], सद्‌गति देवे भव हरके।।
जयकीर्ति जिनधर्म बढ़ाने, होंगे दशवें तीर्थंकर।
भूत भविष्यत वर्तमान के, पूजूं कर्म रहित जिनवर।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ, सन्मति देव, जयकीर्ति तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक ग्यारहवें तीर्थंकर

घाति कर्म विनाशक जिनवर, नाम श्रेयांश है मंगलकार।
सिंधु[2] जिनवर बंदू अघहर, भव ध्वंसि गुण अपरंपार।।
पूर्ण बुद्ध हो मुनिसुव्रत[3] जी, नामधारी भावी जिनराज।
भूत भविष्यत वर्तमान जिन, पूजू निजानंद ध्रुवराज।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांश नाथ, सिंधुनाथ, मुनिसुव्रत नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक बारहवें तीर्थंकर

वासुपूज्य ब्रह्मचारी जिनवर, सिद्धालय में रहे विराज।
कुसुमांजलि तीर्थंकर पूजूँ, भूतकाल के हे जिनराज।।
निष्कामी अर[4] अमल जिनेश्वर, नित्य सुखाश्रित बसते है।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थ प्रवर्तक कहते हैं।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, कुसुमंजलि, अरनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–दशम तीर्थंकर का अग्निनाथ नाम का भी उल्लेख है।
2. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–ग्यारहवें तीर्थंकर का सयंम नाम का भी उल्लेख है।
3. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–ग्यारहवें तीर्थंकर का पूर्णबुद्ध नाम का भी उल्लेख है।
4. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–बारहवें तीर्थंकर का अरअहम नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक तेरहवें तीर्थंकर

विमल भाव ले विमलनाथ के, विमल गुणों का गान करें।
शिवगण नायक आतम ज्ञायक, जिनवर का सम्मान करें।।
कर्म रहित निष्पाप नाम के, भावी तीर्थंकर जय कार।
भूत भविष्यत वर्तमान के, धर्म शिरोमणि जग हितकार।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ, शिवगणनाथ, निष्पाप नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक चौदहवें तीर्थंकर

जय भगवंतं नाथ अनंतम, पार किये चौदह गुणथान।
राग द्वेष मद मोह विनाशी, तीर्थंकर उत्साह[1] महान।।
निष्कषाय[2] भावी तीर्थंकर, स्वयं स्वयंभू कहलाए।
भूत भविष्यत वर्तमान के, त्रैकालिक तीर्थंकर ध्याय।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथ, उत्साह नाथ, निष्कषाय नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक पंद्रहवे तीर्थंकर

वस्तु का स्वभाव धर्म है, धर्मनाथ की वाणी है।
ज्ञानेश्वर[3] तीर्थंकर का शुभ, नाम आत्म कल्याणी है।।
विपुल[4] तपस्या विमल भाव से, भावी तीर्थंकर करते।
भूत भविष्यत वर्तमान के, हितकारी जिनवर भजते।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ, ज्ञानेश्वर नाथ, विपुलनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–चौदहवें तीर्थंकर का उत्सव नाम का भी उल्लेख है।
2. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–चौदहवें तीर्थंकर का स्वयंभू नाम का भी उल्लेख है।
3. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–पन्द्रहवें तीर्थंकर का यशोधरा नाम का भी उल्लेख है।
4. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–पन्द्रहवें तीर्थंकर का विमलप्रभ नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक सोलहवें तीर्थंकर

समरस भावों से समता रख, शान्तिनाथ जिनवर ध्याते।
परमेश्वर[1] के परम पदों में, प्रतिदिन नमनान्जलि लाते।।
निर्मल नाथ है भावी भगवन, निर्मलता दे जायेंगे।
भूत भविष्यत वर्तमान के, जिनवर अर्घ चढ़ायेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथ, परमेश्वर नाथ, निर्मलनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक सत्रहवें तीर्थंकर

जग की क्षण भंगुरता जाना, कुंथुनाथ जग छोड़ गए।
विमलेश्वर[2] वैराग्य धारकर, जगती से मुख मोड़ गये।।
चित्रगुप्त न जीवन लिखते, ये भावी तीर्थंकर है।
भूत भविष्यत वर्तमान के, जिनवर अर्घ समर्पण है।।

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ, विमलेश्वर, चित्रगुप्त नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक अठारहवें तीर्थंकर

मछली सा चंचल यौवन है, अरहनाथ जी जान गए।
नाथ यशोधर तीर्थंकर है, जीवन को पहचान गए।।
समाधि गुप्त भावी तीर्थंकर, सन्यासी महिमा गाए।
भूत भविष्यत वर्तमान के, धर्म प्रवर्तक गुण गाये।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ, वर्धमान नाथ, समाधीगुप्त तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकरः**–सोलहवें तीर्थंकर का बदल नाम का भी उल्लेख है।
2. **भूतकालीन तीर्थंकरः**–सत्रहवें तीर्थंकर का विनयेश्वर नाम का भी उल्लेख है।

त्रिकालिक उन्नीसवे तीर्थंकर

कलश चिन्हधारी प्रभुवर जी, मल्लिनाथ सब क्लेश हरें।
कृष्णमती के समवशरण में, भव्य जीव प्रवेश करें।।
स्वयं स्वयंभू नाथ हितैषी, भावी श्री भगवान बने।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर को सदा नमै।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ, कृष्णमती, स्वयंभूनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक बीसवे तीर्थंकर

मुनियों का व्रत मुनीसुव्रत ले, मुनियो के मुनि नाथ बने।
ज्ञानमती केवल ज्ञानी जिन, समवशरण सुरनाथ नमें।।
अनिवर्तक शुभ धर्म प्रवर्तक, भावी तीर्थंकर ध्याये।
भूत भविष्यत वर्तमान के, समवशरण धारी ध्याये।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रत नाथ, ज्ञानमती, अनिवर्तक नाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक इक्कीसवे तीर्थंकर

विश्व विलोकी अरिकुल नाशक, नमिनाथ जय भगवंता।
शुद्धमति तीर्थंकर हितकर, नमूं नमूं जय अरिहंता।।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, गुण धारी जयनाथ बने।
भूत भविष्यत वर्तमान के, धर्म धुरंधर चरण नमैं।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ, शुद्धमती, जयनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक बाईसवें तीर्थंकर

बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर, नेमिनाथ गिरनार चढ़े।
भूतकाल के भद्रनाथ जी, शुद्ध भाव धर मोक्ष चढ़े।।
विमलनाथ भावी तीर्थंकर, विमल भाव से पूजेंगे।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर को पूजेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री नेमीनाथ, भद्रनाथ, विमलनाथ तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक तेईसवे तीर्थंकर

बेरी का उपसर्ग सहा था, केवल ज्ञान मिला उपहार।
अतिक्रांत[1] जी है अतीत के, दीन दयालु धर्माधार।।
देवपाल देवाधिदेव जी, तीर्थंकर है दीनदयाल।
भूत भविष्यत वर्तमान को, अर्घ चढ़ाऊं भर भर थाल।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ, अतिक्रांत नाथ, देवपाल तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिकालिक चौबीसवें तीर्थंकर

वर्तमान के वर्धमान जिन, शासन नायक तारणहार।
शांतिनाथ[2] जी देव हमारे, भूतकाल के करुणा धार।।
अनंतवीर्य जी तीर्थंकर पर, भावी काल में होवेंगे।
भूत भविष्यत वर्तमान के, तीर्थंकर को पूजेंगे।।

ॐ ह्रीं श्री वर्धमान, शान्तियुक्त नाथ, अनंतवीर्य तीर्थंकराय नमः अर्घम् निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. **भविष्य कालीन तीर्थंकर**:-तेईसवें तीर्थंकर का अनंतवीर नाम का भी उल्लेख है।
2. **भूतकालीन तीर्थंकर**:-चौबीसवें तीर्थंकर का शांतास् नाम का भी उल्लेख है।

6. श्री सम्मेद शिखर विधान

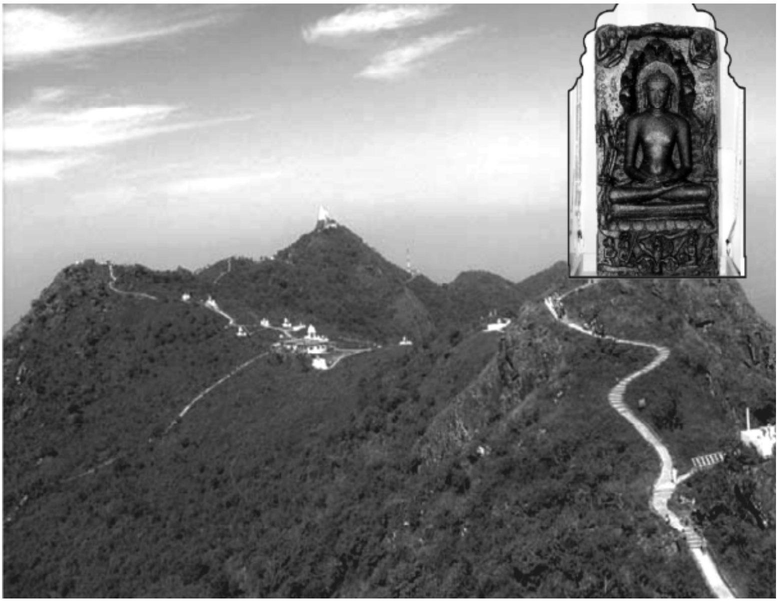

1200 वर्ष प्राचीन पार्श्वनाथ भगवान

निर्माणाधीन-सम्मेद शिखर स्थित ''सौरभांचल'' परिसर

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

6. श्री सम्मेद शिखर विधान

माण्डला

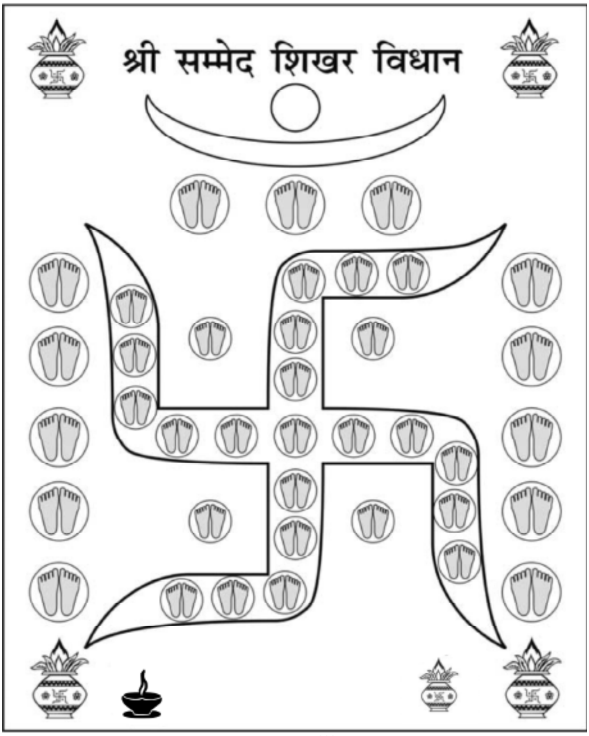

कुल अर्घ्य 38

सम्मेद शिखर-निर्वाण कल्याणक व्रत विधि

व्रतारम्भ : किसी भी तीर्थंकर के मोक्ष कल्याणक की तिथि से प्रारम्भ

अवधि : 1 वर्ष से 2 वर्ष

व्रत पूजा : सम्मेद शिखर विधान या जिस तीर्थंकर का कल्याणक है उनकी पूजा।

जाप : जिस तीर्थंकर का मोक्ष कल्याणक है उनकी जाप।
जैसे–ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः।

व्रत विधि : 24 उपवास या एकासन या 4 रस त्याग।

उद्यापन : व्रत पूर्ण होने पर सम्मेद शिखर की यात्रा एवं एक बार भक्ति पूर्वक विधान।

श्री सम्मेद शिखर विधान प्रारम्भ

स्थापना

कर्म नाश की उज्ज्वल भूमि, तीर्थराज सम्मेद शिखर।
श्रद्धालु के पाप हरे जो, करे वंदना गिरी ऊपर॥
हरे भरे वृक्षों से शोभित, पर्वत का कण कण पावन।
आह्वानन स्थापन करता, सिद्ध प्रभु हिय धर धारण॥
संत अनंतानंत यहाँ से, निराकार पद को पाए।
भाव सहित मैं करूँ अर्चना, अष्ट द्रव्य कर में लाये ॥
तीर्थंकर श्री बीस जिनेश्वर, सारे कर्म नशाये हैं।
हृदय कमल में आप विराजो, भाव संजोकर लाये है॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद-शिखर-सिद्ध-क्षेत्रे सर्व-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यो नमः अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद-शिखर-सिद्ध-क्षेत्रे सर्व सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद-शिखर-सिद्ध-क्षेत्रे सर्व सिद्ध परमेष्ठिभ्यो नमः अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

तीर्थराज का पावन जल ले ,त्रय धारा देने आया ।
जन्म जरा मृत नाश करो प्रभु, धर्म ध्यान की दे छाया ॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के ।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री सम्मेद-शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

तीर्थराज पर धर्म भाव की, चन्दन गंध बरसती है ।
मन की दुविधा दूर हटाकर, वंदन को ही तरसती है ॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के ।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के ॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षत

धवल सुवासित उज्ज्वल तंदुल, अक्षय भूमि पर लाऊँ।
मन वच तन को अक्षत करके, चरणों में शुभ पुँज चढ़ाऊँ॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, भाव पुष्प नूतन खिलता।
लौकिक पुष्प चढ़ाऊँ स्वामी, काम भाव नित मम मिटता॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

पर्वत पर कोटि संतों ने, अन्न पान का त्याग किया।
त्याग भाव से वंदन करके, मोक्ष महल को साध लिया ॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

सूरज चंदा तारों की नित, दीप मालिका जला करे।
सिद्ध क्षेत्र की आरती करके, निज जीवन का भला करे ॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, भक्त सदा चढ़ता जाये ।
ज्यों अग्नि में धूप जले से, धूम गगन उड़ता जाये॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशतिं-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

श्रीफल लौंग सुपारी काजू, केला आम अनार हैं।
बाहर का फल बीज रूप है, मोक्ष महाफल सार है॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः मोक्ष-फल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

अष्ट कर्म के कष्ट मिटाने, तीर्थंकर तप तपते हैं।
अष्ट गुणों की प्राप्ति हेतु, अर्घ चढ़ा जप जपते हैं॥
चतुर्गति का भ्रमण मिटाऊँ, सिद्ध क्षेत्र पर आकर के।
शुद्ध निराकुल परमातम पद, पाऊँ कर्म नशाकर के॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री-सम्मेद-शिखर-सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः अनर्घ-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

जैन धर्म का शाश्वत तीरथ, पावनता का धाम है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर को, बारम्बार प्रणाम है॥1॥
काल अनादि से इस भू पर, तीर्थंकर तप करते हैं।
कर्म कालिमा रहित आत्म कर, सिद्धालय जा बसते हैं॥2॥
महापुरुषों की महा साधना, के कारण यह तीरथ है।
कर्म भूमि में अजितनाथ से, फैली जग में कीरत है॥3॥
भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में, कल्याणक होते सुन्दर।
जन्मभूमि अयोध्या मानी, मोक्ष भूमि सम्मेद शिखर॥4॥
भारत भू के बीस तीर्थंकर, समवशरण लेकर आये।
मास पक्ष दिन योग निरोधा, कर्मनाश शिवपद पाये॥5॥
कूट कूट पर कमल रचा, जो इन्द्रों द्वारा टंकित है।
काल अनादि से यह भूमि, नर देवों से वंदित हैं॥6॥
अजितनाथ के तीर्थ काल में, चक्रवर्ती श्री सगर हुए ।
संघपति बन लाखों यात्री, लाकर तीरथ नमन किये॥7॥
कूट सिद्धवर पहला प्यारा, वंदन का क्रम चलता है।
जो यात्रा करता करवाता, कर्म बंध सब कटता है॥8॥
बाहर के तीरथ कल्याणक, भूमि भक्ति जगाती है।
भीतर का तीरथ निजआतम, ध्यान ध्येय प्रगटाती है॥9॥
तीर्थ यात्रा की अभिलाषा, नित्य हमारे मन जागे।
भक्ति ध्यान का आश्रय पाकर, निजानंद रस मे पागे॥10॥
अजितनाथ संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व प्रभो।
चंद्र पुष्प शीतल श्रेयांश पद, तीर्थराज पर नित्य नमो॥11॥
विमल अनंत धर्म सुखदायी, शान्ति कुंथू अर मल्लि जिनेश।
मुनिसुव्रत नमिनाथ नमन है, पारसनाथ तिलक तीर्थेश॥12॥
बीसों तीर्थंकर की पूजा, सिद्ध अनंतानंत भँजु।
निर्मल पावन निश्छल मन कर, पाप भाव को सदा तँजू॥13॥

कर्म चेतना में फँस करके, ज्ञान चेतना भूल गया।
पर पदार्थ के आकर्षण में, चतुर्गति में झूल गया॥14॥
पुण्योदय से नरभव पाया, तीर्थंकर जिन तीर्थ मिले।
तीर्थंकर को मन से ध्याऊँ, तीर्थ वन्दना भाव खिले॥15॥
तीर्थंकर के शुभ परमाणु, गिरिराज पर बिखरा है।
भक्ति भाव से वंदन करता, जीवन उसका निखरा है॥16॥
आज हमारे भाग्य जगे प्रभु, तीर्थराज दर्शन आया।
भाव सहित जयमाला गाकर, अर्घ्य चढ़ा मन हर्षाया॥17॥

ॐ ह्रीं विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्धपद प्राप्तेभ्यो श्री सम्मेद शिखर सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

तीर्थंकर श्री बीस जिन, सिद्ध अनंतानंत।
'सौरभ सागर' तीर्थ नमे, पाने परमानन्द॥

इत्याशीर्वाद-पुष्पांजलिं क्षिपेत्

प्रत्येक कूट अर्घ्यावली

॥ गणधर टोंक ॥

शासन नायक वर्धमान के, गणधर गौतम स्वामी हैं।
तेइसों तीर्थंकर के शुभ, गणधर चरण नमामि हैं॥
दिव्य ध्वनि की पावन गंगा, गणधर करते धारण हैं।
महावीर के ग्यारह गणधर, पैंतीस पग अभिवादन है॥

दोहा

चौबीसों जिनराज के, गणधर पूजूँ आज।
गौतम स्वामी टोंक है, तारण तरण जहाज ॥1॥

ॐ ह्रीं गौतम-स्वामी-आदि-गणधर-देव-ग्राम के उद्यान आदि भिन्न भिन्न स्थानों से जो 1452 गणधर निर्वाण पधारे हैं तिनके चरणारविन्द को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ कुंथुनाथ भगवान (ज्ञानधर कूट) ॥

ध्यान धुरंधर करुणाधारी, कुंथुनाथ कल्याण करें।
कुंथु जीव पर दया धार कर, भव्य जीव उद्धार करे॥
कूट ज्ञानधर के चरणों की, वन्दन अति सुखकारी है।
भव संताप सदा मम मेटो, अर्घ चढ़ा दुखहारी है॥

दोहा

कुंथुनाथ भगवान को, वंदन बारम्बार।
कूट ज्ञानधर आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥2॥

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 96 कोड़ा कोड़ी, 96 करोड़, 32 लाख, 96 हजार, 742 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ नमिनाथ भगवान (मित्रधर कूट) ॥

दिव्य गिरि सम्मेद शिखर से, नमिनाथ निज धाम गये ।
शिष्य हजारों नमिनाथ के, कर्म खपा निष्काम भये॥
कूट मित्रधर अर्घ्य चढ़ाऊँ, मन पवित्र कर दो मुनिराज।
तीर्थ वंदना धर्म साधना, का साधन है तीरथ राज॥

दोहा

नमिनाथ भगवान को, वंदन बारम्बार।
कूट मित्रधर आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि कोड़ा कोड़ी, 1 अरब, 45 लाख, 7 हजार, 942 मुनि इस कूट से सिद्ध भये, तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो-जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ अरहनाथ भगवान (नाटक कूट) ॥

कण कण पावन तीर्थराज का, अरहनाथ उपकारी है ।
एक अरब में एक न्यून मुनि, मोक्ष गये गुणधारी हैं॥
चक्रवर्ती और काम देव का, नाटक तजकर मुनि बने।
तीर्थंकर श्री अरहनाथ जी, मोक्ष गये हम चरण नमें॥

दोहा

अरहनाथ भगवान को, वंदन बारम्बार।
नाटक कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री अरहनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 99 करोड़, 99 लाख, 99 हजार, 999 (यानि 1 कम 1 अरब मुनि) इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 96 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ मल्लिनाथ भगवान (संवल कूट) ॥

मल्लिनाथ हे काम विजेता, मोह मल्ल को दूर किया।
संवल कूट से मोक्ष पधारे, निर्बल बल भरपूर दिया ॥
पाँच शतक मुनिराज संघ में, खड्गासन से मोक्ष गये।
अर्घ्य चढ़ाकर करूँ वंदना, कर्म नशा परोक्ष भये॥

दोहा

मल्लिनाथ भगवान को, वंदन बारम्बार।
संवल कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥5॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 96 करोड़ इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ श्रेयांसनाथ भगवान (संकुल कूट) ॥

निराकार निश्रेयस सुख पा, सिद्धालय में राज रहे।
हरे भरे पर्वत के ऊपर, नाथ श्रेयांस विराज रहे॥
संकुल कूट में साधू कुल का, दिव्य संघ सुसज्जित है।
अर्घ चढ़ाऊँ गुण गरिमा गा, त्याग भाव अनुरंजित है॥

दोहा

श्रेयांस नाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
संकुल कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥6॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 96 कोड़ा-कोड़ी, 96 करोड़, 96 लाख, 9 हजार, 542 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ पुष्पदंत भगवान (सुप्रभ कूट) ॥

सूर्य प्रभा सम श्वेत वर्ण के, पुष्पदंत भगवान महान ।
सुप्रभ कूट से खड्गासन में, कर्म खपाया दुःख की खान॥
मन की कलियाँ पुष्पदंत सम, खिलकर चऊ दिश महक रहा।
सर्व कूट के यहाँ खड़े हो, दर्शन कर मन चहक रहा॥

दोहा

पुष्पदंत भगवान को, वंदन बारम्बार।
सुप्रभ कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार॥7॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंत-जिनेन्द्रादि-मुनि 1 कोड़ा कोड़ी, 99 लाख, 7 हजार, 780 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ पद्मप्रभ भगवान (मोहन कूट) ॥

लाल बाल सूरज सम आभा, नीचे ऊपर छिटक रही।
पदम् प्रभु के पाद पद्म का, दर्शन करके चमक रही ॥
तीन शतक चौबीसों मुनिवर, संघ आपके गये निर्वाण ।
मन का मेरा पद्म खिला दो, पद्म प्रभु पावन भगवान ॥

दोहा

पद्म प्रभु भगवान को, वंदन बारम्बार।
मोहन कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥8॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ-जिनेन्द्रादि-मुनि 99 करोड़, 87 लाख, 43 हजार, 757 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ मुनिसुव्रत नाथ भगवान (निर्जर कूट) ॥

महाव्रतों की महासाधना, महामुनि बन आप करे।
नामोच्चारण मुनिसुव्रत का, मन के सारे पाप हरे॥
ऊँचें वृक्षों के नीचे आ, खड्गासन निज ध्याया हैं ।
निर्मल निश्छल निराकार पद, निर्जरकूट से पाया हैं॥

दोहा

मुनिसुव्रत भगवान को, नमन हो बारम्बार।
निर्जर कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥9॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 99 कोड़ा कोड़ी, 99 करोड़, 99 लाख, 999 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ चन्द्रप्रभु भगवान (ललित कूट) ॥

घटता बढ़ता कल्मषता ले, श्यामाकर नभ में सोहे।
चन्द्र नाथ अकलंक जिनेश्वर, भक्त जनों का मन मोहे॥
ललित कूट की ऊँची चोटी, पग पग चल चरणा नमते।
चारु चरण आचरण बढ़ाते, अर्घ चढ़ाकर नित भजते॥

दोहा

चन्द्रप्रभु भगवान को, नमन हो बारम्बार।
ललित कूट भी आ गया, नमन करो स्वीकार ॥10॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभु-जिनेन्द्रादि-मुनि 984 अरब, 12 करोड़, 80 लाख, 84 हजार, 595 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 66 लाख उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ आदिनाथ भगवान की टोंक ॥

आदि युग के आदि जिनेश्वर, आदिनाथ भगवान महान।
आयोध्या जन्मे प्रथमेशा, अष्टापद से गए निर्वाण ॥
तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, चरण कमल स्थापित है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, जीवन मेरा अर्पित है॥

दोहा

ऋषभदेव भगवान को, नमन हो बारम्बार।
चरण कमल की वंदना-सम्मेद शिखर के द्वार ॥11॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभनाथ-जिनेन्द्रादि 10 हजार मुनि कैलाश पर्वत से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ शीतलनाथ भगवान (विद्युतवर कूट) ॥

शुक्ल अष्ट अश्विनकी प्यारी, सिद्ध शिला को पाया है।
शीतल स्वामी शीतलता दे, शील व्रतों को ध्याया है ॥
तीर्थ राज सम्मेद शिखर का, विद्युत कूट चमकता है।
अष्ट द्रव्य से पूजा कर लो, सम्यग दर्श प्रगटता है॥

दोहा

शीतलनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
विद्युत् कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥12॥

ॐ ह्रीं शीतलनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 18 कोड़ा कोड़ी, 42 करोड़, 32 लाख, 42 हजार, 905 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ अनंतनाथ भगवान (स्वयंभू कूट) ॥

जन्म मोक्ष तीर्थंकर भूमि, आयोध्या सम्मेद शिखर।
स्वयं स्वयंभू आत्म हितैषी, नाम अनंत नाथ जिनवर॥
गुण अनंत को प्रगट किया, अरुँ कर्म अनंता नाश किया।
सुख अनंत को पाकर जिनवर, सिद्ध शिला में वास किया॥

दोहा

अनंतनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
कूट स्वयंभू आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥13॥

ॐ ह्रीं अनंतनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 96 कोड़ा कोड़ी, 70 करोड़, 70 लाख, 70 हजार, 700 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ संभवनाथ भगवान (धवलदत्त कूट) ॥

श्रावस्ती में जन्मे जिनवर, शाश्वत भूमि पर आये।
एक माह तक योग निरोधा, संभव निज वैभव पाए ॥
भव सागर के तारण हारे, संभवनाथ सदा सुखकार ।
कूट धवल में आत्म धवल कर, अर्घ चढ़ाऊँ करुणाधार॥

दोहा

संभवनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
कूट धवल भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥14॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 9 कोड़ा कोड़ी, 12 लाख, 42 हजार, 500 मुनि, इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 42 लाख उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ वासुपूज्य भगवान की टोंक ॥

चम्पापुर नृप वसुपूज्य के, वासुपूज्य है पुत्र महान।
बाल ब्रह्मचारी तीर्थंकर, वसुंधरा के दिव्य ललाम ॥
चम्पावन मन्दारगिरि जा, आठों कर्म नशाया है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, चरणों अर्घ चढ़ाया है॥

दोहा

वासुपूज्य भगवान को, नमन हो बारम्बार।
अष्ट द्रव्य अर्पित करूँ, श्रद्धा मन में धार ॥15॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्रादि-चम्पापुर के मन्दारगिरि से 1000 मुनि सिद्ध भए तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। अभिनन्दननाथ भगवान (आनंद कूट) ।।

अभिनन्दन का अभिवन्दन तो, इंद्र शतक निशदिन करते।
क्रोध वैर मद पाप विनाशक, नित्य साधना निज वरते।।
भक्ति में आनंद मग्न हो, अभिनन्दन द्वारे आये।
निजानंद चैतन्य बिहारी, अर्घ चढ़ा चित उमगाये।।

दोहा

अभिनन्दन भगवान को, नमन हो बारम्बार।
आनंद कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ।।16।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दन नाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 72 कोड़ा कोड़ी, 70 करोड़, 70 लाख, 42 हजार, 700 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 लाख उपवास का फल प्राप्त होता है)

।। धर्मनाथ भगवान (सुदत्तवर कूट) ।।

सम्मेदाचल धर्म तीर्थ है, धर्म भाव बढ़ता जाता।
दया धर्म से परि-पूरित मन, कर्म नशा शिव सुख पाता ।।
पुष्य योग में जन्मे जिनवर, पुष्य योग में मोक्ष प्रयाण।
सुन्दर मनहर कूट सुदत्तवर, अर्घ चढ़ा कर करूँ प्रणाम।।

दोहा

धर्मनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
सुदत्तवर कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ।।17।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 29 कोड़ा कोड़ी, 19 करोड़, 9 लाख, 9 हजार, 795 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ सुमतिनाथ भगवान (अविचल कूट) ॥

मंद हवाएँ सर-सर बहती, वृक्षों के पत्ते हिलते ।
कूट-कूट पर दिव्य त्याग के, अद्‌भुत पुष्प खिले मिलते॥
मंदमति भी सुमतिनाथ नम, बुद्धिमान हो जाते हैं।
अविचल निर्मल मनहर उज्ज्वल सुमतिनाथ गुण गाते हैं॥

दोहा

सुमतिनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
अविचल कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥18॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 1 कोड़ा कोड़ी, 84 करोड़, 72 लाख, 81 हजार, 781 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़, 32 लाख उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ शांतिनाथ भगवान (कुंदप्रभ कूट) ॥

विश्वसेन ऐरा के नंदन, त्रिपदधारी शांति जिनेश।
मन की शांति त्रिभुवन शांति, शांत करो सब द्वंद क्लेश॥
तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, कुंदप्रभा है कूट महान।
द्रव्य भाव से अर्घ समर्पित, शांतिनाथ जय दया निधान॥

दोहा

शांतिनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
कुंदप्रभ कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार॥19॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 9 कोड़ा कोड़ी, 9 लाख, 9 हजार, 999 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ महावीर भगवान की टोंक ॥

महावीर जिन शासन नायक, वर्धमान अतिवीर महान।
ऋजुकूला के तट पर पाया, नाश घातियाँ केवलज्ञान॥
पावापुर का पद्म सरोवर, मोक्ष भूमि कहलाती है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, उनकी याद दिलाती है॥

दोहा

महावीर भगवान को, वंदन बारम्बार।
सुख शांति सब प्राप्त हो, अर्घ करो स्वीकार ॥20॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर-स्वामी पावापुर के पद्म सरोवर स्थान से 26 मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ सुपार्श्वनाथ भगवान (प्रभास कूट) ॥

शाश्वत भूमि पर स्वास्तिक का, चिन्ह सदा शाश्वत रहता।
इंद्रदेव सौधर्म ब्रज से, उसको चिह्नांकित करता॥
नाथ सुपारस शाश्वत भू पर, शाश्वत पद को पाया है।
नश्वर जीवन शाश्वत होवे, अर्घ चढ़ा गुण गाया है॥

दोहा

सुपार्श्वनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
प्रभास कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥21॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 49 कोड़ा कोड़ी, 84 करोड़, 72 लाख, 7 हजार, 742 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 32 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ विमलनाथ भगवान (सुवीर कूट) ॥

निर्मल निश्छल अमल विमल पद, निर्बल के सम्बल भगवान।
एक मास तक योग निरोधा, सम्मेदाचल धर कर ध्यान॥
साठ धनुष की ऊँची काया, खड्गासन में भाया है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, मन मेरा हर्षाया है॥

दोहा

विमलनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
सुवीर कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥22॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 70 कोड़ा कोड़ी 60 लाख 6 हजार 742 मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 1 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ अजितनाथ भगवान (सिद्धवर कूट) ॥

अजितनाथ जित कर्म विजेता, गज लांछन से शोभित हैं।
चौथे काल के प्रथम तीर्थंकर, तीन लोक में पूजित हैं॥
जन्म मोक्ष आगम अनुकूला, आयोध्या सम्मेद शिखर।
भाव सहित सब करो वंदना, पहला कूट है श्री सिद्धवर॥

दोहा

अजितनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
सिद्धवर कूट भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार॥23॥

ॐ ह्रीं श्री अजित-नाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 1 अरब, 80 करोड़, 54 लाख, मुनि इस कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(इस कूट की भाव सहित वंदना करने से 32 करोड़ उपवास का फल प्राप्त होता है)

॥ नेमिनाथ भगवान की टोंक ॥

उर्जयन्त पंचम गिरिवर है, गिरनारी का शिखर महान।
नील गगन के नीचे शोभित, नेमिनाथ निश्छल भगवान॥
पद्मासन में ध्यान लगाकर, निराकार पद पाया है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर पर, अर्घ चढ़ा सुख पाया है॥

दोहा

नेमिनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
सर्व अरिष्ट निवार कर, करो मेरा उद्धार ॥24॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ-जिनेन्द्रादि-शम्भू-प्रदुमन-अनिरुद्धादि 72 करोड़, 700 मुनि गिरनार पर्वत से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ पार्श्वनाथ भगवान (सुवर्णभद्र कूट) ॥

श्याम छटा में पूर्ण चंद्र सम, स्वर्ण भद्र में दमक रहे।
उगते सूरज की आभा ले, पर्वत पर है चमक रहे॥
तीर्थराज सम्मेद शिखर का, मुकुट यही कहलाता है।
मुकुट सप्तमी श्रावण शुक्ला, मोदक भक्त चढ़ाता है॥

दोहा

पार्श्वनाथ भगवान को, नमन हो बारम्बार।
सुवर्णभद्र भी आ गया, अर्घ करो स्वीकार ॥25॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ-जिनेन्द्रादि-मुनि 82 करोड़, 84 लाख, 45 हजार, 742 मुनि इस परम पुनीत कूट से सिद्ध भये तिनके चरणारविंद को मेरा मन वचन काय से बारम्बार नमस्कार हो, जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(एक बार इस कूट का शुद्ध भाव से ध्यान व दर्शन करने से पशु गति से छुटकारा हो जाता है और 16 करोड़ उपवास का फल एक बार वंदना करने से प्राप्त होता है)

भावनार्घ्य

तीर्थराज सम्मेद शिखर में, बार बार आऊँ जिनराज।
मन में शांति तन में शक्ति, बनी रहे वंदन के काज॥
पैदल पैदल करूँ वन्दना, हर्षित हो पर्वत चढ़के।
मरण समाधी तीर्थराज में, त्याग करूँ मैं बढ़ चढ़ के॥

ॐ ह्रीं सम्मेद-शिखर-पर्वते-भाव-वंदना-भावसमाधि-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन प्रतिमा अर्घ्य

दोहा

कोड़ा कोड़ी मुनिवरा, कर्म नशावें आन।
भक्ति से वंदन करूँ, करे कर्म की हान॥
तीर्थराज में भक्त जन, भगवन् को हे ध्याय।
जिन प्रतिमा जितनी यहाँ, पूरण अर्घ्य चढ़ाय॥

ॐ ह्रीं सम्मेद-शिखर-स्थित-सर्व-जिनालये सर्व-जिनबिम्बेभ्यो: नम: पूणार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

सिद्ध क्षेत्र की वन्दना, धर्मभाव आधार।
निराकार भगवान हैं, भक्त सभी साकार॥
आत्म रूप में रम रहे, त्यागे कर्म विकार।
'सौरभ सागर' भक्त बन, करे आत्म उद्धार॥

ॐ ह्रीं अढ़ाईद्वीप-दोसमुद्र-पन्द्रह-कर्मभूमि-स्थित-सर्व-क्षेत्रे सिद्ध-पद-प्राप्त परमेष्ठीभ्यो: नम: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्य सिद्ध क्षेत्र अर्घ्यावली

॥ कैलाश गिरी सिद्ध क्षेत्र ॥

आदिनाथ ने अष्टापद से, अष्टम वसुधा पाया है।
कैलाश गिरी से मोक्ष पधारे, प्रथम देव को ध्याया है॥
तीर्थराज सम्मेद शिखर सम, सिद्ध क्षेत्र भी पावन है।
श्वेत शिखर बर्फीला सुन्दर-अर्घ चढ़ा मन भावन है॥1॥

ॐ ह्रीं अष्टापद-सिद्ध-क्षेत्रे श्री-आदिनाथ-जिनेन्द्राये दश-सहस्र-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ पावागिरी सिद्ध क्षेत्र ॥

बालपने में कर्म वीर थे, लवणांकुश श्रीराम जने ।
गुण गंभीरा ध्यान लगाकर, धर्म वीर सब कर्म हने॥
पंच कोटि मुनि कर्म नशाकर, सिद्ध शिला को पाया है।
पावागिरी श्री सिद्ध क्षेत्र को, निर्मल अर्घ चढ़ाया है॥2॥

ॐ ह्रीं पावागिरि-श्री-सिद्धक्षेत्र-लव-कुश-मुनिवरेभ्यो पंच-कोटि-सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ शत्रुंजय सिद्ध क्षेत्र ॥

परम हितैषी ज्ञानवान थे, बल तीनों में भरा हुआ।
गृह परिवार राज्य को पाया, पर जीवन न खरा हुआ॥
भीम युधिष्ठिर अर्जुन तपसी, शत्रुंजय उपसर्ग सहा।
आठ कोटि मुनि कर्म नशाये, अर्घ चढ़ाये तीर्थ महा ॥3॥

ॐ ह्रीं शत्रुंजय-सिद्ध-क्षेत्रे युधिष्ठिर-भीम-अर्जुन-मुनिवरेभ्ये अष्ट-कोटि सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ मांगीतुंगीगिरि सिद्ध क्षेत्र ॥

बलशाली हनुमान राम और गव गवाक्ष नील मुनिराज ।
तुंगी गिरी से मोक्ष पधारे कोड़ी निन्यानवे श्री ऋषिराज ॥

पर्वत ऊँचा दक्षिण दिश का सम्मेद शिखर कहलाता है ।
सिद्ध क्षेत्र की पावन भूमि वंदन कर्म नशाता है।।4।।

ॐ ह्रीं मांगीतुंगी-गिरि-सिद्ध-क्षेत्रे राम-हनुमान-गव्-गवाक्ष-नील-महानील-सुग्रीवादि-निन्यानवे-कोटि-सर्व-मुनिवरेभ्यो: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। मुक्तागिरि, नैनागिरि, कुन्थुगिरि सिद्ध क्षेत्र ।।

मुक्तागिरि से मुक्ति पधारे, साढ़े तीन कोटि मुनिराज ।
कुन्थुगिरि से कुल-देशभूषण, पाया सिद्धालय का राज।।
नैनागिरि से वरदत्तादि, पंच मुनि निज कर्म हने ।
अर्घ चढ़ाऊँ तीनों तीरथ, मोक्ष मार्ग की राह बने ।।5।।

ॐ ह्रीं मुक्तागिरि-सिद्ध-क्षेत्रे तीन-कोटि-मुनिवरा, कुन्थुगिरि सिद्ध-क्षेत्रे कुलभूषण-देशभूषण-मुनिवरा-तथैव-नैनागिरि-सिद्ध-क्षेत्रे-वरदत्तादि-पंच मुनिवरेभ्यो: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। सोनागिर सिद्ध क्षेत्र ।।

श्रमणगिरि सोनागिर सुन्दर, छोटा पर्वत सुखकारी।
चंदाप्रभु के समवशरण से, महिमा इसकी है न्यारी।।
नंगा नंग थे भ्राता साधक, कोटि पंच लक्ष पच्चास।
अर्घ चढ़ाऊँ मुनि चरणों में, निज आतम में करने वास।।6।।

ॐ ह्रीं सोनागिरि-सिद्ध-क्षेत्रे नंग-नंगादि-मुनिवरेभ्ये: पाँच-कोटि-पाँच शतक-मुनिवरेभ्ये: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

।। सिद्धवरकूट सिद्ध क्षेत्र ।।

कामदेव सा रूप मनोहर, काम भाव को त्याग दिया।
दो चक्री दश कामदेव ने, तप करने संन्यास लिया।।
रेवा नदी के तटपर आकर, कूट सिद्धवर सिद्ध बने ।
अर्घ चढ़ाऊँ सिद्ध क्षेत्र को, धर्म क्षेत्र प्रसिद्ध बने।।7।।

ॐ ह्रीं सिद्धवरकूट-सिद्धक्षेत्र-द्विचक्री-दश-कामदेव-मुनिवरेभ्यो: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ बड़वानी सिद्ध क्षेत्र ॥

बावनगज के आदिनाथ की, प्रतिमा सुन्दर मनहर है।
ऊपर- ऊपर चूल गिरी है, तप करते दो मुनिवर हैं॥
इंद्रजीत और कुंभकर्ण दो, कर्म धर्म में शूर रहे।
अर्घ चढ़ाऊँ सिद्ध क्षेत्र को, पाप कर्म से दूर रहे॥8॥

ॐ ह्रीं बड़वानी-सिद्धक्षेत्र-इंद्रजीत-कुंभकर्ण-मुनिवरेभ्ये: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

॥ द्रोणागिरि सिद्ध क्षेत्र ॥

द्रोणागिरि में गुरुदत्त पर, संकट आया अति विकराल।
तन में रुई लपेटा पापी, आग लगा मारा तत्काल॥
संत सौम्य रह समता धरकर, जीवित तन जलते देखा।
परिणामों की उज्ज्वलता ने, सिद्धालय की दी रेखा॥ 9॥

ॐ ह्रीं द्रोणागिरि-सिद्धक्षेत्र-गुरुदत्तादि-सर्व-मुनिवरेभ्यो: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतिम अर्घ्य

भूमि ईषत प्राग्भार की, कर्म भूमि जितनी मानो।
लाख पैंतालिस योजन वाली, कर्म दली उतनी जानो॥
कदम कदम से सिद्ध बने हैं, तपसी मुनिवर धर कर ध्यान।
'सौरभ सागर' सिद्ध भूमि को, अर्घ चढ़ाकर करे प्रणाम॥10॥

ॐ ह्रीं पैंतालिस-लाख-योजन-मध्य-सिद्धपद-प्राप्त-सर्वसिद्धेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य-ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं अन्नतान्त सिद्ध परमेष्ठीभ्यो नम:।

स्त्री का फल पुत्र है, शास्त्र का फल शान्ति है, सम्पत्ति का फल दान है, मुनियों का फल ज्ञान है, शूरता का फल भयभीत मनुष्यों की पीड़ा नष्ट करना है, यौवन का फल दीक्षा है और जन्म धारण करने का फल श्री जिनेन्द्र देव के चरण कमल युगल निरन्तर सेवा करना है।

जयमाला

तीर्थराज सम्मेद शिखर की, जय जय कर वंदन करता।
तीरथ की पावन रज मस्तक, लगते ही क्रंदन हरता॥1॥
टोंक टोंक पर तीर्थंकर के, चरण नमें सुखकारी है।
पग पग ऊपर चढ़ता जाऊँ, जिनवर सब दुखहारी हैं॥2॥
हरियाली की टोप लगाए, पर्वत मनहर सुन्दर है।
प्रथम कूट का नाम "सिद्धवर", अजितनाथ तीर्थंकर है॥3॥
"धवल कूट" से संभवनाथा, अभिनंदन आनंदम है।
सुमतिनाथ "अविचल" सुखकारी बुद्धि सुवासित चन्दन है॥4॥
"मोहन कूट" से पद्म प्रभु जी, आतम पद्म खिलाये है।
नाथ सुपारस कूट "प्रभास" से, सिद्धालय पद पाये है॥5॥
चंद्र प्रभु चंदा सम सोहे, "ललित कूट'' है गिरी विशाल।
पुष्पदंत के चरण नमे जो, "सुप्रभ कूट'' में करे निहाल॥6॥
मंद सुगंध वयारि के संघ, अर्घ चढ़ा बढ़ता जाऊँ।
"विद्युत् कूट" में शीतल प्रभु की, वंदन कर मैं हर्षाऊँ॥7॥
जैन धर्म के कुलाचार का, "संकुल कूट" में नीयम हो।
श्री श्रेयांश का दर्शन प्यारा, त्याग धर्म मय जीवन हो॥8॥
वीर बलि "सुवीर कूट" तक, विमल नाथ को नमता चल।
कूट "स्वयंभू'' नाथ अनन्ता, कर्म नशाने भजता चल॥9॥
धर्मनाथ का कूट "सुदत्ता'', कूट "कुंदप्रभ'' शान्ति जिनेश।
कुन्थुनाथ का कूट "ज्ञानधर", वंदन कर तज राग द्वेष॥10॥
अरहनाथ अरिदमन करावे, "नाटक कूट'' में दर्शन हो।
"सम्बल कूट" का आलम्बन हो, मल्लि चरण स्पर्शन हो॥11॥
कर्म निर्जरा वंदन से कुछ, हम भक्तो का हो जावे।
"निर्जरकूट" में मुनिसुब्रत के, व्रत से कर्म विनश जावे॥12॥
तीनलोक में शत्रु ना हो, कूट "मित्रधर" आ जाऊँ।

नमिनाथ की करूँ वन्दना, तीर्थंकर पद को पाऊँ॥13॥
पार्श्वनाथ पर्वत के मालिक, "स्वर्णभद्र" विराज रहे।
चतुर्गति के बंधन काटो, जगती का ना काज रहे॥14॥
बीसों तीर्थंकर हितकर हैं, नर देवों से वन्दित हैं।
देव देवियाँ हरपल भ्रमते, रक्षित पर्वत शोभित है॥15॥
आदिनाथ और वासुपूज्य का, टोंक बना मनहारी है।
नेमिनाथ महावीर प्रभु को, वंदन यहाँ हमारी है॥16॥
पर्वत पर पावन संतो के, शुभ परमाणु फैले हैं।
रोग-शोक व्याधि बाधा के, दूर रहे सब रेलें हैं॥17॥
नियम लेकर भाव सहित जो, वंदन पूजन करता है।
नरक पशुगति का बंधन तो, इस भव में ही छँटता है॥18॥
घर से जब यात्रा को निकलें, रात्रि भोजन व्यसन तजे।
प्रासुक जल मर्यादित भोजन, सुबह शाम ही ग्रहण करें॥19॥
णमोकार या सिद्ध प्रभु की, सोते उठते जाप करें।
शुद्ध वसन तन मन निर्मल कर, यात्रा से सब पाप हरें॥20॥
अंतिम टोंक की वंदना करके, क्षमायाचना नित्य करें।
फिर से जब तक दर ना आऊँ, एक नियम को ग्रहण करें॥21॥
ऐसे भावों की शुभ यात्रा, नरक पशु गति मुक्त करे।
तन मन घर परिवार मित्र की, सुख शांति अभिव्यक्त करे॥22॥
तीर्थराज सम्मेद शिखर तो, जैनों की रजधानी है।
भारत भर के जैनो का यह, तीर्थ महा कल्याणी है॥23॥
जिन मंदिर से भरा क्षेत्र यह, ऊपर नीचे सोह रहा।
पूजा भक्ति स्वाध्याय व्रत, मुनि दर्शन मन मोह रहा॥24॥
चारों ओर से जैनी बंधु, यात्रा करने आते हैं।
ध्वजा चढ़ाते छत्र चढ़ाते, अर्घ चढ़ा हर्षाते हैं॥25॥
मंत्र जाप पूजा से गुंजित, पर्वत मंगलकारी है।
मनोकामना पूरण होती, श्रद्धाफल अति भारी है॥26॥

एक अरब बारह कोटि फल, उपवासों का मिलता है।
चार कोटि प्रोषध का फल भी, सर्व कष्ट को हरता है।।27।।

सिद्ध क्षेत्र निर्वाण भूमि या, शाश्वत धाम कहाता है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर से, जैनों का ही नाता है।।28।।

इसकी महिमा गरिमा को हम, निज भक्ति से बढ़ायेंगे।
पावनता नैतिकता मन धर, तीरथ स्वच्छ बनायेंगे।।29।।

बाहर निर्मल भीतर निर्मल, निर्मल शाश्वत धाम है।
तीर्थराज सम्मेद शिखर को, बारम्बार प्रणाम है।।30।।

ॐ ह्रीं श्री विंशति-तीर्थंकराय संख्यात-मुनि-सिद्ध-पद-प्राप्तेभ्यो श्री सम्मेद-शिखर-सिद्ध-क्षेत्रेभ्यो नमः जयमाला पूर्णार्घ्यंम् निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

तीर्थराज सम्मेद शिखर, वंदु मन वच काय।
'सौरभ सागर' भक्ति कर, निश्चय शिव सुख पाय।।

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलिं क्षिपेत्

7. माँ जिनवाणी विधान
(श्रुत स्कंध विधान)

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

7. माँ जिनवाणी विधान
माण्डला

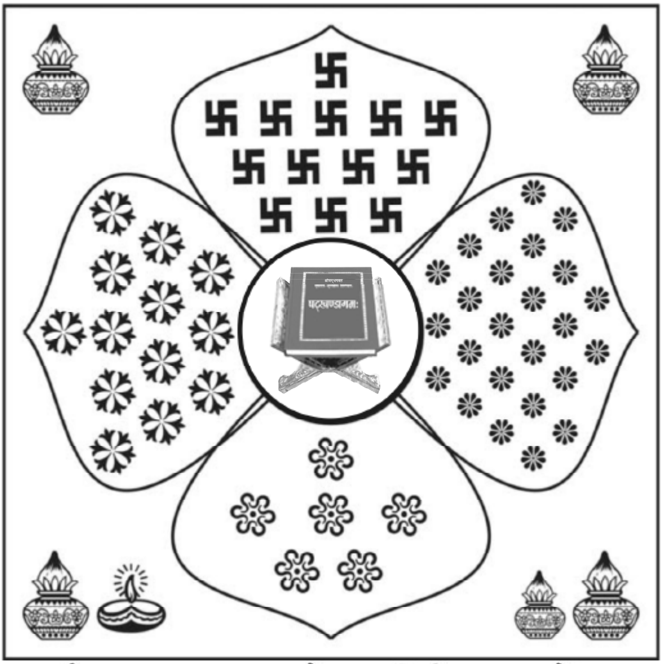

कुल अर्घ्य 58 : प्रथम वलय में 13, द्वितीय वलय में 13, तृतीय वलय में 25, चतुर्थ वलय में 6 तथा सम्पूर्णार्घ्य 1

मां जिनवाणी विधान व्रत विधान

व्रतारम्भ : किसी भी माह की पंचमी तिथि से प्रारंभ

अवधि : 1 वर्ष से 2 वर्ष

व्रत पूजा : मां जिनवाणी विधान अथवा प्रत्येक अंग पूर्वक पूजन एवं एक शास्त्र को सुरक्षित करना, वेष्टन लगाना आदि

जाप : ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव वाग्वादिनी सरस्वत्यै नमः, ॐ ह्रीं द्वादशांगाय नमः, या अंग नाम पूर्वक जाप।
जैसे–ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव आचारांगाय नमः

व्रत विधि : 25 उपवास या एकासन या रस परित्याग पूर्वक

माँ जिनवाणी विधान प्रारम्भ

स्थापना

समवशरण में तीर्थंकर की, दिव्य ध्वनि तन से खिरती।
द्वादशांग-मय गणधर द्वारा, शब्द अर्थ हो नित कहती॥
परम ब्रह्म और शब्द ब्रह्म का, मेल जिनागम कहलाता।
संशय-विभ्रम नाशन हेतु, अध्ययन आराधन भाता॥

दोहा

द्वादशांग-मय शब्द का, आगम में अनुवाद।
अष्ट द्रव्य से पूजता, श्री जिनवाणी मात॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुतदेवता अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वानम्।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुतदेवता अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः इति स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुतदेवता अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

जैसे पात्रों में जल जाता, वैसा ले लेता आकार।
ज्ञान नीर भी मिथ्या-सम्यक्, होता निज भावानुसार॥
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

पादप सुरभित चन्दन का शुभ, गंध सुवासित देता है।
शत्रु मित्र का भेद मिटाकर, जिन आगम सम होता है॥
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

द्वादशांग मय अक्षर अक्षत, तंदुल मुट्ठी भर लाया।
भाव द्रव्य श्रुत आगम पाकर, तत्व बोध कर हर्षाया॥
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: अक्षय-पद-प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

सूरज की ज्यों किरणें पाकर, कमल पुष्प खिल जाता है।
अरिहंतों की वाणी सुनकर, मन उपवन खिल जाता है॥
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

भूमिपर जो नाज उगा है, भोजन बन तन तृप्त करे।
आगम से जो ज्ञान मिला है, धर्मभाव परिपुष्ट करे॥
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

जगमग दीपक बाहर का तम, हरता वस्तु दिखलाता।
ज्ञानदीप आगम का जलता, निज आतम को बतलाता॥
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है॥

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

अष्टगंध की धूप मनोहर, जलकर सुरभित करता है।
अष्ट मातृका ज्ञान मात्र ही, क्रिया करें भव तरता है।।
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है।।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

तरुवर का फल पुनः बीज बन, अपना वंश बढ़ाता है।
जिनवाणी का ज्ञान विमल कर, केवल ज्ञान जगाता है।।
तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि शुभ, गणधर द्वारा गुम्फित है।
मुनियों द्वारा लिखा गया जो, भक्त जनों से वन्दित है।।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: मोक्ष महाफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

दिव्य ध्वनि का निर्मल जल ले, तत्वों का चन्दन लाया।
अंग पूर्व का अक्षत लेकर, धर्म पुष्प मन खिलवाया।।
नय निक्षेप का नेवज लेकर, गुणस्थान का दीप जला।
अष्ट कर्म का धूम उड़ाया, निराकार फल मोक्ष मिला।।
चारों अनुयोगों से पूरित, जिन आगम को जान रहे।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाकर, जिनवाणी सम्मान करें।।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

महावीर की दिव्य ध्वनि तो, ग्यारह गणधर ने झेली।
बासठ वर्षों तक क्रम केवली, अनुबद्ध हो कर फैली।।
पंच केवली श्रुत में आकर, द्वादशांग विस्तार करें।
दशम पूर्व के ग्यारह मुनिवर, सर्व पाप निस्तार करें।।1।।

एक शतक तेईस वर्षों तक, ग्यारह अंग धरे मुनिराज।
अठ नव दश अंगों के धारी, तपसी थे सारे ऋषिराज।।
छः सौ तिरासी वर्षों तक, निर्ग्रन्थ महासंघ बना रहा।
असंख्यात निर्ग्रन्थ श्रमण से, जैन धर्म भी जमा रहा।।2।।

सिद्धान्तों की शुद्ध शृंखला, मुनियों से चलती आई।
ऋषभ देव से महावीर तक, तत्व द्रव्य कहती आई।।
द्वादशांगमय माँ जिनवाणी, ज्ञान सदा सुख दायी है।
"आचारांग" या "सूत्र कृतांगम्", धर्म भाव विकसायी है।।3।।

जीव राशि किस-किस योनि में, "स्थानांग" बताता है।
"समवायांग" या "व्याख्या प्रज्ञप्ति", समाधान कर जाता है।।
मुनिराजों की "ज्ञातृ कथा" जो, श्रद्धाभाव जगाते हैं।
"उपासकाध्यनांग" सदा ही, त्याग भाव बढ़ाते हैं।।4।।

"अंतकृत" दश "अनुत्तरं" अरुँ, "प्रश्न व्याकरण" का सुज्ञान।
"सूत्र विपाक" भी श्री जिनवाणी, "दृष्टि वाद" है पूर्ण विज्ञान।।
एक सौ बारह कोटि से भी, लाख तिरासी ज्यादा है।
अट्ठावन हज्जार पदों से, पाँच अधिक पद गाथा है।।5।।

एक अंग के धारी मुनिवर अर्हत्बली शुभ नाम कहो।
महाज्ञान धारी "धरसेना", मंत्र ज्ञान से युक्त अहो।।
दो शिष्यों को पास बुलाकर, मंत्र सिद्ध था करा दिया।
"महाकम्म पयडि पाहुड" का, दिव्य पाठ भी पढ़ा दिया।।6।।

महामनस्वी पुष्पदंत ने, "महामंत्र णमोकार" लिखा।
एक सौ सत्तहतर सूत्र ज्ञान में, जीव द्रव्य संसार दिखा।।
"पुष्पदन्त" अरुँ "भूतबली" ने, आगम का रस पिला दिया।
षट्खण्डागम् ग्रन्थ प्रगट कर, जैन धर्म को खिला दिया।।7।।

"षट्खण्डागम्" जैन धर्म का, मूल ग्रन्थ और मंत्र कहा।
जैनागम का सूर्योदय था, "श्रुत पंचमी" पर्व महा।।
उसी ज्ञान की अविरल धारा, ग्रन्थों में चलती आई।
णमोकार का आश्रय लेकर, शास्त्रों में ढलती आई।।8।।

अर्हन्तों की ॐ ध्वनि का, द्वादशांग में सार है।
तीर्थंकर परमेष्ठी वाणी, करती जग उद्धार है।।
जिनवाणी का अक्षर अक्षर, मंत्र रूप हो जाता है।
पत्रों पर अंकित होकर के, द्रव्य ग्रन्थ कहलाता है।।9।।

आगम के त्रय अक्षर हमको, "आप्त" ध्वनि बतलाते हैं।
"गणधर" द्वारा भाव ग्रन्थ रच, द्वादशांग कह जाते हैं।।
म अक्षर "मुनियों" का वाचक, द्रव्य ग्रन्थ प्रस्तुत कर्ता।
षट्खण्डागम् जय हो तेरी, पूजा कर सब दुख हर्ता।।10।।

सरस्वती जिनवाणी माता, हंस वाहिनी नाम तेरा।
तिमिर हारिणी ब्रह्मचारिणी, वाग्वादिनी नमन मेरा।।
जिनवाणी के जिनवचनों की, निज वचनों से गुण गाऊँ।
द्वादशांग मय 'सौरभ सागर', ज्ञानानन्द में खो जाऊँ।।11।।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

जिनवाणी जिनदेव की, दिव्यध्वनि सुखकार।
पुष्पांजलिं क्षेपण करूँ, देकर शान्तिधार।।

शान्तये शान्तिधारा पुष्पांजलिं क्षिपेत्

प्रथम वलय–श्रुताराधना

ऋषभदेव महावीर की वाणी, भुवन व्यापिनी मंगलकार।
वृषभसेन से गौतम स्वामी, अर्थ बता करते उद्धार॥
पूर्वापर अविरुद्ध वाग्मय, शब्द रूप संबोध करें।
सम्यग् दर्शन ज्ञान-चरित दें, भव्य जीव का शोध करें॥1॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वज्ञमुखोत्पन्न-पापात्क्षयंकरी-पूर्वापर-अविरुद्ध-सम्यग-ज्ञानाय-नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्म दायिनी माता जग में, जन जीवन सिखलाती है।
माँ जिनवाणी जन जीवन से, मुक्ति बोध कराती है॥
है संसार असार विषय सुख, ऐसा ज्ञान प्रदान करों।
सरस्वती माँ सरसमति दे, जीवन का कल्याण करों॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुख-कमल-वासिनी-माँ-जिनवाणी-दैव्यै नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भव्य शरण्या भक्त वत्सला, ज्योतिर्मय जिन मुख वासी।
अनेकांत संभाषिणी माता, नय प्रमाण मय विश्वासी॥
ग्यारह अंगम्-चौदह पूर्वम्, द्वादशांग मय शास्त्र नमों।
सत्याभाषी मिथ्यानासी, केवल ज्ञानी पात्र नमों॥3॥

ॐ ह्रीं मिथ्याज्ञान-नाशक-सम्यग्ज्ञान-प्रकाशक-अनेकान्तमयी द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूप रहित माँ शब्द रहित माँ, अर्थ रहित माँ अनुभव है।
जीव मात्र में ज्ञानमयी तु, प्रगटित हो यह संभव है॥
श्री जिनवर की दिव्य ध्वनि से, शब्द अर्थमय रूप मिला।
गणधर मुनिवर कृपाशीष पा, आगम का स्वरूप खिला॥4॥

ॐ ह्रीं अनंतज्ञान-सम्पन्नाय स्वआत्म-ज्ञान-प्रस्फुटिताय श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गद्य पद्य या कथा कारिका, छन्द ताल लय या गाथा,
मंत्र ध्यान ज्योतिष विद्या या, गणित शब्द की व्याख्याता।

जगमाता विदुषी वाणी माँ, प्रातः उठकर नाम जपूँ,
सदबुद्धि सन्मार्ग प्रदाता, माँ जिनवाणी सदा नमूँ॥5॥

ॐ ह्रीं वद्-वद्-वाग्वादिनी-कवित्व-पण्डित्व च भवतु सदबुद्धि-सन्मार्ग प्रदायका माँ जिनवाणी-दैव्यै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर क्षीर सम महाविवेकी, हंस वाहिनी बना रही।
मोह नींद से उठ रे चेतन, कहकर सबको जगा रही॥
श्रुत देवी पुस्तक माला ले ज्ञान ध्यान भी सिखा रही।
अन्तरमन पावन करने को, मोक्ष मार्ग भी दिखा रही॥6॥

ॐ ह्रीं हंस-वाहिनी-पुस्तक-माला-धारिणी-श्रुतदेवी-दिव्य-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लब्ध्यक्षर-सा सूक्ष्म ज्ञान भी, जीव निगोद में रहता है।
तैंतीस सागर तक देवों में, चर्चा में सब कहता है॥
सूक्ष्म ज्ञान के शुद्ध ज्ञान को, शुद्धातम अनुभव करते।
आत्म बोध कर आत्म शोध कर, सिद्धालय में जा बसते॥7॥

ॐ ह्रीं कुज्ञान-निवारिण्यैः सुज्ञान-वर्धनाय आत्मज्ञान-प्रवरणाय श्री-द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहर का जो मूर्त रूप या, ग्रंथ रूप दर्शन होता।
एक भक्ति का एक मुक्ति का, रूप सदा अर्चन होता॥
अलंकार आभूषण से या, शब्दों से श्रृंगार करे।
अंग बाह्य व अंग प्रविष्टा, आगम ही उद्धार करें॥8॥

ॐ ह्रीं द्वादशांगमय-अलंकार-धारिणी-शब्दालंकार-धारिणी-अंग-बाह्य-अंग प्रविष्ट सर्व ज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीर्थंकर की ऊँ ध्वनि सुन, गणधर मुनि विस्तार करें।
अंग पूर्व के धारी मुनिवर, स्मृति गत उच्चार करें॥
कलि-काल में श्रुत स्मृति का, लोप कहीं ना हो जाये।
लिपिबद्ध हो ज्ञान श्रृंखला, भाव समाधि को पाये॥9॥

ॐ ह्रीं कलिकाले-श्रुतज्ञान-संरक्षक श्रीधरसेनाचार्य-चरण-कमलेभ्यः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जय "जयदु सुद देवदा", कहकर महाज्ञानी धरसेन जगें।
दो मुनियों को सम्मुख पाया, जैन जगत के भाग्य जगें॥
शिक्षित होकर चन्द्र गुफा में, अंकलेश्वर में सूत्र लिखा।
चली तुलिका ताड़ पत्र पर, षट्खण्डागम् ग्रन्थ दिखा॥10॥

ॐ ह्रीं धरसेनाचार्य-प्रदत्त-पुष्पदंत-भूतबली-लिपिबद्ध-प्रथम-षट्खण्डागम-ग्रन्थयो: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम काल में षट्खण्डागम्, सब ग्रन्थों का राजा है।
णमोकार गुणथान मार्गणा, तत्व कर्म बतलाता है॥
"आगम चक्खु साहु" कहकर, जैन ग्रन्थ सब मान रहे।
माँ जिनवाणी का आदर दें, अर्घ चढ़ा सम्मान करे॥11॥

ॐ ह्रीं महावीर-दिव्यध्वनि-रूप-साक्षात्-जिनवाणी-स्वरूप-षट्खण्डागम-ग्रन्थाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्णमाला के अल्पाक्षर से, वृहद शास्त्र लिखा जाता है।
शब्द शास्त्र श्रुत ज्ञान अनुपम, सारा जग बतलाता है॥
भाषा बाधक ना बनती, ना राज्य देश बाधक बनता।
सर्वभाष मय सर्व जीव को, समझाकर साधक बनता॥12॥

ॐ ह्रीं वर्णमाला-मातृकाक्षरे सर्व-द्वादशांग-मय-अक्षर-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माँ जिनवाणी है कल्याणी, पाप हारिणी सुखकारी।
ज्ञान दायिनी ब्रह्मचारिणी, वाग्वादिनी हितकारी॥
दिव्य रूप मन भावन माता, बालक का उद्धार करो।
क्षमादान दें पूर्णज्ञान दें अर्घावली स्वीकार करो॥13॥

ॐ ह्रीं वाग्वादिनी-पापहारिणी-ज्ञानदायिनी-दिव्य-ज्ञानमयी-श्रुतदैव्यै नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

सरस्वती की वन्दना, करे ज्ञान विस्तार।
पीताक्षत क्षेपण करूँ, भक्ति भाव उर धार॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

द्वितीय वलय–अंगाराधना

दोहा

द्वादशांग मय ज्ञान का, अंग अंग विख्यात्।
मम सर्वाङ्ग प्रगट हो, सदा नमाऊँ माथ।।

(द्वितीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

आचारांग

पंच समिति गुप्ति व्रतों की, चर्चा जिसमें वृहद विशाल।
प्रथमहि "आचारांग" सूत्र है, जैनाचार की एक मिशाल।।
एक अंग में आठ हजारी, पद में सारा वर्णन है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना ज्ञानामृत का अर्चन है।।1।।

ॐ ह्रीं अष्ट-सहस्त्र-पद-भूषित-प्रथम-आचारांग-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूत्रकृतांग

ज्ञान विनय अध्ययन अनुप्रेक्षा, ज्ञानार्जन के साधन हैं।
स्वपर समय का वर्णन क्रिया, वाह्य धर्म आराधन है।।
पद छत्तीस हजार प्रमाणी, "सूत्र कृतागं" वाणी है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ज्ञानार्जन सुख दानी है।।2।।

ॐ ह्रीं षट्त्रिंशत-पद-भूषित-द्वितीय-श्रुतकृतांग-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्थानांग

छः द्रव्यों का भेद प्रभेदा, क्रम से सुन्दर सा व्याख्यान।
"स्थानांग" बताता चेतन, संसारी और मुक्त महान।।
अंग पदों की संख्या ब्यालीस, हज्जारों में गणना है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, मोक्ष मार्ग पर चलना है।।3।।

ॐ ह्रीं द्विचत्वारिंशत्-पद-भूषित-तृतीय-स्थानांग-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवायांग

द्रव्य क्षेत्र अरुँ काल भाव से, एक समान कहाते हैं।
धर्मा-धर्माकाश जीव के, समान प्रदेश बताते हैं।।
एक लाख चौंसठ हजार पद, "समवायांग" खुलासा है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ज्ञान वृद्धि की आशा है।।4।।

ॐ ह्रीं एक-लक्ष-चतु: षष्टि-सहस्त्र-पद-भूषित-चतुर्थ-समवायांग-श्रुत-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याख्याप्रज्ञप्त्यांग

समवशरण में गणधर द्वारा, प्रश्न सदा पूछे जाते।
साठ हजार प्रश्न के उत्तर, "व्याख्या प्रज्ञप्ति" में पाते।
लक्ष द्वय अठाईस सहसा, पद में सारा गुंथित है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ज्ञान बढ़े मन प्रमुदित है।।5।।

ॐ ह्रीं द्वय-लक्ष-अष्टविंशति-सहस्त्र-पद-भूषित-पंचम-व्याख्याप्रज्ञप्ति-अंग-श्रुत-ज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञातृकथांग

गणधर तीर्थंकर चक्री या, कामदेव नारायण हो।
दिव्य ध्वनि का समय बतायें, "ज्ञातृ कथा" पारायण हों।।
पाँच लाख छप्पन हज्जारी, पद से ग्रन्थ सुशोभित है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, प्रभु कथा अनुमोदित है।।6।।

ॐ ह्रीं पंच-लक्ष-षट्पंचाशत-सहस्त्र-पद-भूषित-ज्ञातृ-धर्म-कथांग-श्रुतज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपासकाध्यनांग

ग्यारह लख सत्तर सहसा पद, धर्म ग्रहस्थों का वर्णन।
प्रतिमाओं का पालन करना, और बिताना व्रती जीवन।।
"उपासकाध्यनांग" कहाता, आचरण का ग्रन्थ महा।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, तीर्थंकर ने जिसे कहा।।7।।

ॐ ह्रीं एकादश-लक्ष-सप्तति-सहस्र-पद-भूषित-सप्तम-उपासकाध्यनांग-श्रुतज्ञानाय नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तकृदशांग

तीर्थंकर के तीर्थ काल में, दश-दश मुनिवर होते हैं।
महा भयानक संकट झेले, कर्म नष्ट कर देते हैं।।
तेईस लाख पदों से ज्यादा, अट्ठाइस हज्जार कहो।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, धन्य धन्य मुनिराज अहो।।8।।

ॐ ह्रीं त्रयोविंशति-लक्ष-अष्टाविंशति-सहस्र-पद-भूषित-अष्टम-अन्तः-कृतदशांग-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामिती स्वाहा।

अनुत्तरोपपादिक दशांग

सन्तों के कर्मोदय कारण, घोर सदा उपसर्ग हुए।
धरे समाधि प्राण त्यागकर, "अनुत्तरों" में जन्म लिए।।
लाख बानवे सहस चौवालिस, पद संख्या इनकी जानूँ।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, तीर्थंकर पद को मानूँ।।9।।

ऊँ ह्रीं द्वय-नवति-चतुः-चत्वारिंशत-सहस्र-पद-भूषित-नवम-अनुत्तरोपपादिक-दशांग-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रश्नव्याकरणांग

युक्ति नय निक्षेपों द्वारा, प्रश्नों का उत्तर मिलता।
सुख दुख लाभ पराजय जय या, जन्म मरण नित है चलता।।
लाख तिरानवे षोडस सहसा, पद संख्या इसकी प्यारी।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ग्रन्थों की महिमा न्यारी।।10।।

ॐ ह्रीं त्रिनवति-लक्ष-षष्ट-दश-सहस्त्र-पद-भूषित-दशम-प्रश्नव्याकरणांग-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विपाकसूत्रांग

कर्म शुभाशुभ उदय फलित का, वर्णन सूत्र विपाक में।
द्रव्य क्षेत्र अरुँ काल भाव से, कहा गया जिन भाष में।।
एक कोटि चौरासी लक्षा, कथन बड़ा ही विशाल है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, श्रद्धा करें निहाल है।।11।।

ॐ ह्रीं एक-कोटि-चतुः-अशीति-लक्ष-पद-भूषित-विपाकसूत्रांग-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एकपदाक्षर संख्या अर्घ्य

सौ करोड़ अरुँ कोटि तिरेसठ, अड़तालिस हम लाख सुनें।
उसमें जोड़े सहस छत्तीसा, आठ शतक अट्ठासी चुने।।
एक पदों की अक्षर संख्या, माँ जिनवाणी बताती है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, जो अज्ञान मिटाती है।।12।।

ॐ ह्रीं एक-अर्बुद-त्रिषष्ठि-कोटि-चतुरष्ट-लक्ष-षट्त्रिंशत-सहस्त्र-अष्टशत-अष्टाशीति-एकपदाक्षर-प्रमित-श्रुताक्षराय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादशांग पद संख्या पूर्णार्घ्य

ग्यारह अंगों की पद संख्या, चार कोटि अरुँ पन्द्रह लाख।
दो हज्जार मिलाकर जानों, द्वादशांग है अन्तिम शाख।।
दृष्टि वाद के चौदह पूरब, एक शतक अठ कोटि हैं।
अड़शठ लख छप्पन हज्जारी, पाँच पदों की पोथी है।।13।।

ॐ ह्रीं दिव्यध्वनि-उद्‌भवैः एकादश-पद-संख्येय-चतुः-कोटि-पंचदश-लक्षाश्च-द्विसहस्त्र-पदैः तथाश्च-अष्टाधिक-शत-कोटि-अष्टषष्ठि-लक्ष-षट्-पंचाशत्-सहस्त्र-पंच-पद-प्रमित-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

निर्ग्रन्थों ने ग्रन्थ लिखे, सर्व ग्रन्थ को छोड़।
सौरभ सागर पूजता, होकर भाव विभोर।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्‌भव सम्पूर्ण द्वादशांगाय नमः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

तृतीय वलय–पुर्वाराधना

(दृष्टिवादांग के भेद प्रभेद)

दोहा

भू अम्बर के ज्ञान का, वर्णन दृष्टिवाद।
पीताक्षत क्षेपण करूँ, करूँ सुखद संवाद।।

(तृतीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

दृष्टिवाद-पूर्वगत

द्वादशांग की अन्तिम शाखा, दृष्टिवाद नाम का अंग।
प्रथम भेद परिकर्म कहाता, गणित कथन है शून्य के संग॥
चन्द्र सूर्य अरुँ जम्बू द्वीपा, द्वीप सागर व्याख्या प्रज्ञप्त।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, भक्ति ध्यान से हो अनुरक्त॥1॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोदभवैः सर्व-भाषात्मकै-पंच-भेद-सहित-दृष्टिवादांग-श्रुत ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रप्रज्ञप्ति

चन्द्र गगन में घटता बढ़ता, मावस पूनम का दे ज्ञान।
कृष्ण शुक्ल जो पक्ष कहाता, चन्द्र विथिका में गतिमान॥
गति आयु परिवार बिम्ब, ऊँचाई ऋद्धि का वर्णन।
लाख छत्तीसा पंच हजारी, पद संख्या को अर्घ अर्पण॥2॥

ॐ ह्रीं षट्-त्रिंशत-लक्ष-पंच-सहस्त्र-पद-प्रमित-प्रथम-चन्द्रप्रज्ञप्ति-परिकर्म-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूर्यप्रज्ञप्ति

किरण केतू अपनी आभा ले, जग को देता उजियारा।
भोगायु गति बिम्ब ऊँचाई, ऋद्धि वर्णन परिवारा॥
पंच लक्ष त्रय सहस पदों में, सूर्य देव का कथन दिया।
अर्घ चढ़ाऊँ ज्ञान शृंखला, शुद्ध ज्ञान को नमन किया॥3॥

ॐ ह्रीं पंच-लक्ष-त्रि-सहस्त्र-पद-प्रमित-द्वितीय-सूर्यप्रज्ञप्ति-परिकर्म-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति

जम्बू द्वीप के सात कुलाचल, पर्वत नदियां चैत्य भवन,
व्यन्तर के आवास पशु नर, सुन्दर तम पूरा वर्णन।
तीस लाख पच्चीस हजारी, पद संख्या में कथन किया,
अर्घ चढ़ाऊं ज्ञान शृंखला, शुद्ध ज्ञान को नमन किया॥4॥

ॐ ह्रीं त्रिलक्ष-पंचविंशति-सहस्त्र-पद-प्रमित-तृतीय-जम्बूद्वीप-प्रज्ञप्ति-परिकर्म-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीप-सागर प्रज्ञप्ति

मध्य लोक में असंख्यात हैं, द्वीप सागर का क्षेत्र विशाल।
उसका वर्णन हस्त कमल वत्, प्रतिपादन है बहुत कमाल ॥
बावन लाख अरू छत्तीस सहसा, पद संख्या अति सुन्दर है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ज्ञान शृंखला मनहर है॥5॥

ॐ ह्रीं द्विपंचाशत-लक्ष-षट्त्रिशत-सहस्त्र-पद-प्रमित-चतुर्थ-द्वीपसागर-प्रज्ञप्ति-परिकर्म-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्याख्या प्रज्ञप्ति

धर्माधर्माकाश पुद्गला, जीवकाल का है व्याख्यान।
चौरासी लाख की पद संख्या, छत्तीस सहस पद का परिमाण॥
परिकर्म की कुल पद संख्या, एक कोटि इक्यासी लाख।
पंच सहस पद अर्घ चढ़ाकर, नित्य झुकाऊँ अपना माथ॥6॥

ॐ ह्रीं चतुरशीति-लक्ष-षट्त्रिंशत-सहस्त्र-पद-प्रमित-पंचम-व्याख्या-प्रज्ञप्ति-परिकर्म-श्रुतज्ञानाय-एवं-एक-कोटि-एकाशीति-लक्ष-पंच-सहस्त्र-पद-भूषित-सम्पूर्ण-परिकर्म-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूत्रदृष्टि वादांग

कर्ता भोक्ता संसारी-पन, तन प्रमाण उपयोग मयी,
पूर्ण पक्ष का सत्य निरूपण, निराकरण भी ज्ञान मयी।
अट्ठासी लख पद संख्या है, न्याय शास्त्र का जन्म अहो,
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, धन्य-धन्य यह सूत्र कहो॥7॥

ॐ ह्रीं अष्टाशीति-लक्ष-पद-प्रमित-सूत्र-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रथमानुयोग

महापुरुषों की जीवन गाथा, साहस श्रद्धा देती है।
मन का संशय तिमिर मिटाकर, त्याग भाव भर देती है॥
दृष्टिवाद प्रथमानुयोग की, पद संख्या है पाँच हजार।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, पाप भाव से हो निस्तार॥8॥

ॐ ह्रीं पंच-सहस्त्र-पद-प्रमित-प्रथमानुयोग-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्वगत (पूर्वाराधना)

ध्यान साधना जो करें, ज्ञान भानू प्रगटाय।
चौदह पूरब पूजने, अर्घावली चढ़ाय।।9।।

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भव-चौदह-पूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्पादपूर्व

चौदह पूर्वों का प्रतिपादन, पूर्वगत दृष्टि वादांग।
बनना मिटना और नित्यता, प्रथम पूर्व इसका व्याख्यान।।
संयोगी जो धर्म कहे हैं, एक कोटि पद वर्णन है।
अर्घ चढाऊँ ज्ञान बढ़ाऊँ, उत्पाद पूर्व को वन्दन है।।10।।

ॐ ह्रीं एक-कोटि-पद-प्रमित-प्रथम-उत्पादपूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्रायणीपूर्व

सात शतक सुनय दुर्नय का, सप्त तत्व का वर्णन है।
षट् द्रव्यों का अस्तिकाय का, अग्रायणी में चिन्तन है।।
लाख छियानवे पद संख्या है, जो निज ज्ञान कराता है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, मोक्ष मार्ग खुल जाता है।।11।।

ॐ ह्रीं षट्-नवति-लक्ष-पद-प्रमित-द्वितीय-अग्रायणीपूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर्यानुवादपूर्व

द्रव्य शक्ति का काल शक्ति का, तप शक्ति का वर्णन है।
पूर्व श्री वीर्यानुवाद में, आत्म शक्ति का चिन्तन है।।
सत्तर लाख पदों से भूषित, ज्ञान महा कल्याणी है।
अर्घ चढ़ा कर करूँ वंदना, आत्म ज्ञान सुखदानी है।।12।।

ॐ ह्रीं सप्त सप्तति लक्ष पद प्रमित तृतीय वीर्यानुवाद पूर्व श्रुत ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्ति-नास्ति-प्रवाद-पूर्व

षट् द्रव्यों में अस्ति नास्ति, सप्त अंग से कथन किया।
साठ लाख पद संख्या इसकी, तप से इसका मनन किया॥
निर्मल शुद्ध स्वभावी चेतन, सहज ज्ञान को पाते हैं।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ज्ञानी जन मुस्काते हैं॥13॥

ॐ ह्रीं षष्टि-लक्ष-पद-प्रमित-चतुर्थ-अस्ति-नास्ति-प्रवाद-पूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानप्रवादपूर्व

मति श्रुत अवधि कु-सु-दोनों, चतुर्गति में होती है।
भेद विषय फल परिभाषा पद, न्यून एक इक कोटि है॥
मनपर्यय केवल्य ज्ञान तो, मुनि जन ही प्रगटाते हैं।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, दिव्य ज्ञान फल पाते हैं॥14॥

ॐ ह्रीं नवनवति-लक्ष-नवनवति-सहस्त्र-नवशत-नवनवति-पद-प्रमित-पंचम-ज्ञानप्रवादपूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्यप्रवादपूर्व

शब्दोच्चारण कण्ठ तालू अरूं, द्वादश विध की भाषा का।
दश विध सत्य वचन को जाने, शुभ अशुभ अभिलाषा का॥
दो इन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक, बोला करता जीव सदा।
एक कोटि छः पद संख्या को, अर्घ चढ़ाऊँ भाव मुदा॥15॥

ॐ ह्रीं एक-कोटि-षट्-पद-प्रमित-षष्टम-सत्यप्रवादपूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मप्रवादपूर्व

दर्शन ज्ञान सुखों से पूरित, निज आतम चेतन स्वभाव।
आत्म प्रवाद में इन विषयों का, वर्णन है सब भाव विभाव॥
एक कोटि अस्सी लख पद में, आत्म तत्व का कथन किया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, शुद्धातम को नमन किया॥16॥

ॐ ह्रीं एक-कोटि-षट्विंशति-पद-प्रमित-सप्तम-आत्मप्रवाद-पूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मप्रवादपूर्व

भाव शुभाशुभ के कारण जो, बन्ध उदय उपशम करता।
कर्म निर्जरा या उदीरणा, कर्म प्रवाद पूर्व कहता।।
एक कोटि अस्सी लख पद में, कर्मों का सब कथन किया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, कर्म कालिमा खतम किया।।17।।

ॐ ह्रीं एक-कोटि-अशीति-लक्ष-पद-प्रमित-अष्टम-कर्मप्रवादपूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यख्यानपूर्व

द्रव्य क्षेत्र अरुँ काल भाव या, निज संहनन से व्रत धारें।
गुप्ति समिति प्रतिक्रमण या, त्याग तपस्या स्वीकारें।।
चौरासी लख पद संख्या में, प्रत्याख्यान विवेचन है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, त्याग मोक्ष निकेतन है।।18।।

ॐ ह्रीं चतुरशीति-लक्ष-पद-प्रमित-नव-प्रत्यख्यानपूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विद्यानुवादपूर्व

सप्त शतक लघु विद्या जानों, पांच शतक बड़ी विद्याएँ।
मंत्र तंत्र सामर्थ्य साधना, विधि सिद्धि साधन बतलाएँ।।
एक कोटि दश लाख पदों में, मंत्र शक्ति का अतिशय है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, आत्म सिद्धि का निश्चय है।।19।।

ॐ ह्रीं एक-कोटि-दशलक्ष-पद-प्रमित-दशम-विद्यानुवादपूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्याणवादपूर्व

तीर्थंकर पद बन्धन के जो, सोलह कारण भावन है।
शगुन ग्रहण अरुँ पंचकल्याणक, उत्सव मय आराधन है।।
छब्बीस कोटि पद संख्या में, कल्याणवाद का वर्णन है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, तीर्थंकर पद वन्दन है।।20।।

ॐ ह्रीं षट्विंशति-कोटि-पद-प्रमित-एकादश-कल्याणवादपूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणानुवादपूर्व

दश प्राणों से जीवन-पलता, रोग सदा नर्तन करता।
रोग निवारण जड़ी बूटी का, प्राणानुवाद वर्णन करता॥
औषध के गुण अवगुण का तो, तेरह कोटि पद कथन करें।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, सर्व रोग का शमन करें॥21॥

ॐ ह्रीं त्रयोदश-कोटि-पद-प्रमित-द्वादश-प्राणानुवादपूर्व-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रियाविशालपूर्व

आदिनाथ ने शत पुत्रों को, कला बहत्तर बता दिया,
गर्भाधान काव्य वाद्य सह, अलंकार भी सिखा दिया।
नौ करोड़ की पद संख्या में, पूर्व क्रिया विशाल है,
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, ज्ञानी भक्त निहाल है॥22॥

ॐ ह्रीं नव-कोटि-पद-प्रमित-त्रयोदश-क्रियाविशालपूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकबिन्दुसार

लोक बिन्दु में लोक भ्रमण के, नाशन का संदेश दिया।
ध्यान साधना सिद्ध अवस्था, के सुख का उपदेश दिया॥
बारह कोटि अर्ध शतक लख, पद उज्जवल मुक्ति दाई।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, निराकार तन स्थाई॥23॥

ॐ ह्रीं द्वादश-कोटी-पंचाशत-लक्ष-पद-प्रमित-चतुर्दश-लोकबिन्दुसार-पूर्व-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चूलिका

जल-थल माया रूप गगन गत, मंत्र तंत्र तप का वर्णन।
अग्नि जल स्तंभन भक्षण, वास्तु गुप्त विद्या अध्ययन॥
विविध रूप धारण नभ गमना, चूलिका में कथन बड़ा।
दश कोटि उनचास लक्ष अरुँ, छियालिस सहस पद अर्घ चढ़ा॥24॥

ॐ ह्रीं दश-कोटि-नव-पंचाशत-लक्ष-षट्चत्तारि-सहस-पद-प्रमित-पंच-चूलिका-श्रुत-ज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

ज्ञान अनन्ता आतम में है, द्वादशांग मय प्रगट हुआ।
अंग बाह्य अरुँ अंग प्रविष्टा, द्रव्य भाव श्रुत निकट रहा॥
पूर्व ज्ञान मुनिराज धारते, निज-चारित्र विशुद्ध करें।
जिनवाणी जो श्रुत स्कन्धा, अर्घ चढ़ाकर नमन करें॥25॥

ॐ ह्रीं अष्टाधिक-शत-कोटि-षष्टिलक्ष-सहस्त्र-पद-प्रमित-पंच-भेद-परिकर्म-सूत्र-प्रथमानुयोग-पूर्वगत-चूलिका-सहित-दृष्टिवाद-श्रुतज्ञानाय नमः पूर्णाअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय–अनुयोगाराधना

दोहा

द्वादशांग के ज्ञान का, अनुयोगों में सार।
शब्द अर्थ को जानकर, करूँ आत्म उद्धार॥

अथ चतुर्थ-वलय-मंडलोस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्

प्रथमानुयोग

प्रथम चरण प्रथमानुयोग पढ़, प्रशम भाव विकसित होता।
महापुरुषों की जीवन गाथा, दुख हर साहस नित देता॥
बोधि समाधि मन शुद्धि कर, सम्यक् पथ पर गमन करें।
प्रथमानुयोग वाचन पूजन कर, निज जीवन को धन्य करें॥1॥

ॐ ह्रीं श्री जिन-मुखोदभव-दिव्यध्वनि-प्रथमानुयोग-रूप-श्रुतज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करणानुयोग

लोकालोक कर्म गतियों को, आगम से जो जान रहें।
चिन्तन अध्ययन में रत रहते, करणानुयोग को मान रहें॥
मन की चंचल वृत्ति रोके, ज्ञान महा सुखदायी है।
अर्घ चढ़ा करणानुयोग जो, ध्यान वृद्धि फलदायी है॥2॥

ॐ ह्रीं श्री-जिनमुखोद्भव-दिव्यध्वनि-करणानुयोग-रूप-श्रुतज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चरणानुयोग

पापों के दलदल में जीवन, राग द्वेष से फँसा रहा।
श्रावक की चर्या पालन कर, पाप भाव से बचा रहा॥
दुखों से मुक्ति का कारण, मुनि जीवन स्वीकार करूँ।
अर्घ चढ़ा चरणानुयोग को, निज आतम उद्धार करूँ॥3॥

ॐ ह्रीं श्री-जिनमुखोद्भव-दिव्यध्वनि-चरणानुयोग-रूप-श्रुतज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यानुयोग

सप्त तत्व और पुण्य पाप को, जानों चेतन आगम से।
निश्चय व्यवहारी दो धर्मा, मानो सन्त समागम से॥
दिव्य ग्रन्थ द्रव्यानुयोग है, आत्म दर्श को नित्य भजूँ।
अर्घ चढ़ाकर पद अनर्घ को, पाने इन्द्रिय भोग तजूँ॥4॥

ॐ ह्रीं श्री-जिनमुखोद्भव-दिव्यध्वनि-द्रव्यानुयोग-रूप-श्रुतज्ञानेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वानुयोग द्वादशांग पद संख्या

एक शतक बारह करोड़ में, लाख तिरासी जोड़ रहें।
सहस्त्र अठावन पाँच पदों को, श्रद्धा से कर जोड़ रहें॥
जिनवर वाणी है कल्याणी, भव्य कर्ण से पीते हैं।
तत्व बोध कर आत्म शोध कर, निजानन्द मय जीते हैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री-जिनवरकथित-गणधरगुंफित-सर्वानुयोग-द्वादशांग-श्रुत-द्वादशाधिक-शत-कोटि-त्रयशीति-लक्ष-अष्टपंचाशत-सहस्त्र-पंच-पद-प्रमित-श्रुतज्ञानाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यश्रुत अर्घ्य

अंग वाह्य और अंग प्रविष्टा, द्रव्य भाव श्रुत भेद कहो।
प्रामाणिक द्वय ज्ञान जीव में, सम्यग् ज्ञान अभेद अहो॥
अक्षर मय पत्रों में आकर, आगम मय आकार लिया।
देव गुरु सम जिनवाणी की, पूजाकर उद्धार किया॥6॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव-दिव्यध्वनि-प्राप्त-सर्व-द्रव्य-भावश्रुत-ज्ञानेभ्यो-अक्षरमय-साकार-जिनवाणी-ग्रन्थेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी वेष्टन समर्पण

जय जिनवाणी माँ गुण गरिमा गा, वेष्टन लाऊँ दान करूँ।
जय शास्त्र लिखाऊँ और छपाऊँ, जिनवाणी विस्तार करूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भव-सरस्वत्ये नमः वेष्टन समर्पयामि ।

सम्पूर्णार्घ्य

अरहन्त देव की दिव्य ध्वनि से, जो भी निकली है वाणी।
स्याद्वाद अनेकान्तमयी वह, कहलाती है जिनवाणी॥
नय निक्षेप तत्व पदार्थ का, इसमें पूर्ण विवेचन है।
भव तरने की बात इसी में, संशय इसमें लेश न है॥

ॐ ह्रीं संशय-विपर्य-अनध्यवसाय-रहित-ज्ञानवर्धनाय-द्वादशांगमय-दिव्य ध्वन्यैः नमः सम्पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य-ॐ ह्रीं जिनमुखोद्भव वाग्वादिनी सरस्वत्यै नमः।

जयमाला

समवशरण में दिव्य ध्वनी की, निर्झरणी झर-झर बहती।
गणधर द्वारा गुम्फित होकर, द्वादशांग रचना रचती॥1॥
चेतन आगम मुनिराज हैं, वाणी से श्रुत झरता है।
अंगधारी मुनिराज कण्ठ व, स्मृति से ही बढ़ता है॥2॥
आदिनाथ की दिव्य ध्वनी को, वृषभसेन फैलाते हैं।
महावीर की मौन ध्वनि को, इन्द्रभूति प्रगटाते हैं॥3॥
ऊँकारमयी दिव्य देशना, अनाक्षरी ही खिरती है।
चारों काल में चौबीस घड़ियाँ, आगम-धारा बहती है॥4॥
नर देवों के इन्द्रों द्वारा, वाणी पूजी जाती है।
त्रिभुवन हितकर मनहर वाणी, जन कल्याण कराती है॥5॥
द्वादशांग-मय वाणी क्रम से, मुनियों ने स्वीकार किया।
छः सौ तिरालिस वर्षों तक वह, स्मृति से विस्तार हुआ॥6॥
धीरे-धीरे स्मृति क्षमता, क्रम से घटती जाती है।
श्रुत विच्छेद नहीं हो जाये, चिन्ता मन में सताती है॥7॥

"महाकम्म पयडि पाहुड" के, गुरु धरसेन जी ज्ञाता हैं।
द्वादशांग के एक अंग का, मात्र ज्ञान प्रदाता हैं।।8।।
मंत्र शास्त्र लिखकर धरसेना, अक्षर शास्त्र प्रदान किया।
अर्हत्बली-से शिष्य बुलाकर, मंत्र सिद्धि वरदान दिया।।9।।
आज्ञाकारी समताधारी, दृढ़संन्यासी मुनि महान।
सप्त दिवस में मंत्र सिद्ध कर, योग्यता का दिया प्रमाण।।10।।
चन्द्र गुफा गिरनार गिरी पर, सारा ज्ञान प्रदान किया।
पुष्पदन्त अरुँ भूतबली ने, गुरूवर को सम्मान दिया।।11।।
ऋषिसभा के अधिपति बनकर, पुष्पदन्त ने ग्रंथ रचा।
अंकलेश्वर की धरा धाम से, जैनों का शुभ भाग्य जगा।।12।।
पाँच पदों के पैंतीस अक्षर, लिपिबद्ध णमोकार लिखा।
षट्खण्डागम् ग्रन्थ प्रगट कर, जैनागम को दिया दिखा।।13।।
महापर्व माँ जिनवाणी का, श्रुत पंचमी कहाता है।
जैन धर्म के शुद्ध ज्ञान का, परिचय यही कराता है।।14।।
द्वादशांग के बीजाक्षर को, आगम में हम पाते हैं।
भव्य जीव जो आत्म हितैषी, अध्ययन कर हर्षाते हैं।।15।।
माँ जिनवाणी ज्ञान वर्धिनी, परमोत्तम गुण गहरे हैं।
हो प्रसन्न जिस भविक जनों पर, ज्ञानानंद में ठहरे हैं।।16।।
अन्तिम विनती माँ जिनवाणी, ज्ञान चेतना पा जाऊँ।
धर्म कर्म का मर्म समझकर जीवन धन्य बना जाऊँ।।17।।
जय हो जय हो माँ जिनवाणी, अन्तर मन प्रमुदित कर दो।
ज्ञानावरणी कर्म मिटाकर, केवल ज्ञान उदित कर दो ।।18।।

घत्ता

जय ग्यारह अंगं चौदह पूर्वं षट्खण्डागम् सूत्र नमों।
जय श्रुत स्कन्धा ज्ञान प्रदत्ता, पूजन कर्ता मुदा मनो।।

ॐ ह्रीं श्रीजिन-मुखोद्भव-दिव्यध्वनी-सम्पन्न-सम्पूर्ण-परमश्रुत-ज्ञानाय नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

आगम में आराध्य त्रय-त्रय रत्नों का सार।
'सौरभ सागर' ग्रन्थ पढ़, किया आत्म उद्धार।।

(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

८. चौंसठ ऋद्धि सिद्धि विधान

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

8. चौंसठ ऋद्धि सिद्धि विधान
माण्डला

कुल अर्घ्य 100 : प्रथम वलय में 5, द्वितिय वलय में 22, तृतीय वलय में 9, चतुर्थ वलय में 10, पंचम वलय में 8, षष्ठम वलय में 3, सप्तम वलय में 10, अष्टम वलय में 6, नवम वलय में 2, दशम वलय में 22, कुल 97 अर्घ, 3 अतिरिक्त, कुल 100 अर्घ

चौंसठ ऋद्धि व्रत विधि

व्रतारम्भ : किसी भी माह की द्वितीय, पंचमी, अष्टमी, एकादशी एवं चतुर्दशी से प्रारम्भ

अवधि : 1 वर्ष से 4 वर्ष

व्रत पूजा : चौंसठ ऋद्धि-सिद्धि विधान पूजन आदि।

जाप : ॐ ह्रीं चतुषष्टि ऋद्धि-सिद्धि धारक सर्व मुनिवरेभ्यो नमः, या चौंसठ ऋद्धि मंत्रों की क्रमशः जाप

व्रत विधि : 64 उपवास या एकासन या रस परित्याग

चौंसठ ऋद्धि सिद्धि विधान

स्थापना

जिनवर के लघुनन्दन मुनिवर, परिषह जयते अविकारी।
महाव्रतों की करें साधना, परमेष्ठी पद के धारी॥
ज्ञान ध्यान तप आराधन में, लीन रहे मुनि करुणाधार।
आह्वानन स्थापन करता, हृदयांगन में करो विहार॥

ॐ ह्रीं त्रिकालवर्ति-ऋद्धि-सिद्धि-धारक-सर्व-मुनिवरेभ्य: अत्र अवतर अवतर संवोषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं त्रिकालवर्ति-ऋद्धि-सिद्धि-धारक-सर्व-मुनिवरेभ्य: अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनम्।

ॐ ह्रीं त्रिकालवर्ति-ऋद्धि-सिद्धि-धारक-सर्व-मुनिवरेभ्य: अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

श्वेत शिखर से बहता पावन, निर्मल जल जीवन धारा।
चरण कमल में त्रय धारा दे, पाऊँ सुख अक्षय सारा॥
चरण कमल मुनिराज आपका, सदाचरण सिखलाता है।
जन्म जरा मृत्यु रोगों से, सबको पार लगाता है॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्य: जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

चन्दन वृक्ष-सा जीवन मुनि का, जो काटे सुरभित करते।
लेप लगा शीतलता पाते, अनुकम्पा अद्‌भुत करते॥
ऋद्धि सिद्धि धारक मुनिवर, धरती पर विहार करें।
गन्ध समर्पित चरण कमल में, मम आतम उद्धार करें॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्य: संसार ताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

लंबे छोटे चावल सुन्दर, अक्षत बन मन को भाए।
धरती पर दो बार उगे वे, द्विजन्मा गुण बतलाए॥
काम भाव से जन्मा जीवन, सांसारिक कहलाता है।
धर्म ध्यान से सुलझा जीवन, अक्षय पद दर्शाता है॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्यः अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

मोरपँख-सा कोमल मन कर, फूलों-सा खिलता रहता।
कांटों में प्रमुदित हो करके, धैर्यवान जीवन बनता॥
मुनिराज कण्टक में रहकर, निष्कण्टक जीवन जीते।
काम कामना की कालिमा तजकर, मन सुरभित करते॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्यः कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

तन मन की सब भूख मिटाकर, छोड़ा धन भोजन संसार।
निरसता में रस खोजा पर, पाया ना उसमें कुछ सार॥
मुनिराज तन संचालन को, एक बार आहार करें।
पूजा में नैवेद्य चढ़ाकर, रोग क्षुधा निस्तार करें॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

बाहर जलता दीपक जगमग, बाहर का तम हरता है।
स्याद्वाद अनेकान्त दीप जल, अन्तर तम क्षय करता है॥
मुनिराज की विनय वन्दना, मिथ्या दीप बुझाती है।
दीप समर्पित गुरु चरणों में, निज उद्योत कराती है॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्यः मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

धूप जले पर धूम उड़े जो, प्रांगण को सुरभित करता।
कर्म जले तब धर्म फले वह, निज आतम प्रमुदित करता।
मुनिराज जी तप अग्नि में, कर्मन् धूप जलाते हैं।
पूजा में शुभ धूप समर्पित, अष्ट कर्म विनशाते हैं॥

ॐ ह्री भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्य: अष्ट कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

तप की आभा मुखमण्डल पर, मुनिराज के सहज खिले।
सफल साधना फलीभूत हो, मोक्ष महाफल सहज मिले॥
निष्फल मेरी भक्ति ना हो, भाव समर्पित मैं करता।
निजगुण फल मन प्रगटित होवें, तरुवर फल अर्पित करता॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्य: मोक्षमहाफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

भावों की शुभ थाल सजाकर, निर्मल मन का जल लाया।
प्रशम भाव का चन्दन लेकर, अनुकम्पा अक्षत भाया॥
आराधन का पुष्प संजोकर, नैवेद्यम् तपधार लिया।
धर्म दीप वसु कर्म धूप ले, मोक्ष महाफल साध लिया॥
अष्ट द्रव्य का मिश्रण करके, मुनिवर चरण चढ़ाऊँगा।
ऋद्धि सिद्धि समृद्धि पा, महाव्रतों को ध्याऊँगा॥

ॐ ह्रीं भूत-भविष्य-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्य: अनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

हे महाऋषि! हे महायति!, हे महाव्रती! मुनिवर सारे।
हे महामना! हे धर्मधुरी!, हे पुण्यवान! जग हित कारे॥
हे वीतराग मुद्राधारी, हे पिच्छी कमण्डल के धारी।
हे शान्त छवि निर्ग्रन्थ मुनि, हे इन्द्रिय जेता अविकारी॥

भाव भावना बारह भाकर, सृष्टि का गुण जान लिया।
तज आडम्बर हुए दिगम्बर, मोक्ष मार्ग पहचान लिया।।
जीवन की क्षण भंगुरता लख, जीवन को जीवन्त किया।
जल से भिन्न कमलवत रहकर, निज जीवन को धन्य किया।।
आत्म तत्व की स्वर्णिम आभा, विषय भोग में क्षीण हुई।
गुप्ति समिति व्रत संयम से, कर्म कलिमा जीर्ण हुई।।
रत्नत्रय का मुख मण्डल पर, अद्भुत आभा चमक रही।
भेद ज्ञान की अद्भुत कान्ति-केशलोंच से दमक रही।।
ऋद्धि सिद्धि, धारक मुनिवर, जग उपकारी दिव्य महान।
भटके हम संसारी प्राणी, मार्ग बता कर दो कल्याण।।
जब तक जगति में जीवन है, तब तक जग में सन्त रहें।
यथाजात जिन रूप स्वरूपी, जैन सन्त जयवन्त रहें।।

दोहा

नौ करोड़ में तीन कम, जगति में मुनिराज।
श्रद्धा से वन्दन करूँ, तारण तरण जहाज।।

ॐ ह्रीं भूत-भविष्यत-वर्तमानकाल-संबंधी-सर्व-मुनिवरेभ्य: नम: जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलय

(चतुर्विंशति तीर्थंकर संबंधी गणधर एवं चतुर्विध मुनिराजों के 5 अर्घ्य)

ऋषि मुनि या यति नमो, नमो सदा अनगार।
संघ चतुर्विध मुनिवरा, धर्म मार्ग आधार।।

(प्रथम-वलय-मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

एक सहस अरुँ चार सौ बावन, गणधर वाणी को झेलें।
वृषभसेन से गौतम स्वामी, निज स्वभाव से नित खेलें।।
लाख अट्ठाइस श्री मुनिराजा, अढ़तालिस हज्जार कहें।
साधक तद्भव मुक्ति गामी, अर्घ चढ़ा भवपार करें।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-समवशरणे-विराजित-एकहज्जारचारसौ-बावन-

गणधर-एवं-अट्ठाइसलाख-अड़तालीसहजार-सर्वमुनिवरेभ्य: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्धर तप तरु तल में बसकर, ग्रीष्म ऋतु पर्वत पर जाए।
शीत ऋतु में नदी समीपा, ध्यान धरे निज कर्म खपाए।।
ऐसे तपसी आत्म लीन हो, गहन साधना वास करें।
ऋद्धि प्रगट हो ऋषि कहावें, ऋषिवर तप उपवास करें।।2।।

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-सर्व-ऋषिवरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिराज मन मौन करावे, खोज करें नित कौन की।
वच तन की चंचलता रोकें, ध्यान करें नित ओम् की।।
बने सहारा उन भव्यों का, भक्ति से मुनिराज नमें।
विनय मोक्ष का द्वार कहाँ, जो धर्ममार्ग प्रकाश भरें।।3।।

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-सर्व-मुनिवरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यति यतन से यातना सहकर, शुक्ल ध्यान में बढ़ते हैं।
जंगल कोटर गुफा नगर में, साधक निश दिन रहते हैं।।
बध बन्धन अपमान उपेक्षा, की ना चिन्ता करते हैं।
यति कहावें यश को पावे, मोक्ष मार्ग में बढ़ते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-सर्व-यतिवरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गृह आडम्बर परिग्रह तजकर, रूप दिगम्बर धार लिया।
जिन दीक्षा ले सहज साधना, जिन मारग स्वीकार किया।।
पिच्छी कमण्डल केश लोंच कर, अनगारी कहलाते हैं।
गुणमाला संसारी जन गा, सम्यग् दर्शन पाते हैं।5।।

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-सर्व-अनगारेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्यं

धत्ता-
जय ऋषिवर सारे मुनिवर प्यारे
यतिवर न्यारे नमन करूँ
जय जय अनगारा गणधर धारा
अर्घ चढ़ा अघ शमन करूँ

ॐ ह्रीं ऋद्धि सिद्धि संयुक्त सर्व चतुर्विध मुनिवरेभ्यो नम: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय

(बुद्धि ऋद्धि के 22 अर्घ्य)

सन्मति से सद्गति मिले, सदाचरण सरताज।
बुद्धि ऋद्धि मुनिराज जी, हृदय विराजो आज॥

(द्वितीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

समवशरण या गंध कुटी में, चतुर्मुखी जिनराज रहें।
तीन लोक त्रय काल वस्तुएँ, अवलोकन कर जान रहे॥
चार घातियाँ कर्म विनाशे, केवल ऋद्धि पाया है।
अर्घ समर्पित चरण कमल में, भक्ति में यश गाया है॥1॥

ॐ ह्रीं केवल-बुद्धिऋद्धि-धारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोचा था या सोच रहे हैं, सोचेंगे जो भी बातें।
रूपी मन की उठी तरंगे, विपुलमति क्षण में ज्ञाते॥
ज्ञान अनन्ता आतम में है, उसकी शुद्धि है करना।
मन वश कर संयम धारण कर, अर्घ समर्पित है करना॥2॥

ॐ ह्रीं विपुलमति-मनःपर्यय-बुद्धिऋद्धि-धारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भाव पर प्रतिपाति है, मुनियों का मनपर्यय ज्ञान।
ऋजु बातों को ऋजु भावों से, जान रहे मुनि ज्ञान प्रमाण॥
ऋद्धि पाते प्रमत्त संयमी, आत्म ध्यान में रमण करें।
अर्घ चढ़ाकर पूजा कर लूँ, जीवन के भव भ्रमण हरें॥3॥

ॐ ह्रीं ऋजुमति-मनःपर्यय-बुद्धिऋद्धि-धारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(लय-शुभ ध्यान में लवलीन हो...)

पावन चरित्र सुधारकर, जो आत्म साधना लीन हैं।
परमावधि सुज्ञान प्रगटें, सूक्ष्म ज्ञान प्रवीण हैं॥

ऐसे तपस्वी सन्त की, पूजा सदा अर्चा करें।
यश ऋद्धि सिद्धि प्राप्त कर, सद्ज्ञान की चर्चा करें॥4॥

ॐ ह्रीं परमावधि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार के सब बंध नाशे, धार ली दीक्षा खरी।
उपवास व्रत को पालते नित, ध्यान करते सुखभरी॥
सर्वावधि सुज्ञान प्रगटें, आत्म साधना से सदा
पूजा दिगम्बर मुनि चरण जो, दे अतुल सुख सर्वदा॥5॥

ॐ ह्रीं सर्वावधि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर चर्या धारकर जो, आत्म रूप में रम रहे।
वे देश अवधि ज्ञान पाकर, वस्तु ज्ञान में थम रहे॥
अर्चन सदा उनकी करूँ, निज ज्ञान दीप प्रजालने।
निज आत्मा का बोध हो, निज पर सदा संभालने॥6॥

ॐ ह्रीं देशावधि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोष्ठ में जो धान्य को, रखते सदा संरक्षिता।
निज बुद्धि में झट् ऋद्धियों को, ज्ञान राखे नित्यता॥
पावन पवित्र मन की दशा से, कोष्ठ बुद्धि प्राप्त हो।
संपूर्ण द्वादशांग धारें, कर्म नाशकर आप्त हो॥7॥

ॐ ह्रीं कोष्ठबुद्धि ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक बीज में ज्यों वृक्ष है, उसमें फले बहु बीज हैं।
एक शब्द में बहु अर्थ हैं, उसको कहे सब बीच में।
योगी सदा निज योग से, यह बीज बुद्धि पावते।
अर्चा करूँ पूजा करूँ, निज ज्ञान कोश बढ़ावतें॥8॥

ॐ ह्रीं बीजबुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद मात्र को ही जानकर सब, शास्त्र का सद् ज्ञान दें।
वह ऋद्धि पादानुसारिणी जो, स्वयं को सम्मान दें॥
पर पद बचे निज पद सजें, योगी सदा निज ध्यान में।
नित पूजकर उनको सदा, पाऊँ निरापद ज्ञान मैं॥9॥

ॐ ह्रीं पादानुसारिणीबुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब भीड़ के शब्दों को सुनकर, भिन्न भिन्न हैं जानते।
वह ज्ञान अद्भुत त्याग से, मुनिराज भीतर झाँकते॥
ऐसे सदा ध्यानी मुनि को, ऋद्धि संभिन्न प्राप्त हों।
निज ज्ञान बुद्धि हेतु चरणों, अर्घ अर्पित आप्त हों॥10॥

ॐ ह्रीं संभिन्नश्रोतृ-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(लय- मेरी भावना)

अपनी बुद्धि अपनी क्षमता, अपने भीतर का शुभ ज्ञान।
मति श्रुत अवधि बिन मुनिवर के, प्रगटा है जो शुद्ध महान॥
स्वयं बुद्ध ऋद्धि के धारी, मुनिवर भाग्य विधाता है।
अर्घ चढ़ाऊँ शीश नवाऊँ स्वयं बोध प्रगटाता है॥11॥

ॐ ह्रीं स्वयंबुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भिन्न भिन्न है देह आत्मा, सर्व पदारथ भिन्न रहें।
पर को अपना माने चेतन, जग में पीड़ित खिन्न रहें॥
धारे मुद्रा परम दिगम्बर, प्रत्येक ऋद्धि प्राप्त करें।
अष्ट द्रव्य का अर्घ चढ़ाकर, आठों कर्म समाप्त करें॥12॥

ॐ ह्रीं प्रत्येकबुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्य ध्वनि जिनवर की खिरती, उसको सुनते धरकर ध्यान।
ज्ञान कली खिल जाती तत्क्षण, बोध बुद्धि ऋद्धि प्रगटान॥
निज बोधन संबोधन करके, मोक्ष मार्ग प्रगटाते हैं।
अर्घ चढ़ाकर उन चरणों में, अपना पाप मिटाते हैं॥13॥

ॐ ह्रीं बोधबुद्धि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(लय- शुभ ध्यान में...)

छूते नहीं पर वस्तु को, पर शक्ति नव योजन कहा।
जीते परस के आठ गुण, जो परस का भोजन महा।।
तन शक्ति को वे साधकर, निज मुक्ति को लाते बुला।
वे दूर पर्शन ऋद्धि धारी, पूजता मन को खिला।।14।।

ॐ ह्रीं दूरस्पर्शन-ऋद्धिधारी-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(लय- मेरी भावना)

नव योजन की शक्ति है जो, स्वाद भरे रस को जाने।
रसना को वश में रखते वे, आतम रस को पहचाने।।
दूरास्वादन ऋद्धि पाकर, ना उसका उपयोग करें।
महातपस्वी मुनिराज को, अर्घ चढ़ा भवरोग हरें।।15।।

ॐ ह्रीं दूरास्वादन-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाशा दृष्टि रखकर मुनिवर, नाश करे सब बाह्य विकार।
अच्छी है या बुरी गंध है, नहीं करे वे सोच विचार।।
घ्राणेन्द्रिय की शक्ति उत्तम, नव योजन तक जान रहे।
महाविरागी मुनिराज को, अर्घ चढ़ा सम्मान करें।।16।।

ॐ ह्रीं दूरगंध-ऋद्धिप्राप्त-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधारण-सी आँखें भी तो, आठ शतक योजन देखें।
तप चक्षु के धारी मुनिवर, उससे आगे अवलोकें।।
सहस सैंतालिस दो सो तिरेसठ, योजन तक की शक्ति है।
मुनिराज की महिमा न्यारी, अर्घ समर्पित भक्ति है।।17।।

ॐ ह्रीं दूरावलोकन-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यों नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यंत्र नहीं पर मंत्र शक्ति है, बारह योजन तक सुनते।
सुनने की क्षमता अद्भुत है, सुनकर ना विचलित होते।।
रोध किया सब कर्णेन्द्रिय का, तप से ऋद्धि पाई है।
अर्घ चढ़ाकर पूजा कर लूँ, भक्ति की रूत आई है।।18।।

ॐ ह्रीं दूरश्रवण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त शतक विद्यायें आकर, महाऋषि को करे प्रणाम।
मेरी विद्या को स्वीकारो, विनय करे मुनि सम्मुख आन।
मुनिराज सब विद्या तजकर, निज आतम का ध्यान करें।
दशम पूर्व ऋद्धिधारी को, पूजा कर प्रणाम करें।।19।।

ॐ ह्रीं दशपूर्व-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हस्त वस्तु सम सब अवलोके, ज्ञान परोक्ष प्रत्यक्ष समान।
चौदह पूरब के श्रुत ज्ञानी, जाने लोका लोक प्रमाण।।
अनजाने श्रुत ज्ञान से रहकर, शुद्ध ज्ञान का ध्यान करें।
अर्घ चढ़ाकर पूजा करलें, निज आतम कल्याण करें।।20।।

ॐ ह्रीं चतुर्दशबुद्धि-ऋद्धिधारी-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंग भौम स्वर स्वप्न व्यंजना, देख रहे तन के लक्षण।
शुभ अशुभ कारण को जानें, बोल रहे स्पष्ट वचन।।
है अष्टांग निमित्त ऋद्धियाँ, मुनिवर को प्रगटित होते।
इसमें ना फँसना यह सोचे, मन पावन प्रमुदित होते।।21।।

ॐ ह्रीं अष्टांगनिमित्त-बुद्धिऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आगम के ज्ञाता वागीश्वर, जीते प्रतिवादी ज्ञाता।
स्याद्वाद अनेकान्त समझकर, झुका रहा अपना माथा।।
वादित्व ऋद्धि के धारी मुनिवर, धर्म प्रभाव बढ़ाते हैं।
अर्घ चढ़ाकर उन चरणों में, भक्त सभी हर्षाते हैं।।22।।

ॐ ह्रीं वादित्वबुद्धि-ऋद्धि धारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

बुद्धि ऋद्धि धारी मुनि-ज्ञानामृत बरसाय
जिन मुनि वचना नित सुने-बुद्धि ऋद्धि प्रगटाय

ॐ ह्रीं केवलादि वादित्व ऋद्धि पर्यन्त सर्व ऋषिश्वरेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय

(चारण ऋद्धि के 9 अर्घ्य)

निर्मल परिणामी मुनि, ऋद्धि चारण पाए।
चरण नमूं चारण मुनि, पुष्पाजंलि चढ़ाए॥
(तृतीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

ईया पथ की सतत साधना, जीवों का ना घात करें।
जँघा चारण ऋद्धि प्राप्त कर, नहीं कभी प्रमाद करें॥
दोनों हाथों को जंघापर, रखते ही नभ चलते हैं।
मन की शुद्धि और विशुद्धि, धरकर ऋद्धि वरते हैं॥1॥

ॐ ह्रीं जँघाचारण-ऋद्धिधारी-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल में थल वत् कदम बढ़ाते, विस्मय आकर्षण होता।
जलचर प्राणी पिड़ित ना हो, दया धर्म दर्पण होता॥
मुनिराज की सतत साधना, ऋद्धि जल चारण देती।
अर्घ चढ़ाकर पूजन करता, भव सागर तारण होती॥2॥

ॐ ह्रीं जलचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मकड़ी सम जाला बुनता मन, स्वयं स्वयं का बन्धन है।
पाप कर्म फल पाकर जग में, करता निशदिन क्रन्दन है॥
कोमल तंतु पर मुनि चलते, ना डोले ना टूट रहा।
धन्य धन्य मुनिराज साधना, अर्घ चढ़ा मन झूम रहा॥3॥

ॐ ह्रीं तंतुचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोमल कलियाँ डाली खिलती, रंग बिरंगे दृश्य लगे।
प्रातः खिलकर शाम झरे वह, जीवन का सब सत्य कहें॥
पुष्पों के ऊपर चलते पर, किञ्चित ना पीड़ा देते।
पुष्प चारण ऋद्धि धारी, की पूजा हम सब करते॥4॥

ॐ ह्रीं पुष्पचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पत्तों पर या पत्ते नीचे, छोटे मोटे जीव पले।
ऋद्धि धारी गमन करें पर, घात नहीं हो चरण तले॥
दयामूर्ति मुनिराज हमारे, योगीश्वर है करुणा वान।
अर्घ चढ़ाकर पूजा करता, करने आतम का कल्याण॥5॥

ॐ ह्रीं पत्रचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक में जीव भरे हैं, उनकी रक्षा सदा करें।
उपकारी बनकर जगति में, कर्म फर्ज मय अदा करें॥
गमन करें बीजों के ऊपर, जीव घात ना होता है।
ऋद्धि चारण बीज की जानों, भक्ति मुक्ति देता है॥6॥

ॐ ह्रीं बीजचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपशम हो या क्षपक श्रेणियाँ, साधक मुनिवर चढ़ते हैं।
कर्म दबा कर कर्म खपाकर, आत्म साधना करते हैं॥
श्रेणी चारण ऋद्धि धारक, ऋषिवर श्रेणि वत् चलते।
अर्घ चढ़ाकर पूजा कर लूँ, कर्म बेड़ी हर क्षण कटते॥7॥

ॐ ह्रीं श्रेणीचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिवर का पथ अग्नि पथ है, इस पथ पर विरले चलते।
तप अग्नि में तपकर यतिवर, कर्म कालिमा सब दहते॥
अग्नि चारण ऋद्धि पाकर, अग्नि शिखा पर गमन करें।
बाधा किञ्चित ना वे पावें, अर्घ चढ़ाकर नमन करें॥8॥

ॐ ह्रीं अग्निचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरालंब हो गगन समाना, धीर वीर गंभीर कहें।
मुद्रा कायोत्सर्ग धरें वे, गगन गमन ज्यों तीर रहे॥
ढाई द्वीप में विचरण करते, नभ चारण ऋद्धि मुनिराज।
चरण कमल में अर्घ चढ़ाऊँ, पाने को पदवी जिनराज॥9॥

ॐ ह्रीं नभचारण-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

वसन्त तिलका छंद

संसार में दुख सदा यह जीव पाता
मन इन्द्रियां रत रहे नित भोग भाता
वैराग्य भाव धर कर तप धारते है
वे ऋद्धि चारण परम पद पावते है॥

ॐ ह्रीं जंघादि नभ चारण ऋद्धि पर्यन्त सर्व मुनिवरेभ्य: नम: पूणार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय

(विक्रिया ऋद्धि के 11 अर्घ्य)

कौतुकता दर्शाती ऋद्धि, शक्ति को बतलाती है।
मुक्ति के साधक मुनिवर को, काम नहीं कुछ आती है॥
फिर भी अणिमा महिमा लघिमा, ऋद्धि को मुनि पाते हैं।
नहीं प्रयोजन ऋद्धि से रख, महामुनि कहलाते हैं॥

(चतुर्थ-वलय-मंडलस्योपरि-पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

कमल कर्णिका भीतर अनुपम, सुख-पूर्वक मुनिराज रहें।
हलन चलन ना पीड़ा पहुँचे, ऋद्धि धर ऋषिराज कहें।
अणिमा ऋद्धि की शक्ति से, अणुसम तन को धार रहें।
अर्घ चढ़ाकर करें वन्दना, अणुव्रत धर उद्धार करें॥1॥

ॐ ह्रीं अणिमा ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरु पर्वत सम काया को, क्षण में करते वृहद् विशाल।
चक्रवर्ती-सा वैभव पाकर, हो जाते कृत्य कृत्य निहाल॥
महिमा ऋद्धि की महिमा तो महाव्रती ही पाते हैं।
अर्घ चढ़ाकर महामुनियों को, महापुण्य फल पाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं महिमा-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भारी भरकम काया धारी, होते तप बल से मुनिराज।
अर्क तूल सम हल्के होते, लघिमा ऋद्धि के ऋषिराज॥
नहीं प्रयोजन बाह्य शक्ति से, फिर भी मुनिवर पाते हैं।
अर्घ चढ़ा हम भक्ति करते, अपना पुण्य बढ़ाते हैं॥3॥

ॐ ह्रीं लघिमा-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन से तन को कुन्दन करके, सूक्ष्म रूप में शक्ति भरी।
इन्द्र सखा बन मुनि चरणों की, वन्दन करके भक्ति करी॥
गरिमा ऋद्धि गरिमा मय कर, गुरु गरिमा को बढ़ाती है।
अर्घ चढ़ाऊँ गुरु चरणों में, सर्व दोष विनशाती है॥4॥

ॐ ह्रीं गरिमा-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र सूर्य क्या मेरू चोटी, को कर से स्पर्श करें।
धरती पर आसन से बैठें, जनमन में शुभ हर्ष भरें॥
निजानन्द में लीन मुनिश्वर, प्राप्ति में ना फँसते हैं।
प्राप्ति ऋद्धि धारी मुनिवर, अर्घ समर्पित करते हैं॥5॥

ॐ ह्रीं प्राप्ति-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जल भूमि आकाश अगन में, रूप धरे आवें जावें।
निज में निज का अवलोकन कर, व्यर्थ कार्य तजते जावें॥
निष्काम तपस्वी मुनिराज जी, विक्रिया प्राकाम्य पावें।
अर्घ चढ़ाकर भक्ति कर लूं, भावों में सु-साम्य आवें॥6॥

ॐ ह्रीं प्राकाम्य-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल निश्चल निर्भय निरूपम, निज ईश्वर को जाना है।
अतिशय गुण ईशित्व ऋद्धि का, देव इन्द्र पहचाना है।
सबकी सेवा भक्ति पाकर, वैरागी मन दूर रहे।
अर्घ चढ़ाकर पूजा कर लूँ, जो कर्मो को चूर रहे॥7॥

ॐ ह्रीं ईशत्व-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपवन में जब फूल खिले, तो भंवरे आकर्षित होते।
परम ऋषि की परम साधना, के वश हो हर्षित होते।।
वशित्व ऋद्धि धारक मुनि की पूजन अर्चन करता हूँ।
इच्छाओं को वश में करके, सुख शान्ति को वरता हूँ।।8।।

ॐ ह्रीं वशित्व-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोहे की दीवारें हो या, ऊँचे पर्वत चट्टानें।
निराबाध ही पार करे वे, नहीं कोई बाधक मानें।।
जग में ऐसा जीवन जीना, न बाधक ना बाधा हो।
ऋद्धि अप्रतिघात शक्तिमय, अर्घ चढ़ा सुख साता हो।।9।।

ॐ ह्रीं अप्रतिघात-ऋद्धिधारक-सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नयन अगोचर क्षण में होते, क्षण में दृष्टि गोचर हो।
ऋद्धि अन्तर्ध्यान की प्यारी, विषय वासना खोकर हो।।
ना ऋद्धि पाने की इच्छा, मुनिवर मन में रखते हैं।
व्यर्थ कल्पनाएं मिट जाए, अर्घ समर्पित करते हैं।।10।।

ॐ ह्रीं अन्तर्ध्यान-ऋद्धिधारक-सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुनियाँ में बहु रूप बनाकर, लोग छला करते सबको।
रूपी बनकर भव भव घूमा, रूपातीत करो हमको।।
कामरूपिणी ऋद्धि मुनि को, मन वांछित सब रूप मिले।
अर्घ चढ़ाऊँ उन मुनियों को, ऋद्धि पा जिन रूप खिले।।11।।

ॐ ह्रीं कामरूपिणी धारक सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा– **अणिमा महिमा विक्रिया, काम रुपिणी रूप।**
निज स्वभाव मे लीन हैं, महामुनि जिन रूप।।

ॐ ह्रीं अणिमादि कामरुपिणी पर्यन्त सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम-वलय

(तपोतिशय ऋद्धि के 8 अर्घ्य)

तपोतिशय की साधना, शाश्वत सुख की खान।
तन पाकर जो तप करें, करें आत्म कल्याण।।

(पंचम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अनशन का क्रम बढ़ता जाता, मरण काल तक चलता है।
खेद नहीं ना शोक द्वेष है, चेहरा खूब दमकता है।।
उग्र तपस्या ऋद्धि धारी, मुनियों का गुणगान करूँ।
अर्घ चढ़ाकर भक्ति कर लूँ, निज व्रत का उत्थान करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं उग्रतपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप की सौरभ नित प्रति बढ़ती, नर देवा भक्ति करते।
नहीं नाम ना मान करें वें, मुक्ति की युक्ति धरते।।
दीप्त तपोनिधि मुनिराज जी, कर्म खपाते क्षण प्रति क्षण।
अर्घ चढ़ाऊँ ध्यान लगाऊँ, दिव्य साधना को वन्दन।।2।।

ॐ ह्रीं दीप्ततपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्याग धारकर एक दिवस में, एक बार आहार करे।
तपो साधना इतनी गहरी, नहीं कभी निहार करे।।
तप्त तपस्वी गरम तवे सम, भोजन अवशोषित करते।
अर्घ चढ़ाऊँ इन मुनियों को, धर्म ध्यान पोषित करते।।3।।

ॐ ह्रीं तप्ततपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुक्तावलि या सिंह निष्क्रीड़ित, महातपस्वी तप तपते।
बढ़े साधना ध्यानाराधना, नहीं क्लेश किञ्चित करते।।
महायतिश्वर महायतन से, कर्मों को कृश करते हैं।
ऋद्धि महातप के धारी को, अर्घ समर्पित करते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं महातपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्येष्ठ मास की तप्त दोपहरी, गिरी शिखर पर तपधारे।
हाड़ कँपाने वाली ठण्डक, सरवर तट निज श्रृंगारे॥
रिमझिम बरसे या तूफानी, वृक्ष तले तप धार लिया।
परिषह जयते घोर तपस्वी, मुनिव्रत अंगीकार किया॥5॥

ॐ ह्रीं घोरतपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तन काटे या आग लगावे, गर्म सलाखों से दागे।
देव करे उपसर्ग भयंकर, सहन करे चेतन जागे॥
भेद ज्ञान का आश्रय लेकर, घोर पराक्रम ऋद्धि धरें।
निर्विकार गुणवान मुनिश्वर, अर्घ चढ़ाकर सिद्धि वरें॥6॥

ॐ ह्रीं घोरपराक्रमतपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुष्ट देव के वास थान या, घोर विपिन तपधार रहें।
सागर जल सोखे पर्वत या, ग्राम नगर निस्सार करें॥
शक्ति तप बल की पाकर वें, घोर गुणों को धारा है।
तेरी महिमा मैं क्या गाऊँ, अर्घ चढ़ा सुखकारा है॥7॥

ॐ ह्रीं घोरगुणतपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम सतावें तन मन भागे, वे मन के कमजोर कहे।
सुन्दर नारी देवी लखकर, ब्रह्मचर्य व्रत घोर धरे॥
मेरू सम मन स्थिर करते, काम भाव को वश करके।
घोर ब्रह्मचारी निष्कामी, अर्घ चढ़ाऊँ कर भर के॥8॥

ॐ ह्रीं अघोरब्रह्मचर्यतपोतिशय-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा— **इन्द्रिय मन इच्छा हनि, तप धारे निर्ग्रन्थ।**
कर्म नाश प्रतिपल करें, पाने पद अरिहन्त॥

ॐ ह्रीं उग्रतपोतिशयादि अघोर ब्रह्मचर्य ऋद्धि पर्यन्त सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्ठम वलय

(बलऋद्धि के 3 अर्घ्य)

मन वच तन बल पाय कर, करे धर्म के काम।
बल पर का संबल बने, अन्त मोक्ष विश्राम॥

(षष्ठम-वलय-मण्डलस्योपारि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

मन की शक्ति अद्भुत अनुपम, तीन लोक भ्रमता रहता।
मन वश में कर एक मुहुरत, में सब श्रुत चिन्तन करता॥
मन बल ऋद्धि धार मुनिश्वर, द्वादशांग को जान रहे।
अर्घ चढ़ाकर पूजा करते, साक्षात प्रभु मान रहे॥1॥

ॐ ह्रीं मनोबल-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षर मात्रा पद स्वर उचरें, एक मुहुरत समय लहे।
द्वादशांग मय श्रुत वर्णन कर, मुनिवर बोले निजमय रहे॥
ऋद्धि धारी वचन बली की, महिमा अपरम्पार है।
पूजा भक्ति इनकी कर लो, मिलता जिन वच सार है॥2॥

ॐ ह्रीं वचनबल-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

खड्गासन या पद्मासन में, वर्षों तक स्थिर रहते।
पशु पक्षी आवास बनाकर, निर्भय हो विचरण करते॥
काय बली न विचलित खेदित, आत्म ध्यान में मग्न रहे।
तन चंचलता मेटन कारण, ऋषि चरण में अर्घ चढ़ें॥3॥

ॐ ह्रीं कायबल-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा– **बल ऋद्धि की साधना, योग निरोध कराय।**
त्रय योगो से ध्यान कर, कर्म बलि विनशाय॥

ॐ ह्रीं त्रयोबल ऋद्धि धारकाय सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सप्तम वलय

(औषध ऋद्धि के 10 अर्घ्य)

जड़ औषध तन रोग हर, धर्म हरे भव रोग।
पुष्पाञ्जलिं क्षेपण करूँ, चरण नमूं त्रय योग।।
(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

तन मन की कोमलता पाकर, पर काया स्पर्श करें।
रोग नशावें जोश बढ़ावे, जीवन में सब हर्ष भरें।।
मुनिवर के संस्पर्श मात्र से, सर्वरोग मिट जाता है।
आमर्शौषधि ऋद्धि धारी, सर्व जगत सुखदाता है।।1।।

ॐ ह्रीं आमर्शौषधि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

थूक लार खंखार आदि में, औषध के गुण किञ्चित हैं।
मंत्र साधना संयमी जीवन, से भी यह कुछ सिंचित हैं।।
महातपस्वी ऋषिराज के, तन में यह औषध होता।
परस मात्र से पुण्य योग से, सर्व रोग विगलित होता।।2।।

ॐ ह्रीं खेल्लौषधि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

औदारिक तन तप से तपता, स्वेद बूँद बाहर आता।
व्याधि पीड़ित का संस्पर्शन, सर्व रोग झट झर जाता।।
मुनियों का तप औषध जग में, सारी पीड़ा हरता है।
मुनिवर की शुभ कृपा मात्र से, जीवन सुख से भरता है।।3।।

ॐ ह्रीं जल्लौषधि-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यूँ तो तन की सब धातु में, औषध का गुण रहता है।
तपसी तप के बल पर उसको, औषध मय कर देता है।।

महातपस्वी का तन पाकर, मूत्र रोग का नाश करे।
मल्लौषध के ऋद्धि धारी, मम रोगों का नाश करे।।4।।

ॐ ह्रीं मल्लौषधि–ऋद्धिधारक–सर्व–ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

रोगी काया माया पाकर, भी ना खुश रह पाता है।
सुख का कारण निरोगी तन, जग सारा बतलाता है।।
वायु मल मुनिराज का छूकर, रोगी तन स्पर्श करें।
विडोषधि की महिमा न्यारी, सर्व व्याधि संघर्ष हरें।।5।।

ॐ ह्रीं विडोषधि–ऋद्धिधारक–सर्व–ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंग अंग से रत्नत्रय की, शुभ धाराएं बहती हैं।
पूर्ण रूप से सर्वगात को, सर्वोषधि से भरती हैं।।
कृपा मिले या परस मिले या, मन से आशीर्वाद मिले।
रोग रहित तन कामदेव सा, पाकर मन का भाव खिले।।6।।

ॐ ह्रीं सर्वोषधि–ऋद्धिधारक–सर्व–ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मांत्रिक मंत्र सहारा लेकर, सर्पादिक विष दूर करे।
मुनिराज की सहज साधना, अतिशय से भरपूर रहे।।
कराशीष या मधुर वचन से, विष निर्विषता को पाता।
अर्घ चढ़ाकर भक्ति कर लूं, ऋषिराज सब सुखदाता।।7।।

ॐ ह्रीं आशीर्विषौधि–ऋद्धिधारक–सर्व–ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रेम शक्ति या क्रोध शक्ति, सब इंसानों में होती है।
ऋद्धि दृष्टि विष मुनियों की, क्षण में जीवन खोती है।।
कर्म नशाने वाले मुनिवर, ना ऋद्धि प्रयोग करें।
अर्घ चढ़ा उनके चरणों में, शान्ति मय सहयोग करें।।8।।

ॐ ह्रीं दृष्टिविष–ऋद्धिधारक–सर्व–ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोग रहित तन पावे ऐसा, किञ्चित तो उपकार करो।
पीड़ित रोगी प्राणी लखकर, दया धर्म स्वीकार करो॥
जितनी सेवा वैय्यावृति, अपने माध्यम से होवें।
उतनी अपनी बिमारी भी, अपने तन से ही खोवें॥9॥

ॐ ह्रीं दयासेवा धर्म विस्तारकाय सर्वप्राणी रोग मुक्त करणसमर्थाय सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पाँच कोटी अरू अड़सठ लाखा, सहस निन्यानवें अंक कहो।
उसमें पाँच शतक चौरासी, रोग जोड़ हर अंग अहो॥
रोगो का घर यह तन सारा, संयम से उपचार करूँ।
दान दया रोगी सेवा कर, करूणा मय व्यवहार करूँ॥

ॐ ह्रीं पाँच करोड़ अड़सठ लाख निन्यानवे हजार पाँच सौ चौरासी रोग विनाशनाय सर्व ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वलय

(रस ऋद्धि के 6 अर्घ्य)

निरस मन रसमय करें, पूजा भक्ति धार।
तन्मय तपरस से भरे, शुद्धातम् विस्तार॥

(अष्टम वलय मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

कर्मोदय या कारण पाकर, मन संतापित हो जाता।
क्रोधित होकर वचन उचारें, तू क्यों ना है मर जाता॥
वाणी के मुखरित होते ही, जीवन क्षण में नश जाए।
आशीर्विष भय कारी ऋद्धि, अर्घ चढ़ा समता पाए॥1॥

ॐ ह्रीं आशीर्विषरस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिराज के क्रुद्ध नयन से, अँगारे जब झरते हैं।
सम्मुख रहने वाले प्राणी, तत्क्षण ही वे मरते हैं॥

दृष्टि विष ऋद्धि की शक्ति, महातपस्वी पाते हैं।
दया क्षमा समता धारण कर, अपना कर्म खपाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं दृष्टिविषरस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना को रूचिकर ना लगता, ऐसा भोजन कर में आए।
क्षीरश्रावी ऋद्धि की महिमा, भोजन क्षीर वत हो जाए।।
वचनों में रसमय धारा वह, जन तुष्टि कर मन हर्षाए।
वचन सुधाकर अमृत घोले, कर्ण तृप्त कर बहु सुखदाए।।3।।

ॐ ह्रीं क्षीरस्रावीरस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षट् रस त्यागे साधक मन से, यश का ना हो नाम निशान।
रूखा सूखा भोजन कर में, रखते ही हो घृत के समान।
वचन पुष्टता घृत सम होवे, जब निर्मल वाणी बोले।
पर विश्वासघात न करते, सर्पि श्रावी ऋद्धि होले।।4।।

ॐ ह्रीं सर्पिश्रावीरस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आसक्ति का भाव तजे ओर, अन्न पान छोड़ा करते।
मधुर वचन व्यवहार करे ओर, सबका मन जोड़ा करते।।
भव्य जीव मुनिराज भेषधर, मधुश्रावी ऋद्धि पाए।
कर भोजन वच मधुरिम होवे, कर्माश्रव भी रुक जाए।।5।।

ॐ ह्रीं मधुश्रावीरस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पाणि पात्री मुनिवर कर में, अमृत सम आहार लगे।
बोले अमृत सम शुभ बैना, सब जन को उपहार लगे।।
मृदु स्वभावी कोमल हृदया, महाव्रती बन जाते हैं।
अमृत श्रावी ऋद्धि प्राप्त कर, परमामृत को पाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं अमृत श्रावीरस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

आर्शीविष से अमृत श्रावी, रस ऋद्धि धारक मुनिराज।
तप बल से ऋद्धि प्रगटावे, नही प्रयोजन रसना काज॥
मुनिवर की भक्ति कर प्राणी, रोग शोक भय दूर करें।
विषयों में रस ना ले करके, ध्यान त्याग भरपूर करें॥

ॐ ह्रीं आशीर्विषादि अमृत स्रावी ऋद्धि पर्यन्त सर्व ऋद्धिश्वरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवम् वलय

(अक्षीण महानस ऋद्धि के 2 अर्घ्य)

ऋद्धि महा अक्षीण की, मुनिराज के होय।
पुष्पांजलिं अर्पित करूँ, धर्म क्षीण न होय॥
(नवम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

पुण्यवान श्रावक आँगन में, मुनिराज आहार करें।
चक्रवर्ती की सेना भी आ, शेष अन्न स्वीकार करें॥
फिर भी भोजन कम ना पड़ता, ऋषिराज की महिमा है।
रस अक्षीण महानस ऋद्धि, तप की अद्भुत गरिमा है॥1॥

ॐ ह्रीं आहार-अक्षीणमहानस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस आँगन मुनिराज विराजें, चार हाथ के भीतर ही।
चक्रवर्ती या इन्द्र की सेना, सुख से बैठे अन्दर ही॥
स्थान ऋद्धि अक्षीण महानस, मुनिराज जी पाते हैं।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ चढ़ाकर, दिव्य भाव प्रगटाते हैं॥2॥

ॐ ह्रीं स्थान-अक्षीणमहानस-ऋद्धिधारक-सर्व-ऋषिश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

दोहा– **कर तल ग्रास प्रदान कर, पाया पुण्य अनन्त।**
घर आँगन सूना नही, जहाँ धरे पग सन्त॥

ॐ ह्रीं आहार स्थान अक्षीण महानस ऋद्धिभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशम वलय

(पंचम काल के मुनिराजों का अर्घ्य)

मुनिराज की वन्दना, पुण्यवान कर पाय।
मिथ्या दृष्टि जीव तो, फेर मुखों को जाय॥

(दशम-वलय-मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

तीर्थंकर का सूरज जग में, मावस को निज घर पहुँचा।
मुनिवर का दीपक दर्शन कर, सारे जग का मन चहका॥
गणधर मुनिवर के दर्शन पा, माह चवालीस बीत गए।
गौतम जम्बू सुधर्मा पा, तीर्थंकर से रीत गए॥1॥

ॐ ह्रीं तीर्थंकर-महावीरनिर्वाण-पश्चात-गौतम सुधमाजम्बू स्वामी-अनुबद्ध केवलीसह-सर्व-ऋषीश्वरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

चौथे काल के अन्त में, वीर गए निज धाम।
गौतम जम्बू मुनि सुधर्मा, अनुबद्ध केवली नाम॥
अर्घ चढ़ा वन्दन करूँ, पंचम काल में आए।
मुनिवर की शुभ श्रृंखला, वीरांगज तक पाए॥2॥

ॐ ह्रीं श्री महावीर-निर्वाणोपरान्ते गौतम सुधर्माजम्बू स्वामी-अन्तिम वीरांगज-पर्यन्त-सर्व मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन घटाकर नौ करोड़ की, संख्या मुनिवर की जानो।
धरती पर जीवन्त जिनेश्वर, उन पर श्रद्धा हित मानो॥

तपसी जल से भिन्न कमल वत्, जीवन अपना जीते हैं।
ढाई द्वीप के मुनिराज को, अर्घ समर्पित करते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-तीन-कम-नौ-करोड़-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विष्णु नन्दिमित्र अपराजित, गोवर्धन पावन मुनिराज।
सम्पूरण श्रुत पारगामी वें, निर्मल परिणामी ऋषिराज।।
पंचम युग में महाज्ञान पा, परोक्ष केवली कहलाए।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, श्रुत केवली मन भाएँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीविष्णु-नन्दिमित्र-अपराजित-गोवर्धन-सप्तदशकमध्ये विराजित श्रुतकेवली मुनिवरेभ्योः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भद्रबाहु तपसी महायोगी, भद्रभाव के धारी थे।
चन्द्र गुप्त के गुरुवर प्यारे, मोक्ष मार्ग अधिकारी थे।।
श्रुत केवली की पदवी पाकर, पंचम काल विहार किया।
श्रवण बेल गोला पर्वत पर, संल्लेखना स्वीकार किया।।5।।

ॐ ह्रीं त्रयदशकमध्ये श्रीभद्रबाहु-श्रुतकेवली-मुनिवरेभ्यः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋद्धि सिद्धि से परिपूरित, दशम पूर्वधारी मुनिराज।
नाम विशाखा प्रोष्टिल क्षत्रिय, श्री जय नाग सिद्धार्थ विराज।।
धृतिषेण श्री विजय मुनिशा, बुद्धिल गंगदेव यति।
धर्मसेन एकादश मुनिवर, अर्घ चढ़ावें जैनमति।।6।।

ॐ ह्रीं 183 वर्ष मध्ये दशपूर्वधारी-विशाखाचार्य-प्रोष्टिल-क्षत्रिय-जयसेन-नागसेन-सिद्धार्थ-धृतिषेण-विजय-बुद्धिल-गंगदेव-धर्मसेनादि-एकादश-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्माराधक ज्ञानी मुनिवर, ग्यारह अंग के धारी थे।
पूज्य श्री नक्षत्र नाम अरुँ, श्री जयपाल अविकारी थे।।

पाण्डव साधक श्री ध्रुवसेना, कंसाचार्य महा हितकार।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, बुद्धि शुद्धि निज उद्धार॥7॥

ॐ ह्रीं 123 वर्ष-मध्ये-एकादशांगधारी-श्रीनक्षत्र-जयपाल-पाण्डव-ध्रुवसेन-कंसाचार्यादि-सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूक्ष्म ज्ञान और शुद्ध ज्ञान से, जगति का कल्याण करें।
मुनिवर हैं सुभद्र यशोभद्र, भद्रबाहु गुणगान करें॥
लोहाचार्य प्रशंसित संता, जैनमार्ग विस्तार किया।
दश नव अठ अंगों के धारी, अर्घ चढ़ा मनुहार किया॥8॥

ॐ ह्रीं 99 वर्ष-मध्ये-श्रीसुभद्र-यशोभद्र-भद्रबाहु-लोहाचार्य-सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विनय श्री शिव अर्हददत्ता, रागद्वेष से दूर रहें।
अंग पूर्व के ज्ञाता वाग्मी, ज्ञानध्यान रसपूर रहे॥
गुणधर माघनन्दि मुनिराजा, नित्य भ्रमण होता रहता।
दर्शन पूजन चर्या भक्ति, आराधन का मन करता॥9॥

ॐ ह्रीं श्री विनयदत्त श्रीदत्त शिवदत्त अर्हतदत्त-गुणधर-माघनन्दि-एकदेश-अंगपूर्व-ज्ञाता-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा नगरी में संतों का, सम्मेलन था करवाया।
प्रतिक्रमण युग करवा करके, संघ भेद का यश पाया।
नन्दी वीर या पंचस्तूपा, सेनभद्र सिंह चन्द्र कहो।
वृहद् संघ के नायक मुनिवर, जैन धर्म के सन्त अहो॥10॥

ॐ ह्रीं वृहद्-संघाधिपति श्रीअर्हत्बलि-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काल बीतते समय लगे ना, बीता छः सौ वर्ष बढ़ा।
चिन्ता जागी गुरु धरसेना, श्रुत रक्षा का भाव जगा॥
अर्हतबली से शिष्य बुलाकर, उनको सारा ज्ञान दिया।
अंगधारी आचार्य नमूं मैं, चरण कमल में अर्घ चढ़ा॥11॥

ॐ ह्रीं धरसेन अर्हत्बली आदि सर्व अंगधारी मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वीर प्रभु की दिव्य ध्वनि का, गणधर गुम्फित ग्रंन्थ महा।
पुष्पदन्त ने लिपिबद्ध कर, णमोकार महामंत्र कहा।।
ऋषि सभा के अधिपति बनकर, उच्चासन को पाया है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, षट्खण्डागम पाया है।।12।।

ॐ ह्रीं प्रथम सूत्र ग्रंथ प्रदाता अक्षरात्मक णमोकार मंत्र लिपिबद्ध कर्ता भगवन् पुष्पदन्त चरण कमलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पदन्त मुनि धरे समाधि, भूतबलि मन अकुलाया।
एक वृक्ष के दो डाली हम, सिद्धान्तों का फल पाया।।
पूर्ण किया षट्खण्डागम को, श्रुत पंचमी का पर्व चला।
पुष्पदन्त अरुँ भूतबली को, अर्घ चढ़ा मन पुष्प खिला।।13।।

ॐ ह्रीं षट्खण्डागम-पूर्णकर्ता-भगवन्-भूतबली-चरणकमलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इनकी शक्ति युक्ति लखकर, लेखन क्रम आरंभ हुआ।
अंग ज्ञान से रहित मुनिश्वर, गाथा टीका सूत्र कहा।।
कुन्द कुन्द अरुँ वीरसेन ने, गाथा टीका रच डाला।
अर्घ चढ़ा मुनि ग्रंथ शृंखला, गाऊँ पावन गुणमाला।।14।।

ॐ ह्रीं कुन्दकुन्द-वीरसेनादि-सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उमास्वामी पद्मनन्दी अरुँ, यतिवृषभ आचार्य हुए।
शिवकोटि वसुनन्दी नेमि, अमृतचन्द्र कई कार्य किए।।
जिन जय नय रविसेन कहें, या विद्यानन्दी श्री आचार्य।
प्रभाचन्द्र या कुमुदचन्द्र मुनि, अर्घ चढ़ा पुरण शुभ कार्य।।15।।

ॐ ह्रीं श्रीउमास्वामी-पद्मनन्दी-यतिवृषभ-शिवकोटी-वसुनन्दी-नेमिचन्द्र-अमृतचन्द-जिनसेन-जयसेन-नयसेन-रविसेन-विद्यानन्दी-प्रभाचन्द्र-कुमुदचन्द्र आदि सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धैर्यवान अकलंक मुनिशा, न्याय शास्त्र का ज्ञान दिया।
मिथ्या मत की जड़ें काटकर, जैन धर्म विस्तार किया।।
समंतभद्र ने धर्म ध्वजा ले, पाखण्डी मद चूर किया।
मानतुंग मुनि भक्तामर रच, भक्ति भाव भरपूर दिया।।16।।

ॐ ह्रीं श्रीअकलंकमुनि-समंतभद्रमुनि-मानतुंग मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जैन मुनि शुभचन्द्र देव ने, तप बल से सिद्धि पाई।
चरण धूलि छिड़का पत्थर पर, स्वर्ण बना विस्मित भाई।।
वादिराज ने भक्ति करके, तन का कोढ़ मिटाया है।
पूज्यपाद ने दृष्टि पाने, शान्ति भक्ति रचाया है।।17।।

ॐ ह्रीं श्रीशुभचन्द्र-वादिराज-पूज्यपादादि-सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अमित गति योगीन्दु स्वामी, जिनवाणी रसघोल रहे।
सिंह नन्दि गुणभद्रा स्वामी, मन की गाँठें खोल रहें।।
स्वामी कार्तिकेय मुनि का, वैरागी मन पावन है।
पंचम युग के मुनिराज जी, ज्येष्ठ मास में सावन है।।18।।

ॐ ह्रीं अमितगति-योगीन्दुस्वामी-सिंहनन्दि-गुणभद्र-स्वामीकर्तिकेय मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिमार्ग की निर्मल गंगा, अविरल बहती आई है।
ग्रंथ रचे निर्ग्रन्थ रचे, अरहन्त प्रतिष्ठा कराई है।।
त्याग मार्ग पर लाखों मुनिवर, चल कर निज कल्याण किया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, जैन धर्म पहचान दिया।।19।।

ॐ ह्रीं सहस्त्र-वर्ष-मध्ये-सर्व-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिकुंजर थे आदिसागर, शान्तिसागर मुनिमहान।
महावीरकीर्ति जी मुनिवर, मंत्रों के ज्ञाता विद्वान।।
विमल सिन्धु कई बात बताकर, निमित्त ज्ञानी बनकर उभरे।
पुष्पदन्त गुरुराज हमारे, चरण नमूँ जीवन सुधरे।।20।।

ॐ ह्रीं श्री आदिसागर-शान्तिसागर-महावीरकीर्ति-विमलसागर-पुष्पदन्तसागर-सर्व आचार्य गुरु चरणकमलेभ्यो: नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्तमान के मुनि आचारज, उपाध्याय का वन्दन है।
मोक्ष मार्ग पर चलने वाले, सन्तों का अभिनन्दन है॥
इनके दर्शन कलिकाल में, पुण्यवान को होते हैं।
सेवा भक्ति पूजन अर्चन, करके धर्म संजोते हैं॥21॥

ॐ ह्रीं वर्तमानकालीन-सर्व-आचार्य-उपाध्याय-साधु-परमेष्ठीभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच प्रकारे मुनिवर प्यारे, पंचम गति के साधक हैं।
पंच महाव्रत धारण करते, जगति के उद्धारक हैं॥
अष्ट द्रव्य का थाल सजाकर, बहुविध भक्ति करता हूँ।
मोक्षमार्ग पर गमन करूँ मैं, यही प्रार्थना करता हूँ॥22॥

ॐ ह्रीं पुलाक-वकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातक-पंचप्रकार-सर्वमुनिवरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाअर्घ्य

घत्ता

दश अष्ट-बुद्धिऋद्धि-धारक, नव चारण ऋद्धि भव तारक।
जय सात ऋद्धि है तप बल की, जय आठ ऋद्धि औषध तल की॥
ऋद्धि विक्रिया ग्यारह मानो, मन वच तन बल त्रय यह जानो।
रस ऋद्धि षट् अतिशय कारी, दो अक्षीण नमें सुख कारी॥
दुखमा सुखमा में ऋद्धिधर, दुखमा में होते सिद्धिधर।
ऋद्धि सिद्धि धारी ध्याऊँ, अर्घ चढ़ाकर सिद्धि पाऊँ॥

ॐ ह्रीं चतुषष्ठि: ऋद्धिसिद्धि-धारक-सर्व-ऋषीश्वरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य-ॐ ह्रीं चतुषष्ठि: ऋद्धि सिद्धि धारक सर्व ऋषीश्वरेभ्यो नम: अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

धन्य धन्य मुनिराज हमारे, उपसर्गों को जयते हैं।
शीत ऊष्ण और क्षुधा तृषा की, बाधाएँ नित सहते हैं॥

वर्षा में तरु तल के नीचे, अपना ध्यान लगाते हैं।
ग्रीष्म ऋतु में पर्वत पर जा, अपने कर्म खपाते हैं॥

शीत ऋतु की ठण्ड भयानक, अंग अंग तन काँप रहे।
देह भिन्न चेतन्य स्वरूपी, आत्म शक्ति को भाँप रहे॥

कभी वृक्ष कोटर में जाकर, कभी गुफा में वास करें।
आतापन अभ्रावकाश कर, निज आतम प्रकाश भरें॥

श्रेष्ठ तपोनिधि ध्यान मनीषी, शान्त दिव्य संयम धारी।
धीर वीर गंभीर यतिश्वर, ऋषियों की महिमा न्यारी॥

उत्तम त्रय सहनन के धारी, दुर्धर तप निश्चल करते।
महाऋद्धि के स्वामी होकर, निर्विकार अविचल रहते॥

दुखमा सुखमा काल में ऋद्धि, दुखमा में कुछ सिद्धि है।
मुनिराज का दर्शन ही तो, सुख शान्ति समृद्धि है॥

मुनिराज की सतत साधना, आदि-वीर तक चलती है।
कर्म निर्जरा स्नातक, निर्ग्रन्थ पने तक बढ़ती है॥

अन्तिम त्रय सहनन को पाकर, बने पुलाक कुशील मुनि।
व्रत पालन कर वकुश मुनि, बन धीरे-धीरे कर्म हनि॥

वस्त्राभूषण घर परिवार, छोड़ चले करने उद्धार।
पर घर में जा चर्या करते, आत्म हितैषी करुणाधार॥

एकाशन पदयात्रा लोचन, खड्गासन कर ले आहार।
भूमि शय्या नहीं नहाना, रत्न त्रय शुद्धि आधार॥

कभी जिनालय या कुटिया में, मुनिराज स्वाध्याय करें।
धर्म ज्ञान की ज्योति जलाकर, भव्य जीव उल्लास भरे॥

समता धारें निज को निखारें, अनुकूल प्रतिकूल मिले।

पर पूजा की नहीं कामना, शूल मिले या फूल खिलें॥

चार हाथ भूमि अवलोके, जीव दया का भाव धरें।
पर पीड़ा में मक्खन सम बन, ममतामय स्वभाव करें॥

कोई हँसते कोई नमते, मुनिराज विहार करें।
कभी भवन में कभी विपिन में, साम्य भाव स्वीकार करें॥

चौथा काल सदा अनुकूला, तीर्थंकर दर्शन पाते।
साक्षात् मुक्ति ऋद्धि भी, मन श्रद्धा से भर जाते॥

पंचम काल सदा प्रतिकूला, ऋद्धि ना तीर्थंकर हैं।
शक्तिहीन तन अन्न पान बिन, कुछ समयों में अस्थिर है॥

ऐसे युग में दर्श ज्ञान धर, मुनि मुद्रा को अपनाते।
शत वर्षों की महा तपस्या, का फल वर्षों में पाते॥

अन्तर्मन में विषय वासना, बाहर लोक लाज भय राज।
फिर भी पंचम युग में देखो, भेष दिगम्बर में मुनिराज॥

पाप बैर मिथ्या तिमिर से, जिसका हृदय भरा हुआ।
चलते फिरते तीर्थ स्वरूपी, मुनिदर्शन मन नही हुआ॥

दुर्लभ जैन धरम कुल पाया, मुनिवर दर्शन पाए हैं।
उसके पद चिन्हों पर चलकर, संयम पथ अपनाए हैं॥

विषयों में रच पच कर मेरा, काल बहुत बेकार हुआ।
मुनिवर की शुभ कृपा दृष्टि से, मम जीवन उद्धार हुआ॥

मुझको संबल देकर मुनिवर, मेरा मन बल वृहद करो।
मुनि पने की करूँ साधना, मेरे मन को अर्हत करो॥

दोहा

मुनिराज की साधना, सर्व जीव सुखदाय।
'सौरभसागर' नित नमें, सम्यग्दर्शन पाय॥

ॐ ह्रीं चतु:षष्ठि-ऋद्धि-धारक-सर्व-मुनिवरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भगवान महावीर स्वामी के मोक्ष जाने के पश्चात् हुए महामुनिराजों के नाम

भगवान महावीर स्वामी के 633 वर्ष के पश्चात् आचार्य भगवनश्री पुष्पदन्त जी के द्वारा भगवान महावीर की दिव्य वाणी का लेखन प्रारंभ हुआ, इसी मध्य आचार्य भद्रबाहु के शिष्य चन्द्रगुप्त मुनिराज अन्तिम मुकुटबद्ध राजा ने दीक्षा ली एवं गुणधर मुनि अर्हत्बलि एवं माघनन्दि धरसेन मुनिराज हुए। षट्खण्डागम ग्रंथ की पूर्णता पर ग्रंथ महापूजा के रूप में जिनवाणी का महापर्व **"श्रुत पंचमी पर्व"** प्रारंभ हुआ एवं षट्खण्डागम ग्रंथ ऋषि सभा के अधिपति कहलाने वाले आचार्य भगवन पुष्पदन्त देव ने **"विसदि सूत्र"** के माध्यम से 8 भाग प्रमाण ग्रंथ लिखे एवं पूर्णता प्रदान आचार्य भूतबलि ने किया। तभी से मुनियों के लिए पिच्छी-कमण्डल उपकरण के अलावा शास्त्र को तीसरा उपकरण मानकर स्वाध्याय को नया रूप प्रदान किया गया, जो गृहस्थ के लिए कर्तव्य मुनिराज के लिए आवश्यक एवं आचार्य के लिए तप रूप माना गया। आचार्य पुष्पदन्त भूतबलि के पश्चात् इन्हीं के ग्रंथ का सहारा लेकर अनेक आचार्यों ने अनेक टीकाएँ गाथाएँ लिखीं। तो आइए जाने भगवान महावीर स्वामी के पश्चात् हुए ऋद्धि सिद्धि महामुनिराजों के नाम........

3 अनुबद्ध केवली

1. श्री गौतम स्वामी जी	12 वर्ष
2. श्री सुधर्म स्वमी जी	12 वर्ष
3. श्री जम्बू स्वामी जी	38 वर्ष
	62 वर्ष

5 श्रुत केवली मुनिराज

1. श्री विष्णु मुनिराज जी	14 वर्ष
2. श्री नन्दिमित्र मुनिराज जी	16 वर्ष
3. श्री अपराजित मुनिराज जी	22 वर्ष
4. श्री गोवर्धन मुनिराज जी	19 वर्ष
5. श्री भद्रबाहु मुनिराज जी (प्रथम)	29 वर्ष
	100 वर्ष

11 दशपूर्वधारी मुनिराज

1. श्री विशाखाचार्य जी	10 वर्ष
2. श्री प्रोष्टिलाचार्य जी	19 वर्ष
3. श्री क्षत्रियाचार्य जी	17 वर्ष
4. श्री जयसेनाचार्य जी	21 वर्ष
5. श्री नागसेनाचार्य जी	18 वर्ष
6. श्री सिद्धार्थाचार्य जी	17 वर्ष
7. श्री धृतिषेणाचार्य जी	18 वर्ष
8. श्री विजयाचार्य जी	13 वर्ष
9. श्री बुद्धिलाचार्य जी	20 वर्ष
10. श्री गंगदेवाचार्य जी	14 वर्ष
11. श्री धर्मसेनाचार्य जी	14/16 वर्ष
	181/183 वर्ष

ग्यारह अंगधारी मुनिराज

1. श्री नक्षत्राचार्य जी	18 वर्ष
2. श्री जयपालाचार्य जी	20 वर्ष
3. श्री पांडवाचार्य जी	39 वर्ष
4. श्री ध्रुवसेनाचार्य जी	14 वर्ष
5. श्री कंसाचार्य जी	32 वर्ष
	123 वर्ष

4 आठ-नौ-दस अंगधारी मुनिराज

1. श्री सुभद्राचार्य जी	6 वर्ष
2. श्री यशोभद्राचार्य जी	18 वर्ष
3. श्री भद्रबाहु आचार्य जी(द्वि.)	23 वर्ष
4. श्री लोहाचार्य जी	52/50 वर्ष
	99/97 वर्ष

5 एक अंगधारी मुनिराज

श्री अर्हत्बली आचार्य जी	युग प्रतिक्रमण कर्ता	28
श्री माघनन्दि आचार्य जी		21
श्री धरसेनाचार्य जी	योनी प्राभृत ग्रन्थ, षट्खण्डागम ज्ञान दाता	19
श्री पुष्पदन्ताचार्य जी	ग्रंथ लेखन प्रारंभ कर्ता	30
श्री भूतबली आचार्य जी	ग्रंथ समापन कर्ता	20
		118
	कुल-	**683 वर्ष**

श्री विनयदत्ताचार्य जी

श्री शिवदत्ताचार्य जी

श्री श्रीदत्ताचार्य जी

श्री अर्हतदत्ताचार्य जी

श्री गुणधर आचार्य जी - कषाय पाहुड़

श्री कुन्दकुन्दाचार्य जी - षट्खण्डागम की परिकर्म नामक टीका, प्रवचनसारादि ग्रंथ

श्री वीरसेनाचार्य जी - षट्खण्डागम की टीका वृहद्व्याख्याकार निमित्त-ज्ञानी, वाग्मी आचार्य

श्री उमास्वामी जी	–	तत्त्वार्थ सूत्र कर्ता
श्री पद्मनन्दि जी	–	पंचविंशतिका ग्रंथ
श्री यतिवृषभाचार्य जी	–	तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ
श्री शिवकोटि आचार्य जी	–	भगवती आराधना
श्री वसुनन्दी आचार्य जी	–	वसुनन्दी श्रावकाचार
श्री नेमिचन्द्राचार्य जी	–	गोम्मटसार, द्रव्य संग्रह
श्री अतिमगति आचार्य जी	–	सुभाषित रत्नसंदोह, अमितगति श्रावकाचार, धर्मपरीक्षा
श्री योगीन्दुदेवाचार्य जी	–	परमात्म प्रकाश, योगसार आदि
श्री गुणभद्रस्वामी जी	–	वरांग चरित्र ग्रंथ
श्री कार्तिकेयस्वामी जी	–	कार्तिकेयानुप्रेक्षा
श्री जिनसेनाचार्य जी	–	आदिपुराण, हरिवंश पुराण
श्री जयसेनाचार्य जी	–	धर्म रत्नाकर
श्री नयसेनाचार्य जी	–	धर्मामृत
श्री रविषेणाचार्य जी	–	पद्मपुराण
श्री विद्यानन्दि आचार्य जी	–	आप्त परीक्षा कमण्डल पुष्प वृष्टि
श्री प्रभाचन्द्राचार्य जी	–	प्रमेयकमलमार्तण्ड व्याख्याता
श्री कुमुदचन्द्राचार्य जी	–	कल्याणमन्दिर स्तोत्र
श्री अकलंक देव जी	–	तत्वार्थ राजवार्त्तिक
श्री समंतभद्राचार्य जी	–	रत्नकरण्ड श्रावकाचार, स्वयंभू स्तोत्र रचनाकर्ता
श्री मानतुंगाचार्य जी	–	भक्तामर स्तोत्र रचयिता
श्री शुभचन्द्राचार्य जी	–	ज्ञानार्णव ग्रंथकर्ता चरण धुलि से स्वर्णमय पत्थर

श्री वादिराज आचार्य जी	-	एकीभाव स्तोत्र
श्री पूज्यपाद आचार्य जी	-	दशभक्ति, नेत्रज्योति का आना
श्री आदिसागराचार्य जी	-	मुनिकुंजर (अंकलीकर)
श्री शान्तिसागराचार्य जी	-	चारित्र चक्रवर्ती (दक्षिण)
श्री महावीर कीर्तिआचार्य जी	-	मंत्रवादी, अठारह भाषा ज्ञानी
श्री विमल सागराचार्य जी	-	वात्सल्य रत्नाकर निमित्त ज्ञानी
श्री पुष्पदन्त सागराचार्य जी	-	पुष्पगिरी प्रणेता, प्रखर वक्ता, कवि हृदय, आगमज्ञ मुनि, सर्वतोभद्र विहारी

जो निकट भव्य जिनेन्द्र देव की पूजा भाव सहित करता है उसके लिए स्वर्ग इस प्रकार निकटता को प्राप्त होता है जैसे घर का आँगन चक्रवर्ती जैसी सम्पत्ति साथ में रखने वाली सखी के समान हो जाती है। सौभाग्य धैर्य, उदारता सज्जनता, क्षमादि विशेष गुणों की पंक्ति स्वभाव से शरीर रूपी घर में निवास करने लग जाती है। जिनेन्द्र पूजा संसार सम्बन्धी दुःखों से छुड़ाकर सुखपूर्वक पार करने में समर्थ है मोक्ष को शीघ्र ही हथेली पर विराजमान होने समान हो जाती है। इसलिए हे भव्य! मन में विवेक लाकर जिनेन्द्र भगवान की भाव सहित पूजा करो।

९. कर्मदहन विधान

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

९. कर्मदहन विधान
माण्डला

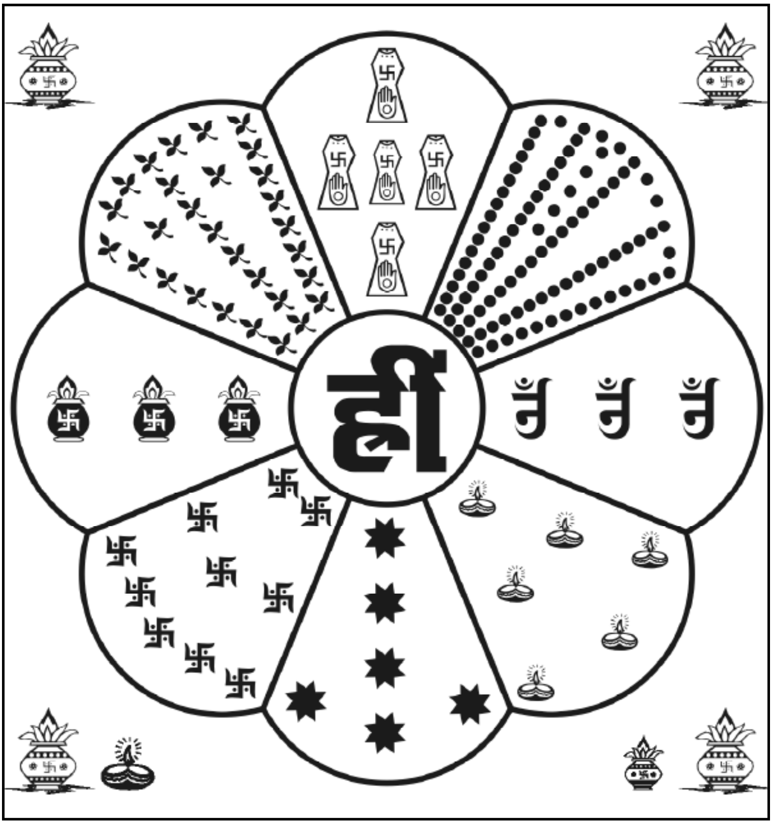

कुल अर्घ्य 156

प्रथम वलय - 5 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	द्वितीय वलय - 9 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य
तृतीय वलय - 2 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	चतुर्थ वलय - 28 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य
पंचम वलय - 4 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	षष्टम वलय - 93 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य
सप्तम वलय - 2 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य	अष्टम वलय - 5 अर्घ 1 पूर्णार्घ्य

कर्मदहन व्रत विधान पृष्ठ 354 पर देखें

कर्मदहन विधान

स्थापना

कर्म जाल में उलझा चेतन, सिद्ध स्वरूपी विसराया।
इन्द्रिय जेता आत्म रसिक जिन, निराकार मन से ध्याया।।
अष्टम भूमि वासी जिनवर, श्रद्धा से आह्वान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मै, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-मुक्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठी-समुह! अत्र-अवतर-अवतर संवोषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-मुक्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठी-समुह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-मुक्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठी-समुह! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

काली घटाएँ कर्मों की नित, मन अन्तस् में उमड़ रहीं।
पाप नीर से भरी हुई ये, भयकारी बन कड़क रहीं।।
भक्तिभाव की वर्षा कर मैं, कर्मों का अवसान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-श्री-सिद्ध-परमेष्ठीभ्यः नमः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

जीवन और जगत का मेला, मोह डोर से बँधा हुआ।
राजाओं-सा आज दिखे जो, रंक बना कल रूँधा हुआ।।
राग द्वेष मद कर्म श्रृंखला, बन्धोदय अविराम हरूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मै, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-श्री-सिद्ध-परमेष्ठीभ्यः नमः संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

श्रद्धा की वेदी में जिनवर, आन विराजो करुणाधार।
भव वर्धक सब कर्म विनाशूँ, भक्ति ध्यान का पा आधार।।
कर्म विनाशी शिवपुर वासी, अक्षय पद सम्मान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-श्री-सिद्ध-परमेष्ठीभ्य: नम: अक्षय-पद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

मन उपवन की क्यारी में कुछ, काम भाव के फूल खिले।
आकर्षित पर को करके ये, क्षण भर में ही घुले मिले।।
काम वासना के कीचड़ में, कमल पुष्प वरदान वरूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-श्री-सिद्ध-परमेष्ठिभ्य: नम: काम-बाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

तन-मन की नित भूख मिटाने, रोज गुनाहें करता हूँ।
मन की कमजोरी नासमझी, प्रतिदिन आहें भरता हूँ।।
नाशवान तन से तप करके, क्षुधा रोग अवसान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्य: नम: क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

ईर्ष्या से भरकर मन मेरा, निज ईश्वर को भूल गया।
पद वैभव सम्मान ज्ञान पा, अहंकार में फूल गया।।
ध्यान दीप ले तिमिर मिटाऊँ, प्रगटित केवलज्ञान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व कर्म रहित अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठिभ्यः नमः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

देह रहित होने को निशदिन, देह सहित तप तपते हैं।
धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यानकर, अष्ट कर्म को दहते हैं।।
निज में निज का अवलोकन कर, तीन लोक का ज्ञान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः नमः अष्ट-कर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

पुण्योदय का फल अरिहन्ता, शुद्धभाव प्रगटाता है।
चरणों में फल अर्पित करता, पाप भाव विनशाता है।।
आत्म ध्यान का धनुष बाण ले, कर्मों पर संधान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः नमः मोक्ष-महाफल-प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

कर्म वृक्ष की आठ डालियाँ, डेढ़ शतक दो कम पत्ते।
शूल चुभाते फूल बिछाते, जन्ममरण रोते हँसते।।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ चढ़ाकर, अरिध्वंसी गुणगान करूँ।
सिद्ध स्वरूपी बनने को मैं, कर्म दहन विधान करूँ।।

ॐ ह्रीं सर्व-कर्म-रहित-अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिभ्यः नमः अनर्घ-पद-प्राप्ताय-अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम वलय

दोहा- **कर्म अनन्ता नाशकर, पाया पद अविकार।**
पुष्पांजली क्षेपण करूँ, मिटे कर्म परिवार।।
(प्रथम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(ज्ञानावरण कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 6 अर्घ्य)

इन्द्रिय मन से बाह्य वस्तुएँ, जीव सदा जाना करता।
"अवग्रहेहावाय धारणा" से, सबको माना करता।।
तीन शतक छत्तीस भेद का, सभी आवरण नाश किया।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, सम्यग् ज्ञान प्रकाश दिया।।1।।

ॐ ह्रीं मतिज्ञानावरण-कर्म-विनाशनाय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मति ज्ञान से गहरे जाने, वही ज्ञान श्रुत ज्ञान कहा।
ग्यारह अंगम् चौदह पूर्वम्, असंख्यात है भेद महा।।
इन्द्रिय मन बुद्धि से जाने, जो परोक्ष कहलाता है।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, श्रुत आवरण नशाता है।।2।।

ॐ श्रुतज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

द्रव्य क्षेत्र अरुँ काल भाव से, रूपी वस्तु को जाने।
षट् विध त्रय विध भेद कहे जो, क्षयोपशम आवरण माने।।
चारो गतियों के जीवों को, अवधिज्ञान हो सकता है।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, निरावरण अघ रहता है।।3।।

ॐ ह्रीं अवधिज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अवधिज्ञान से ज्यादा जाने, मन की सारी बातों को।
वक्र ऋजु दुनियादारी के, मन उठते ख्यालातों को।।

मनः पर्यय जो शुद्ध ज्ञान है, झीना पर्दा लगा हुआ।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, रहित आवरण सजा हुआ॥4॥

ॐ ह्रीं मन:पर्यय-ज्ञान-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

त्रैकालिक गुण द्रव्य पर्यायें, एक साथ ही जान रहे।
उसी ज्ञान पर पड़ा आवरण, उसे हटाने ध्यान करें॥
ज्ञानावरण रहित हो जाए, केवलज्ञान उदित कर दो।
अर्घ चढ़ाऊँ सब सिद्धों को, आतम को प्रमुदित कर दो॥5॥

ॐ ह्रीं केवलज्ञानावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

पंचज्ञान आवरण विनाशा, त्रिभुवन युगपत झलक गया।
केवलज्ञान जो लोकोज्ज्वल था, अन्तस् में ही प्रगट भया॥
संशय विभ्रम ज्ञान नाशकर, मौन ज्ञान मुखरित कर दो।
अर्घ चढ़ाऊँ हे अविनाशी, सिद्ध गुण आतम भर दो॥6॥

ॐ ह्रीं पंचज्ञानावरण-कर्म-रहिताय-केवलज्ञान-सम्पन्न-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय

दर्शनावरणी नाशकर, पाय दर्श अनन्त।
सिद्ध प्रभु की वंदना, करते सारे सन्त॥

(द्वितीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(दर्शनावरण कर्म नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 10 अर्घ्य)

आँखों से वस्तु अवलोके, चक्षु दर्शनावरण कहा।
असंख्यात है भेद निराले, क्षयोपशम से जिसे कहा॥
नयन बिना अवलोके त्रिभुवन, सिद्ध प्रभु सुखकारी है।
चक्षु दर्शनावरण विनाशी, अद्भूत गुण के धारी हैं॥1॥

ॐ ह्रीं चक्षु-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्तु छूकर आठ रूप में, गुण अवगुण को जान रहे।
रसना घ्राण गंध स्वाद से, अप्रगट पहचान रहे।।
कर्णेन्द्रिय से शब्द श्रवण कर, ज्ञाता बाईस विषय कहे।
अचक्षु दर्शनावरण विनाशी, सिद्ध प्रभु की विनय करे।।2।।

ॐ ह्रीं अचक्षु-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूपी जो जग की वस्तु है, उसे आत्म से दर्श करें।
अवधि दर्शनावरण-कर्म-है, जिसे प्रभुवर नष्ट करें।।
षट् प्रकार से जाने भविजन, अवधि आवरण दहन करूँ।
सिद्ध प्रभु हे-कर्म-विनाशी, अर्घ चढ़ाकर नमन करूँ।।3।।

ॐ ह्रीं अवधि-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन काल की सब पर्यायें, द्रव्यों की वे जान रहें।
दर्शन भी उस क्षण ही करते, युगपत हम हैं मान रहे।।
केवल दर्शनावरण मिटाकर, सिद्धशिला को पाया है।
सर्व दर्शी उन सिद्ध प्रभु को, पूरण अर्घ्य चढ़ाया है।।4।।

ॐ ह्रीं केवल-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रम करते या हुए प्रमादी, निद्रा प्राणी लेते हैं।
बैठे सोते झपकी लेकर, दूर थकान कर देते हैं।।
निद्रावरणी करम विनाशे, तपधारी साधक मुनिराज।
सिद्ध प्रभु को नितप्रति वंदू, कर्म-विनाशे निद्राराज।।5।।

ॐ ह्रीं निद्रा-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्रा निद्रा-कर्म-उदय से, नयन मूँदकर सो जावे।
कोई उठावे उठ ना पावे, दर्शनावरणी-कर्म-सतावे।।

तज प्रमाद को आत्म ध्यान कर, निद्रानिद्रा नाश किया।
सिद्ध प्रभु को नित प्रति वंदू, अर्घ चढ़ा सुख वास लिया।।6।।

ॐ ह्रीं निद्रा-निद्रा-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उसनिंदा सा जगता सोता हल्की निद्रा में रहता।
प्रचला में अस्थिर बुद्धि से, गफलत में ही वह रहता।।
तज प्रमाद को आत्म ध्यान कर, प्रचला-कर्म-नशाया है।
सिद्ध प्रभु को नित प्रति वंदू, अर्घ चढ़ा सुख पाया है।।7।।

ॐ ह्रीं प्रचला-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

डटकर खाकर श्रमकर थकते, या आलस कर सो जावें।
अंग चलावें लार बहावें, होश रहे ना खो जावे।।
तज प्रमाद को आत्म ध्यान कर, प्रचलाप्रचला नाश किया।
सिद्ध प्रभु को नितप्रति वंदू, अर्घ चढ़ा सुख वास लिया।।8।।

ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचला-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बड़ बड़ बोले सोते में भी, उठकर वह कई काम करे।
याद रहे ना क्या-क्या कीना, अपने को बदनाम करे।।
नाश किया स्त्यानगृद्धि को, दर्शनावरण से मुक्त हुए।
सिद्ध प्रभु को नित प्रति वंदू, अनन्तदर्शन युक्त हुए।।9।।

ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धि-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

धत्ता- **जय-कर्म-विजेता देहातीता, सिद्ध पुनीता नमन करूँ।**
जय जग अवलोके शिवपद भोगें अर्घ चढ़ाऊभजन करूँ।।10।।

ॐ ह्रीं सकल-दर्शनावरण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय

सुख दुख पाते जीव सब, कर्मों का संयोग।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, दूर करे भव रोग।।
(तृतीय-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(वेदनीय-कर्म-नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 3 अर्घ्य)

सुख का साधन भोग निरन्तर, साता-कर्म-निकट होवें।
भोग उपभोग की सारी वस्तु, अनुकूल हो प्रगट होवें।।
पुण्य घटावें पाप बढ़ावें, प्रभु ने सर्व विनाश किया।
सिद्ध-शिला में स्थिर होकर, शाश्वत निज निवास किया।।1।।

ॐ ह्रीं साता-वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन वच तन के दुख मूलक जो, ईर्ष्या द्वेषक घृणा विचार।
निष्ठुर वचना अस्त्र शस्त्र का, प्रतिकुल होता व्यवहार।।
कर्म असाता दुख देकर के, जीवन को बर्बाद करे।
सिद्ध प्रभु जी इन्हें नाशकर, निज आतम आजाद करें।।2।।

ॐ ह्रीं असाता-वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

साता असाता जीव को, सुख दुख देते आन।
कर्म विनाशे वेदनीय, बने सिद्ध भगवान।।3।।

ॐ ह्रीं वेदनीय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय

दोहा- **मोह महारिपु घेरकर, देता है संताप।**
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, मिटे उपद्रव पाप।।
(चतुर्थ-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(मोहनीय-कर्म-नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 29 अर्घ)

काल अनादि से मिथ्यातम, जिन श्रद्धा न कर पाया।
गति-गति में चेतन भ्रमता, नित्य निरन्तर दुख पाया।।
सम्यक प्रगटे मिथ्या विनशे, जिन मारग रुचि से ध्याऊँ।
सिद्ध प्रभु की वंदना करके, मिथ्यातम को दूर हटाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दुविधा में रहता यह प्राणी, सम्यक मिथ्या में डोले।
रागी विरागी दोनों पुजें, सम्यक आँखें ना खोले।।
मुक्त करो भ्रम जाल से मुझको, मिश्र भाव को तजता हूँ।
सिद्ध प्रभु की करूँ वंदना, अर्घ समर्पित करता हूँ।।2।।

ॐ ह्रीं सम्यक-मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक दर्शन होने पर भी, भाव मलिन हो जाते हैं।
चल मल या आगाढ़ दोष पा, आकांक्षा से ध्याते हैं।।
मेरा मंदिर, मेरे भगवन, चिन्तामणी पारस भगवान।
सम्यक प्रकृति ऐसा सोचे, सिद्ध प्रभु हैं मुक्त महान।।3।।

ॐ ह्रीं सम्यक-प्रकृति-मिथ्यात्व-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **भव वर्धक कारण कहा, क्रोध अनन्तानन्त।**
सिद्ध प्रभु ने त्याग कर, पाया शान्ति अनन्त।।4।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहं भाव मिथ्यात्व सह, बढ़ा रहा संसार।
सिद्ध प्रभु ने नाश कर, खोला मुक्ति द्वार।।5।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया ठगती है सदा, धर्म नाश करवाय।
सिद्ध प्रभु ने नाश कर, आत्म धर्म विकसाय।।6।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मूर्च्छा से बंधन रहे, लोभ सदा भटकाय।
सिद्ध प्रभु ने त्याग कर, निज स्वरूप को पाय।।7।।

ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धि-लोभ-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक देश चारित्र को, अप्रत्यख्यान नशाय।
छः महिने के पूर्व ही, क्षमाधार जिनध्याय।।8।।

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हड्डी रेखा मान की, मन भीतर रह जाये।
स्वाभिमान को प्रगट कर, सिद्ध प्रभु गुणगाय।।9।।

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

माया ठगनी सदा नचावे, देश व्रती न बनने पावें।
त्रय योगों को सरल बनाऊँ, सिद्ध प्रभु को निशदिन ध्याऊँ।।10।।

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर पदार्थ की इच्छा होवे, अणुव्रतों को नाहीं लेवें।
सिद्ध प्रभु ने लोभ नशाया, सबको मोक्षमार्ग बतलाया।।11।।

ॐ ह्रीं अप्रत्यख्यानावरण-लोभ-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यख्यानावरण कषाया, महाव्रतों का करे सफाया।
एक पक्ष में क्रोध विनाशे, सिद्ध प्रभु मन धर्म विकासे।।12।।

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण-क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं मेरा का भाव त्याग कर, अणुव्रतों को मन से धार कर।
सिद्ध प्रभु का ध्यान लगाऊँ, प्रत्यख्यानवरण नशाऊँ।।13।।

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तरमन से कष्ट मिटावे, सरल सहज जीवन प्रगटावें।
माया प्रत्यख्यान नशावे, सिद्ध प्रभु को अर्घ चढ़ावें।।14।।

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्यख्यानी लोभ कषाई सन्तोषी बन कर्म-नशाई।
जग वस्तु से दूर ही रहता, सिद्ध प्रभु को हर क्षण भजता।।15।।

ॐ ह्रीं प्रत्यख्यानावरण लोभ-कर्म-रहिताय भी सिद्ध परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक मुहूरत के भीतर ही, क्रोध क्षमा में परिणमता।
नाम संज्वलन क्रोध कषाया, हरती मन की कलमषता।।
मुनिराज के मन भीतर वह, जल रेखा सम प्रगटित है।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने जो, वन्दन अर्घ समर्पित है।।16।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-क्रोध-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाव्रती बन ज्ञान ध्यान में, लीन रहे मुनिराज सदा।
तपसी या उपदेशी बनकर, स्वाभिमानी बन रहे मुदा।।
निज कृत्यों के अधिकार का, अहंकार क्षण भर रहता।
सिद्ध प्रभु हे मान विनाशी, अर्घ समर्पित हूँ करता।।17।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-मान-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यथाजात मुद्रा में मुनिवर, यथाख्यात ना हो पाये।
मन भीतर माया की छाया, क्षणभर को भी भरमाये।।
सरल स्वभावी मुनिराज जी, माया संज्वलन तजते।
सिद्ध स्वरूपी गुण प्रगटित कर, निज आतम स्थिर रहते।।18।।

ॐ ह्रीं संज्वलन-माया-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्त्री भोजन राज चोर की, चार कथाओं को छोड़े।
स्वपरमारथ प्रगट करन को, पर पदार्थ से मुख मोड़े।।
संज्वलन है लोभ कषाया, इससे रहित करो जिनराज।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, पाया निज में निज का राज।।19।।

ॐ ह्रीं संज्वलन लोभ-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **नौ कषाय में हास्य है-कर्म-बन्ध करवाय।**
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ जीता हास्य कषाय।।20।।

ॐ ह्रीं हास्य-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयों के प्रति नेह हो, रति करम जब आय।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, जीतू रति कषाय।।21।।

ॐ ह्रीं रति-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिकूल जो वस्तु हो, अरति अरुँचि करवाय।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, जीतू अरति कषाय।।22।।

ॐ ह्रीं अरति-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इष्टानिष्ट के योग से, होता शोक कषाय।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, शोक सभी नश जाय।।23।।

ॐ ह्रीं शोक-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आशंका अनिष्ट की, सातों भय प्रगटाय।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, जीतू भय कषाय॥24॥

ॐ ह्रीं भय-कषाय-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निद्यं वस्तु को देखकर, मन में ग्लानि आय।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, नाशूँ जुगुप्सा कषाय॥25॥

ॐ ह्रीं जुगुप्सा-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

नारी मन नर कामना, जाग्रत प्रीति हेत।
सिद्ध प्रभु वंदन करूँ, नाशूँ स्त्री वेद॥26॥

ॐ ह्रीं स्त्री वेद-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुरुष वेद के उदय से, नारी इच्छा होय।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, पुंवेदी सब खोय॥27॥

ॐ ह्रीं पुरुष वेद-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर नारी दोनों चहें, तीव्र काम विकार।
सिद्ध प्रभु वन्दन करूँ, नाशूं वेद विचार॥28॥

ॐ ह्रीं नपुंसक-वेद-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

मोहनीय की सत्तर कोड़ा, कोड़ी सागर आयु है।
एक मुहूरत में छँट जाता, ध्यान की चलती वायु है॥
सबसे पहले बंधता मिटता, मोहमहा मद कारी है।
सिद्ध प्रभु ने मोह विनाशा, अर्घ चढ़ा सुखकारी है॥29॥

ॐ ह्रीं महामोह-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम वलय

दोहा- **गतियों का बंधन सहे, कारण आयु कर्म।**
पीताक्षत क्षेपण करूँ, मिले सदा शिव शर्म।।
(पंचम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलि क्षिपेत्)

(आयु कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 5 अर्घ्य)

रहना चाहे जीव जहाँ ना, पर रहना पड़ता निश्चित।
शीत ऊष्ण अरुँ मार काट का, दुक्ख नरक में वचनातीत।।
दस हजार से तैंतीस सागर, नरकायु दुख सहता है।
सिद्ध प्रभु नरकायु नाशें, भाव यही मम रहता है।।1।।

ॐ ह्रीं नरकायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक श्वास में बार अठारह, जनता मरता हैं प्राणी।
तीन पल्य उत्कृष्ट आयु ले, कष्टमयी है जिन्दगानी।।
बध बन्धन अपमान क्षुधातुर, तिर्यंचों का जीवन है।
अर्घ चढ़ाऊँ उन सिद्धों को, कर्म-रहित जो पावन हैं।।2।।

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भोग भूमि में ऊँची आयु, तीन पल्य नर की होती।
कर्म भूमि की आयु नीची, अर्न्तमुहूरत में खोती।।
मध्यायु की सीमा ना है, कल्याणक शुभ पाते है।
मानुष आयु-कर्म-नाशकर, सिद्धालय पा जाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं मनुष्यायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवायु तैंतीस सागर की, चर्चा में ही बीत रहा।
दश हजार की जघनायु तो, मानस दुख में रीत रहा।।

सम्यक मिथ्या-दृष्टि देवा, चतुर्णिकाय में होते हैं।
सिद्ध प्रभु देवाधिदेव है, निजानन्द रस पीते है।।4।।

ॐ ह्रीं देवायु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

आयु-कर्म-विनाशक जीवा, अवगाहन गुणधार रहे।
निराबाध अव्यय आत्मिक सुख, दीर्घकाल स्वीकार रहें।।
निराकार चेतन्य स्वरूपी, खड्गासन पद्मासन है।
कर्म नाशकर सिद्ध बनूँ मैं, अर्घ समर्पित पावन है।।5।।

ॐ ह्रीं आयु-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्टम वलय

दोहा- **चतुर्गति की गति विधि, नाम-कर्म-से पाय।**
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, नाम-कर्म-नश जाय।।

(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(नामकर्म नाशक सिद्ध परमेष्ठी के 94 अर्घ्य)

निन्दक हिंसक लम्पट जीवा, कृष्ण लेश्या से युक्त हैं।
आरंभी बैरी मिथ्यात्वी, धर्म विनय से मुक्त हैं।।
मन की ऐसी कुवृति से, नरक गति हर क्षण बंधता।
सिद्ध प्रभु जी मुझे बचाएँ, श्रद्धा से वन्दन करता।।1।।

ॐ ह्रीं नरकगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कपट वेष धर पर को ठगता, ढोंग धरम का करता है।
करें दिखावा और छलावा, आर्त ध्यान रत रहता है।।
मन की ऐसी कुवृति से, तिर्यञ्च गति हर क्षण बंधती।
सिद्ध प्रभु जी मुझे बचाएँ, श्रद्धा से वन्दन करता।।2।।

ॐ ह्रीं तिर्यञ्चगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन्द कषाई मृदुस्वभावी, विनय शील अल्पारंभी।
व्रत ना लेवें दोष सँभाले, स्वर्ग मोक्ष मग प्रारंभी।।
मन की ऐसी सदवृत्ति से, मनुष्यगति हर क्षण बंधता।
सिद्ध प्रभु जी पार लगावें, श्रद्धा से वंदन करता।।3।।

ॐ ह्रीं मनुष्यगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शम दम यम नियम के कारण, देवगति बंध जाती है।
मिथ्या सम्यक साधन से भी, रिद्धि सिद्धि मिल जाती है।।
मन की ऐसी सद्वृत्ति से, देवगति हर क्षण बंधती।
सिद्ध प्रभु जी पार लगायें, श्रद्धा से वन्दन करता।।4।।

ॐ ह्रीं देवगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भू जल पावक पवन वृक्ष सब, कष्ट सदा ही पाते हैं।
वध बन्धन मौसम को सहते, हर क्षण दुःख उठाते हैं।।
जाति-नाम कर्मों से रहिता, सिद्ध प्रभु का ध्यान करे।
ऐकेन्द्रिय पर्याय मिले ना, ऐसा सम्यक काम करे।।5।।

ॐ ह्रीं एकेन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **दो इन्द्रिय जो जीव हैं, सहते कष्ट अपार।**
जाति-कर्म-को नाशकर, सिद्ध बने अविकार।।6।।

ॐ ह्रीं दोइन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

खटमल जूँ चींटी बने, त्रय इन्द्रिय को धार।
जाति-कर्म-को नाशकर, सिद्ध बने अविकार।।7।।

ॐ ह्रीं त्रिइन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चउइन्द्रिय मच्छर बने, मक्खी कीट पतंग।
दु:ख योनि नाशे प्रभु, सिद्ध बने निसंग।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्गति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचेन्द्रिय चारो गति, क्रूर शान्त हैं जीव।
जाति-कर्म-को नाश कर, सिद्ध बने सुजीव।।9।।

ॐ ह्रीं पंचेन्द्रिय-जाति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नर तीर्यंञ्च के गात का, औदारिक तन-नाम।
नाश बने प्रभु सिद्ध जिन, पाया शाश्वत धाम।।10।।

ॐ ह्रीं औदारिक-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव नारकी जीव हैं, वैक्रियक तन धार।
नाश बने प्रभु सिद्ध जिन, किया आत्म उद्धार।।11।।

ॐ ह्रीं वैक्रियक-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनि मस्तक पुतला जनें, संयम रक्षा हेत।
आहारक तन कर्मदह, पाया सिद्ध सुखेत।।12।।

ॐ ह्रीं आहारक-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन कान्ति पैदा करें, तेजस-नाम शरीर।
नाश बनें प्रभु सिद्ध जिन, नमन हरे भवपीर।।13।।

ॐ ह्रीं तेजस-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म पिण्ड तन धारता, कार्मण-कर्म-कहाय।
कर्म रहित सिद्धात्मा, पूरण अर्घ चढ़ाय।।14।।

ॐ ह्रीं कामर्ण-शरीर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

जीव ग्राह्य पुद्गल स्कन्धा, औदारिक तन इससे बनता।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने हैं, उनको शत-शत बार नमे हैं॥15॥

ॐ ह्रीं औदारिक-बन्धन-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव नारकी तन जो पाते, वैक्रियक बन्धन कहलाते।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने हैं उनको शत-शत बार नमें हैं॥16॥

ॐ ह्रीं वैक्रियक-बन्धन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारक बन्धन तन जानो, छिद्र रहित उसको पहचानो।
इन्हे नाशकर सिद्ध बने हैं, उनको शत-शत बार नमें हैं॥17॥

ॐ ह्रीं आहारक-बन्धन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस बन्धन-नाम-कर्म-है, कान्ति देना इसका धर्म है।
इन्हें नाशकर सिद्ध बने है, उनको शत-शत बार नमें हैं॥18॥

ॐ ह्रीं तैजस-बंधन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गल आत्म प्रदेशी बंधते, नीर क्षीर सम घुलते मिलते।
कार्मण बन्धन-कर्म-नशाया, सिद्ध प्रभु को अर्घ चढ़ाया॥19॥

ॐ ह्रीं कार्मण-बन्धन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- छिद्र रहित चिकना बदन, औदारिक संघात।
देह रहित परमात्मा, चिन्मय सुख बरसात॥20॥

ॐ ह्रीं औदारिक-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुद्गल परमाणु मिले, विक्रिया तन निर्माण।
तन रहित है चेतना, ज्यों सिद्ध भगवान।।21।।

ॐ ह्रीं विक्रिया-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आहारक संघात तन, सिद्ध प्रभु के नाहीं।
सर्व-कर्म-से मुक्त हो, सिद्ध बसे निजमाहीं।।22।।

ॐ ह्रीं आहारक-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तैजस तन की कान्ति से, रहित हुए जिन नाथ।
तैजस वर्गणा मुक्त जो, सदा नमाउ माथ।।23।।

ॐ ह्रीं तैजस संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कार्मण संघातक बने, तिल तैल सम बंध।
सर्व-कर्म-को नाशकर, सिद्ध बने निर्बन्ध।।24।।

ॐ ह्रीं कार्माण-संघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

सुन्दर रूप सुढौल-सी काया, समचतुस्र की ऐसी माया।
सिद्ध प्रभु तन नाश किया है, शुद्धातम प्रवास किया है।।25।।

ॐ ह्रीं समचतुरस्त्र-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊपर मोटा नीचे पतला-पादप वट सम तन है बदला।
संस्थान न्यग्रोध नशाया सिद्ध शुद्ध तन केवल छाया।।26।।

ॐ ह्रीं न्यग्रोध-परिमण्डल-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय नाम स्वाति संस्थाना, वामी सम आकार है माना।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, निराकार चिद्रुप है पाया।।27।।

ॐ ह्रीं स्वाति-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुब्जक कुबड़ा-सा तन पाया, कर्मोदय से हीन कहाया।
देह रहित प्रभु सिद्ध कहाये, तीन लोक जन शीश नवायें।।28।।

ॐ ह्रीं कुब्जक-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ठिगना बौना वामन नामा, देख देख कर हंसे जमाना।
सिद्ध प्रभु ने कर्म नशाया, रूपातीत रूप को पाया।।29।।

ॐ ह्रीं वामन-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दरता से रहित आकारा हो विचित्र बेडोल शरीरा।
हुण्डक तन कर्मोदय नाशी सिद्धालय के शाश्वत वासी।।30।।

ॐ ह्रीं हुण्डक-संस्थान-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगोपांग करम से बनता, औदारिक तन अंग पनपता।
सिद्ध प्रभु तन अंग रहिता, निराकार है पूज्य पुनिता।।31।।

ॐ ह्रीं औदारिक-अंगोपांग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंगोपांग रचना करवाता, देव नरक वैक्रियक कहाता।
सिद्ध प्रभु तन अंग रहिता, निराकार है पूज्य पुनिता।।32।।

ॐ ह्रीं वैक्रियक अंगोपाग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिराज मस्तक से निकला, आहारक तन सुन्दर उजला।
अंगोपांग आहारक जानो, सिद्ध प्रभु के नहीं बखानो।।33।।

ॐ ह्रीं आहारक अंगोपांग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्थि नस अरुँ कील कहावे, बज्र समा तन ठोस बनावे।
वज्रवृषभनाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता।।34।।

ॐ ह्रीं वज्रवृषभनाराच-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अस्थि कील हो वज्र समाना, नस बन्धन ढ़ीला है माना।
संहनन वज्र नाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता।।35।।

ॐ ह्रीं वज्रनाराच-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नस कीले होते साधारण, ठोस अस्थि शक्ति का कारण।
संहनन वह नाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता।।36।।

ॐ ह्रीं नाराच-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से तन की अस्थि, अर्ध कीलित सम होती शक्ति।
संहनन अर्ध नाराच कहाता, सिद्ध बने जो इसे नशाता।।37।।

ॐ ह्रीं अर्धनाराच संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से अस्थि किनारे, कीलित है निज शक्ति सहारे।
कीलक संहनन कर्म नशाया, सिद्ध बने प्रभु नमन कराया।।38।।

ॐ ह्रीं कीलक-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नस जालों से अस्थि बँधी है, कर्मोदय से सारी सधी हैं।
संहनन छटवाँ प्रभु विनाशे, सिद्ध शिला शाश्वत प्रवासे।।39।।

ॐ ह्रीं असंप्राप्तासृपाटिका-संहनन-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **कोमलता को धारता, नाम-कर्म-स्पर्श।**
पुद्गल गुण को नाशकर, सिद्ध विराजे अर्श।।40।।

ॐ ह्रीं कोमल-स्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से कड़क तन, धारे जीव अनन्त।
कर्कश परसन नाशकर, सिद्ध बने हैं सन्त।।41।।

ॐ ह्रीं कर्कशस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन अवयव चिकना बने, नाम-कर्म-स्निग्ध।
सिद्ध प्रभु ने नाश किया, कर्मोदय सन्दिग्ध।।42।।

ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुक्ष नाम स्पर्श गुण, संसारी के होय।
कर्म घुमावें जगत में, मुक्त बने सब खोय।।43।।

ॐ ह्रीं रुक्ष स्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रस थावर सब जीव हैं, धारे गुरु स्पर्श।
भारी परसन नाशकर, सिद्ध बने सहर्ष।।44।।

ॐ ह्रीं गुरुस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लघु कर्म स्पर्श से, हल्का जीव कहाय।
आत्म ज्ञान बिन भ्रमत है, सिद्ध कर्म नशाय।।45।।

ॐ ह्रीं लघुस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राणी धारे शीत तन, कर्मोदय से जान।
नीरादिक शीतल यहाँ, सिद्ध बने सब हान।।46।।

ॐ ह्रीं शीतस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उष्ण कर्म स्पर्श का, गरम रहे यह देह।
सिद्ध प्रभु ने नाशकर, पाया रूप अदेह।।47।।

ॐ ह्रीं ऊष्णस्पर्श-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हर तन का इक स्वाद है, कर्मोदय रस नाम।
अम्ल रस गुण नाशकर, सिद्ध बने निष्काम।।48।।

ॐ ह्रीं अम्लरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काया भीतर मधुर रस, कर्मोदय से होय।
दुख पाते तन धारते, सिद्ध बने अघखोय।।49।।

ॐ ह्रीं मधुररस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन चेतन में कटुक रस, सदा बने गुण रूप।
पुद्गल कर्मन नाशकर, जीव बने चिद्रुप।।50।।

ॐ ह्रीं कटुकरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधि बन्धन है कर्म का, कसैला रस निर्माण।
पुद्गल कर्म नशाय कर, पाया पद निर्वाण।।51।।

ॐ ह्रीं कसायरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीखा रस निर्मित करे, कर्म शक्ति संयोग।
पुद्गल कर्म नशाय कर, सिद्ध बने तज योग।।52।।

ॐ ह्रीं तिक्तरस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आक तूल सम हल्का, ना-ना लोहे समभारी।
नाम कर्म अगुरु लघुत्व है, नाशे सिद्ध अविकारी।।53।।

ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्व-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

सुरभित तन सब जीव चहत है, कर्म उदय से तन में बनत है।
सुरभि नाम करम नश पाया, सिद्ध प्रभु जी अचल अकाया।।54।।

ॐ ह्रीं सुरभि-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दुखदायी दुर्गन्ध शरीरा, कर्मोदय से बने अधीरा।
नाम असुरभि कर्म नशाया, सिद्ध प्रभु जी अचल अकाया॥55॥
ॐ ह्रीं असुरभि-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म शुभाशुभ उदय कहावें, पीत शरीरा प्राणी पावें।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥56॥
ॐ ह्रीं पीतवर्ण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हरित वर्ण का देह घटावें, शुभ अशुभ जो वर्ण कहावें है।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥57॥
ॐ ह्रीं हरितवर्ण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रक्त वर्ण कर्मोदय कारण, लाल शरीरा करता धारण।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥58॥
ॐ ह्रीं रक्तवर्ण कर्म रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वर्ण शुभाशुभ श्वेत कहावे, कर्मोदय से तन में पावे।
सिद्ध प्रभु हैं कर्म विनाशी, नमन करूँ पाऊँ सुखराशि॥59॥
ॐ ह्रीं श्वेतवर्ण-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काला तन शुभ अशुभ कहाता, कर्मोदय से जीव है पाता।
सिद्ध प्रभु है कर्म विनाशी, नमन करूं पाऊ सुखराशि॥60॥
ॐ ह्रीं कृष्ण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पर्याप्तक नर पशुगति प्राणी, पाप कमाकर मरण करें।
नरकायु बाँधे जो जीवा, दुख पाकर भव भ्रमण करें॥
मरण बाद अरुँ जन्म से पहले, विग्रह गति में पुर्वाकार।
नरक गति आनुपूर्वी नाशे, अर्घ चढ़ा वन्दन शतबार॥61॥
ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गति के जीव कदाचित, जन्म धरे तिर्यंच गति।
पूर्व तनु आकार धारते, आनुपूर्वी तिर्यंच गति।।
त्रस थावर तिर्यंच गति के, जीव सदा दुख पाते हैं।
कर्म नाशकर सिद्ध प्रभु जी, आत्मज्ञ कहलाते हैं।।62।।

ॐ ह्रीं तिर्यंचगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नरगति एक चौराहा जानो, चतुर्गति के जीव चलें।
मरण जन्म के मध्य काल में, आनुपूर्वी नर रूप ढलें।।
आनुपूर्वी गति रहिता जीवा, शुद्ध बुद्ध सिद्धात्म बने।
निज उपकारी नर जीवन पा, प्रभु पुजकर आप्त नमे।।63।।

ॐ ह्रीं मनुष्यगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तकाल में सम्यक मिथ्या, भावो से जो देव मरें।
नर पशु गति के जन्म से पहले, पूर्वरूप आकार धरें।।
विग्रह गति देवानुपूर्वी से, सिद्ध प्रभुजी रहित हुए।
अर्घ चढ़ाकर पूजा करलूँ, नंत गुणों से सहित हुए।।64।।

ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वी-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने अपने योग्य थान पर, अंगोपांग करे निर्माण।
योग्य थान से हटकर रचना, रूप बिगाड़े तन में आन।।
सुन्दर और असुन्दर रचना, नाम कर्म निर्माण करे।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, निजानन्द रसपान करे।।65।।

ॐ ह्रीं निर्माण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने ही अंगों द्वारा जो, अपने तन का घात करे।
सिंग दंत या उदर बढ़े, या हीनभाव स्वघात करे।।

कर्मोदय उपघात भयंकर, नाम कर्म कहलाता है।
पर उपकारी बनकर साधक, कर्म जला शिव पाता है॥66॥

ॐ ह्रीं उपघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिंग दाढ़ नख डंक जहर जो, पर से सदा बचाता है।
शेर नाग बिच्छु मच्छर के, परघात उदय कहलाता है॥
नाम कर्म परघात उदय से, सिद्ध प्रभुजी मुक्त हुए।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, जिन भक्ति अनुरक्त हुए॥67॥

ॐ ह्रीं परघात-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से पर संतापित, करने वाला तेज प्रकाश।
सूरज वाहन पृथ्वी कायिक, आतप कर्म से रहता पास॥
आतप कर्मोदय धारी तो, भू में बसते जीव अनेक।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, अर्घ चढ़ाऊँ विनय समेत॥68॥

ॐ ह्रीं आतप-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चमचम करता शीत प्रकाशा, चन्द्र तारिका का उद्योत।
भू कायिक विमान चमकते, या चमके जुगनु खद्योत॥
नाम कर्म उद्योत नशाया, तप करके साधक मुनिराज।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, हे सिद्धालय के अधिराज॥69॥

ॐ ह्रीं उद्योत-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिसके बलपर जीता प्राणी, श्वासोच्छवास कहाता है।
उसकी कीमत जाने बिन यह, व्यर्थ ही पाप कमाता है॥
सिद्ध प्रभु लोकाग्र विराजे, कर्म नाशकर श्वासोच्छ्वास।
श्वास रहित चैतन्य रूप हो, शुद्धातम में शाश्वत वास॥70॥

ॐ ह्रीं श्वासोच्छ्वास-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से चाल वृषभ गज, हंस सिंह सम कहलाता।
नाम विहायोगति प्रशस्ता, जिन आगम है बतलाता।।
सिद्ध प्रभु है कर्म विनाशी, स्थिर होकर निज ध्यायें।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, गमनागमन विनश जाये।।71।।

ॐ ह्रीं प्रशस्त-विहायोगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्दभ ऊँठ श्वान सम गमना, शोभा निज की घटा रही।
चाल असुन्दर अप्रशस्त ही, विहायोगति को बता रही।।
ऋजु गति से सिद्धालय जा, अचल विराजे कर्मातीत।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, गमनागमन मिटाओ मीत।।72।।

ॐ ह्रीं अप्रशस्तविहायोगति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौपाई

नाम कर्म त्रस दुर्लभ जाने, दो त्रि-चऊ पंचेन्द्रिय माने।
दुर्लभ त्रस पर्याय को पाना, सिद्ध बने सब कर्मन हाना।।73।।

ॐ ह्रीं त्रस-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

भू, जल, अगन, पवन अरुँ वृक्षा, स्थावर की करें सुरक्षा।
जीव दया निज धर्म बढ़ावे, कर्म नाशकर शिव पद पावें।।74।।

ॐ ह्रीं स्थावर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर रोके पर से रूक जावे, बादर तन स्थूल कहावें।
बादर नाम करम विनशाया, उन सिद्धों को अर्घ चढ़ाया।।75।।

ॐ ह्रीं बादर नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

ना दिखते ना मरते मारते, सुक्ष्म शरीरा जीव धारते।
सुक्ष्म नाम करम विनशाया, उन सिद्धो को अर्घ चढ़ाया।।76।।

ॐ ह्रीं सुक्ष्म-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्याप्ति आहार शरीरा, इन्द्रिय स्वासोच्छ्वास कहा।
भाषा मन छः पर्याप्ति हैं, निज क्षमता से वास रहा।।
पर्याप्ति एक-नाम-कर्म-है, संसारी धारण करते।
सिद्ध प्रभु जी इसे नाशकर, भव्यों के तारण बनते।।77।।

ॐ ह्रीं पर्याप्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मोदय से जीव पर्याप्ति, पूर्ण नहीं है कर पाते।
लब्ध अपर्याप्तक जीव कहाते, क्षुद्र भवों को अपनाते।।
निवृति अपर्याप्तक जीवा, पर्याप्ति को पूर्ण करे।
सिद्ध निरामय निजानन्द मय, कर्म अपर्याप्तक चूर्ण करें।।78।।

ॐ ह्रीं अपर्याप्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक शरीर का एक ही स्वामी, वनस्पति प्रत्येक बखानी।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, अर्घ चढ़ाकर शीश नवाया।।79।।

ॐ ह्रीं प्रत्येक-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक शरीर के नेक हैं स्वामी, अनंतकायिक साधारण नामी।
नित्य इतर निगोद नशाऊँ, सिद्ध भजुँ सिद्धालय पाऊँ।।80।।

ॐ ह्रीं साधारण-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त धातुएँ तन की सारी, अपने अपने कक्ष रहें।
माँस मेद रस रक्त हड्डियाँ, शुक्र मज्जा तन रक्ष करें।।
स्वस्थ रहे तन-नाम-कर्म-की, स्थिर प्रकृति कहलाती।
सिद्ध प्रभु ने इसे नशाया, देह रहित है अविनाशी।।81।।

ॐ ह्रीं स्थिर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोगों का घर यह तन सारा, आकुल व्याकुल मन रहता।
सप्त धातुएँ अस्थिर रहती, अस्थिर नाम करम कहता।।

कर्मोदय सब-नाम-कर्म-की, सिद्ध प्रभु ने विनशाया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, सिद्ध प्रभु की पा छाया॥82॥

ॐ ह्रीं अस्थिर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देह सजाया लेप लगाया, फिर भी कान्ति बढ़ी नहीं।
"भक्ते सुन्दर रूपं" जाना, और सजावट चढ़ी नहीं॥
सुन्दर चेहरा नयन नासिका, शुभ कर्मो का प्रतिफल है।
सिद्ध प्रभु ने इसे विनाशा, निराकार तन अविचल है॥83॥

ॐ ह्रीं शुभनाम कर्म रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

विकृत है आकार देह का, मन भावन ना लगता है।
अंगोपांग भी सुन्दर ना है, अशुभ कर्म यह कहता है॥
जिन भक्ति निज ध्यान लगाकर, अशुभ कर्म का नाश करूँ।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, सिद्ध शिला में वास करूँ॥84॥

ॐ ह्रीं अशुभ-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा-सुभग नाम के कर्म से, प्रीति करें सब जीव।
सिद्ध प्रभु ने नाश कर, पाया प्रेम अतीव॥85॥

ॐ ह्रीं सुभग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर प्राणी ना प्रीति करें, अपने पास ना आय।
दुर्भग दुखमय कर्म हैं, सिद्ध प्रभु विनशाय॥86॥

ॐ ह्रीं दुर्भग-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्त सुरों की धुन मधुर, सुस्वर कण्ठ से गाय।
नाम कर्म की प्रकृति है, सिद्ध बने विनशाय॥87॥

ॐ ह्रीं सुस्वर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निरस कर्कश वचन हो, श्रवण करे ना कोय।
दु:स्वर प्रकृति कर्म की, सिद्ध बने अघ खोय।।88।।

ॐ ह्रीं दु:स्वर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आकर्षक तन कान्तिमय, बहुत मान्य हो जाय।
नाम कर्म आदेय है, सिद्ध बने विनशाय।।89।।

ॐ ह्रीं आदेय-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रूखा तन कान्ति रहित, जग में मान्य ना होय।
नाम कर्म अनादेय है, सिद्ध बने अघ खोय।।90।।

ॐ ह्रीं अनादेय-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चहूँ ओर चर्चा चले, सुगुण होय न होय।
नाम कर्म यश कीर्ति है, सिद्ध बने अघ खोय।।91।।

ॐ ह्रीं यश-कीर्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कारज गुण सब श्रेष्ठ है, फिर भी नाम ना होए।
नाम अयश, कीर्ति कहा, सिद्ध बने अघ खोय।।92।।

ॐ ह्रीं अयश कीर्ति-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मम श्रद्धा की बेदी पर प्रभु, चौबीसो जिनराज बसे।
नाम कर्म की पाप प्रकृतियाँ, धीरे धीरे सारी नशे।।
तीर्थंकर पद-नाम-कर्म जो, धर्म तीर्थ प्रवर्तन कर्ता।
जग में बाँधे अतः छोड़कर, सिद्ध बने सब अरिहन्ता।।93।।

ॐ ह्रीं परमोत्कृष्ट-अतिशय-सम्पन्न-समवशरण-विभूति-युक्त-धर्मतीर्थ प्रवर्तक-तीर्थंकर-नाम-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

बीस कोड़ा कोड़ी सागर का, बंध महा कहलाता है।
आठ मुहूरत जघन्य बंध है, नाम करम कट जाता है॥
नाम कर्म के पूर्ण नाश से, गुण सुक्ष्मत्व प्रगटित होते।
सिद्धालय में जीव निराकुल, नामकर्म विरहित होते॥94॥

ॐ ह्रीं-नाम-कर्म-रहिताय सुक्ष्मत्व-गुण-सहिताय अनन्तानन्त-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम वलय

दोहा- **ऊँची नीची जातियाँ, संसारी के होय।**
कर्म रहित सिद्धात्मा, जाति कुल ना कोय॥
(सप्तम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(गोत्र कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 3 अर्घ्य)

जिन दीक्षा के योग्य आचरण, लोक पूज्य कुल में जन्में।
संतों की संगत करते वे, धर्म दयामय हो मन में।
सिद्ध प्रभु लोकाग्र विराजे, गोत्र कर्म का हनन किया।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, मोक्ष मार्ग पर गमन किया॥1॥

ॐ ह्रीं उच्च गोत्रकर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हीन कर्म है हीन वंश है, हीन भाव से हीन हुए।
हीन कुलों में आकर जन्मे, नीच गोत्री जलमीन हुए।
पर निंदा मद झूठा यश ले, नीच गोत्र का बंध करे।
सिद्ध प्रभुजी इसे नाशकर, गोत्र कर्म के द्वन्द हरे॥2॥

ॐ ह्रीं नीच गौत्र कर्म रहिताय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

गौत्र कर्म की जघन्य अवस्था, अन्तर्मुहूर्त कहलाती।
बीस कोड़ा कोड़ी सागर तक, जग में है भ्रमवाती॥
सिद्ध प्रभुजी इसे नाशकर, अगुरुलघुत्व गुण पाया है।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वंदना, सिद्ध भक्ति मन भाया है॥3॥

ॐ ह्रीं गोत्र-कर्म-रहिताय-अगुरुलघुत्व-गुण-सहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जलमीन-मछली को जल से, कितना भी धोए पर गंध नहीं। जाती उसी प्रकार हीन जाति के, जन्मगत संस्कार नहीं जाते॥

अष्टम वलय

श्रेष्ठ कार्य में विघ्न कर, अन्तराय है नाम।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, पाने शिवपुर धाम।
(अष्टम-वलय-मण्डलस्योपरी पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(अन्तराय कर्मनाशक सिद्ध परमेष्ठी के 6 अर्घ)

इच्छा है सामर्थ्य है, दान नहीं दे पाय।
क्षायिक दानी सिद्ध हैं, नाशा दानान्तराय॥1॥

ॐ ह्रीं दानान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्राप्ति की है चाहना, मिलता नहीं पदार्थ।
लाभान्तराय को नाशकर, साधा निज परमार्थ॥2॥

ॐ ह्रीं लाभान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्न पान गंध वस्तुएँ, भोग नहीं कर पाय।
कर्म भोगान्तराय है, नाशे शिव पुर पाय॥3॥

ॐ ह्रीं भोगान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वस्त्राभूषण स्त्रियाँ, वाहन वस्तु अनेक।
विघ्न पड़े उपभोग में, नाशे कर्म जिनेश॥4॥

ॐ ह्रीं उपभोगान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शक्ति की अभिव्यक्ति ना, करता नेक उपाय।
उदय वीर्य अन्तराय है, रहित सिद्ध कहलाय॥5॥

ॐ ह्रीं वीर्यान्तराय-कर्म-रहिताय श्री-सिद्ध-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्णार्घ्य

शुभ कार्यों में बाधा डाले, वैभव लख ईर्ष्या करता।
निज हाथों से दान दया ना, धर्म द्रव्य भक्षण करता॥
शक्ति पाकर पर को दबाए, अन्तराय का बंधन है।
श्रेष्ठ कार्य के विघ्न नाश हो, सिद्ध शक्ति को वंदन है॥6॥

ॐ ह्रीं अन्तराय-कर्म-रहिताय अनन्तवीर्य-गुण-युक्ताय श्री-अनन्तानन्त सिद्ध-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्णार्घ्य

आठकर्म की सौ अड़तालीस, कर्म प्रकृतियाँ कहलातीं।
मिथ्या तजकर व्रत धारण कर, मुनिपने में छटजातीं॥
करूँ प्रार्थना जिनवर कैसे, दुक्खों का क्षय हो जावें।
करूँ साधना ध्यानाराधना, सर्व कर्म विनश जावें॥

ॐ ह्रीं शताष्टचत्वारिंशत्कर्म-प्रकृति-रहिताय श्रीसिद्ध-परमेष्ठिने नमः सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप्य-ॐ ह्रीं अष्ट कर्म रहिताय सिद्ध परमेष्ठिने नमः।

जयमाला

जय सिद्ध निरंजन निष्कामी, जय कर्म विजेता ध्रुव धामी।
जय ज्ञान दरश सुख शक्तिवान, जय शुद्ध निरामय कर्महान॥1॥

तेरे पावन पग पूज रहा, जिसके कारण महफूज़ रहा।
संसार सिंधु से पार करो, प्रभु मम जीवन उद्धार करो॥2॥

जीवन कितना है दुखित व्यथित, जब कर्म सताते हो उदित।
प्रभु! नरक निगोद में पड़ा रहा, निज आत्म बोध बिन गड़ा रहा॥3॥

कर्मों के बंधन थे अनन्त, स्वाभाविक क्षण में हुए शान्त।
झट गोद निगोद से निकल गया, पंचेन्द्रिय बनकर सँभल गया॥4॥

प्रभु! आप दरस का हो प्रभाव, मिथ्या दर्शन का हो अभाव।
प्रभु! चार कषाय विनश जावें, क्षायिक सम्यक् दर्शन पावे॥5॥

प्रभु! पंचम गुण स्थान चढ़ूँ, प्रभु! षष्ठम सप्तम ध्यान धरूँ।
प्रभु! त्याग भाव बढ़ता जाये, प्रभु! राग द्वेष घटता जाये॥6॥

मद मोह नहीं वैराग बढ़े, शत पाप प्रकृति का नाश करें।
कर्मों के खेल निराले हैं, सुख दुख के पूरे जाले हैं॥7॥

कर्मों से उन्नति अवनति है, कर्मों से मिलती सब गति है।
कर्मों से पाना खोना हैं, कर्मों का जीव खिलौना है॥8॥

वसु कर्म हमें भटकाते हैं, प्रभु पुजा से विनशाते हैं।
प्रभु ज्ञानावरण नशाया है, सर्वज्ञ-पने को पाया है॥9॥

प्रभु दर्शनावरण समाप्त किया, युगपत दोनों को प्राप्त किया।
जब कर्मवेदनी छटता है, अव्याबाधत्व प्रगटता है॥10॥

सम्यक्त्व शिखर सुख पाते हैं, जो मोह कर्म विनशाते हैं।
जो आयु कर्म खपाते हैं, अवगाहन गुण पा जाते हैं॥11॥

सुक्ष्मत्व महागुण प्रगट हुआ, जब नाम कर्म सब नष्ट हुआ।
जब ऊँच नीच के गोत्र हने, तब अगुरुलघुत्व के स्रोत बने।।12।।

महाशक्ति गुण पाया है, जब अन्तराय विनशाया हैं।
प्रभु आठ करम से मुक्त हुए, प्रभु आठ गुणों से युक्त हुए।।13।।

आतम में आनन्द बरस रहा, प्रभु दर्शन से मन सरस रहा।
शब्दों से भक्ति करी तेरी, मेटो भव भव की मम फेरी।।14।।

योजन पैंतालिस लक्ष कहा, कर्म भूमि अरूँ सिद्ध महा।
जो सिद्ध प्रभु को ध्याता है, वह स्वयंसिद्ध हो जाता है।।15।।

दोहा- **स्वयं सिद्ध आलोक है, सिद्ध प्रभु गुणखान।**
'सौरभ सागर' नित नमें, कर्म रहित भगवान।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-वीर्यत्व-सुक्ष्मत्व-अवगाहनत्व-अगुरुलघुत्व-अव्याबाधत्व-अष्टगुण-समन्वित-श्रीसिद्ध-परमेष्ठियो नमः जयमाला पूर्णार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

भगवान महावीर जिस दिन मोक्ष गये उस दिन गौतम स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ, जिस दिन गौतम स्वामी मोक्ष गये उस दिन सुधर्म स्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ, जिस दिन सुधर्म स्वामी को मोक्ष हुआ उस दिन जम्बूस्वामी को केवलज्ञान प्राप्त हुआ इसलिए इन्हें अनुवद्ध केवली कहते हैं। जम्बू स्वामी मथुरा से, सुदर्शन मुनिराज पटना से व अन्तिम केवली श्रीधर मुनिराज कुण्डलगिरी से मोक्ष गये। चतुर्थ काल में जन्म लेने वाले जीव पंचम काल में मोक्ष जा सकते हैं। प्रथम भद्रबाहु अन्तिम श्रुत केवली हुए। सम्राट चन्द्रगुप्त अन्तिम मुकुट बद्ध राजा हुए। श्री पुष्पदंत, भूतबली अन्तिम अंगधारी मुनिराज हुए।

कर्मदहन व्रत विधान

व्रतारम्भ : किसी भी माह की द्वितीय, तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, सप्तमी, नवमी, द्वादशी, चतुर्दशी से प्रारम्भ

अवधि : 4 वर्ष से 8 वर्ष

व्रत पूजा : कर्म दहन विधान एवं जिस कर्म के व्रत है उनकी पूजा आदि।

जाप : ॐ ह्रीं सर्व कर्म रहिताय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः (8 से लेकर 148 माला)

व्रत विधि : 148+8 उपवास या एकासन या 4 रस त्याग पूर्वक

ॐ ज्ञानावरणी कर्म के पांच कर्म प्रकृति के नाश की भावना से पंचमी के पांच उपवास करें।

ॐ दर्शनावरणी कर्म के नौ कर्म प्रकृति के नाश की भावना से नवमी के नौ उपवास करें।

ॐ वेदनीय कर्म की दो कर्म प्रकृति के नाश की भावना से दूज के दो उपवास करें।

ॐ मोहनीय कर्म की 28 प्रकृति के नाश की भावना से द्वादशी के 28 उपवास करें।

ॐ आयु कर्म की 4 प्रकृति के नाश की भावना से चतुर्थी के चार उपवास करें।

ॐ नाम कर्म की 93 प्रकृति के नाश की भावना से चतुर्दशी के 93 उपवास करें।

ॐ गोत्र कर्म की 2 प्रकृति के नाश की भावना से सप्तमी के 2 उपवास करें।

ॐ अन्तराय कर्म की 5 प्रकृति के नाश की भावना से तृतीया के 5 उपवास करें।

ॐ तथा अष्ट गुणों की प्राप्ति हेतू अष्टमी के आठ उपवास करें।

ॐ इस प्रकार 5+9+2+28+4+93+3+5+8=156 उपवास कर्म दहन व्रत के करने चाहिए।

10. पुष्पगिरी तीर्थ विधान

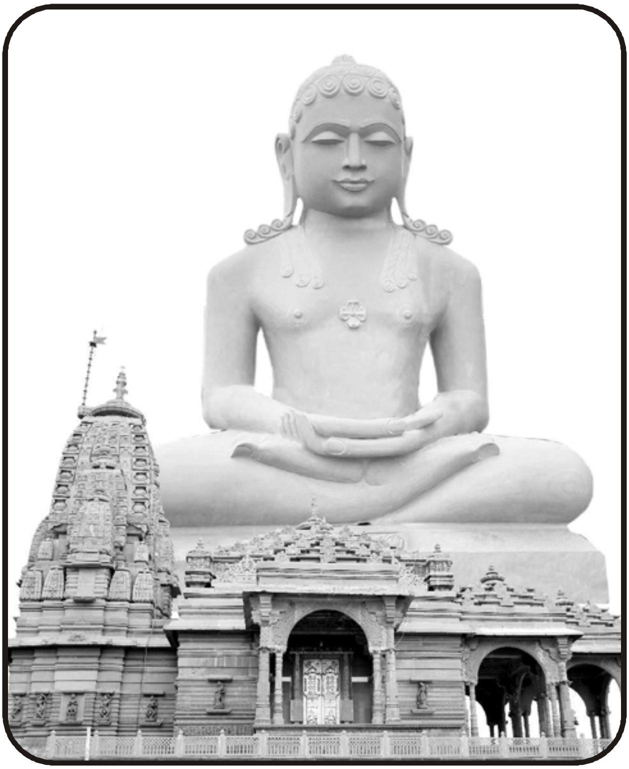

:: रचयिता ::

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभसागर जी

10. पुष्पगिरी तीर्थ विधान

माण्डला

कुल अर्घ्य 27

पुष्पगिरी तीर्थ विधान

स्थापना

पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पार्श्वनाथ भगवान हैं।
पदम प्रभु की प्रतिमा मनहर, अतिशय क्षेत्र महान है।।
बाल यति नेमी वीरा सह, मुनीसुव्रत जिन वंदन है।
आह्वानन स्थापन करता शांति नाथ अभिनंदन है।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(जल)

भाव समर्पण का जल लेकर, चरणों में अर्पित करता।
जन्म जरा मृत नाश करो प्रभु, विनयवन्त चरणों झुकता।।
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

(चन्दन)

शीतल चंदन गंध वान हो, सबको देता दिव्य सुवास।
मसले कुचले काटे जलाए, सुरभित करता हर संताप।।
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

(अक्षत)

मन वच तन को पावन करके, सुंदर तंदुल लाया हूं।
अक्षय पद की करूं कामना, अक्षत चरण चढ़ाया हूं।।
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः अक्षय पद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

(पुष्प)

कोमल कलियां डाली खिलती, सुबह शाम का जीवन है।
पुष्प चढ़ाकर काम नशाऊँ, समकित जीवन पावन है।।
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

(नैवेद्य)

क्षुधा वेदना बेचैनी दे, भक्ति मन की हरती है।
चरणों में नैवेद्य समर्पित, खुशियां शांति भरती है।।
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दीप)

जगमग जगमग दीपक जलता, बाहर का जग दिखलाता।
ध्यान दीप अंतस में जलकर, केवल ज्ञान को प्रगटाता।।

पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

(धूप)

अष्ट कर्म के नाशन हेतु, अष्टगंध मय धूप लिया।
अष्ट अंग चरणों में अर्पित, भक्ति में मन झूम लिया॥
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

(फल)

लौकिक फल कि नहीं तमन्ना, मोक्ष महाफल चाहूंगा।
पादप फल चरणों में अर्पित, त्याग भाव प्रगटाऊंगा॥
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

(अर्घ्य)

ईषत प्राग्भार भूमि पर, आप विराजे श्री भगवान।
अष्टद्रव्य मय अर्घ चढ़ाऊँ, जीवन होवे आप समान॥
पुष्पगिरी का पावन तीरथ, पारसनाथ भगवान है।
भू प्रगटित जिन पावन प्रतिमा अतिशय क्षेत्र महान है॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी जिनालयस्थ श्री पार्श्वनाथ सह सर्व जिनदेवाय नमः अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्ण जिनालय अर्घ्यावली

भूगर्भ प्रगटित पार्श्वनाथ भगवान (मूलनायक)

दिव्य कांति ले धरती भीतर पारस मूरत गड़ी रही।
महातीर्थ एक बने यहां पर शांत छवि ले पड़ी रही॥
पुष्पगिरी की जगी कल्पना पार्श्वनाथ दर्शन पाए।
अतिशय कारी बालयति जिन अर्घ चढ़ाकर गुण गाए॥1॥

ॐ ह्रीं भू-गर्भ प्रगटित श्री पुष्पगिरी तीर्थ मूलनायक श्री पार्श्वनाथ नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रतनाथ वेदी (पार्श्वनाथ जिनालय)

क्षण भंगुर जीवन माया है, भोग रोग का जीवन है।
मुनिव्रत धारूं मुनिसुव्रत सा, संवेगी मन पावन है॥
शरण आपके आया जिनवर, भवोदधि से करदो पार।
अर्घ चढ़ाऊँ भक्ति गाऊँ, पाऊँ सिद्धालय का द्वार॥2॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पार्श्वनाथ जिनालय मध्ये विराजमान श्री मुनिसुव्रत जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमिनाथ वेदी (पार्श्वनाथ जिनालय)

करुणा की धारा बहती है, नेमीनाथ के जीवन से।
क्रन्दन पशुओं का सुन करके, मुक्त हुए ग्रह बंधन से॥
राजुल छोड़ा कदम बढ़ाया, जूनागढ़ से गढ़ गिरनार।
पुष्पगिरी में अर्घ्य चढ़ाऊँ, नेमीनाथ है तारण हार॥3॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पार्श्वनाथ जिनालय मध्ये विराजमान श्री नेमीनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पार्श्वनाथ जिनालय परिक्रमा चौबीसी

पार्श्व जिनालय प्रदक्षिणा में, चौबीसो तीर्थंकर है।
पुण्य विकासक भव्य मनोहर, श्वेत वर्ण के जिनवर है।।
परिक्रमा दे जिन दर्शन कर, निज दर्शन शांति पाऊँ।
चरण कमल में अर्घ समर्पित, पुष्पगिरी भक्ति गाऊँ।।4।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थ पार्श्वनाथ जिनालय परिक्रमा मध्ये स्थापित चौबीसी जिन बिम्बेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पार्श्वनाथ जिनालय सम्मुख मानस्तम्भ

पार्श्व प्रभु जिन मंदिर सम्मुख, ऊंचा मानस्तंभ है।
यंत्र मंत्र भव गाथा पूरित, पार्श्वनाथ जिन बिम्ब हैं।।
भक्ति ये यशगान करूं हे, कल्याणधाम श्री पार्श्व जिनेश।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ चढ़ाऊँ, विघ्न हरे काटे भव क्लेश।।5।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे श्री पार्श्वनाथ जिनालय सम्मुख स्थापित मानस्तम्भ मध्य विराजमान सर्व जिन प्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पद्मप्रभु जी जिनालय

दिव्य सुनहरी मनहर आभा गगन दीप सम चमक रही।
वीतराग छवि नासा दृष्टि पद्मासन में दमक रही।।
पर्वत पर पाषाण जिनालय अन्दर दर्शन पाते हैं।
श्रद्धा से हम अर्घ चढ़ाकर पद्मप्रभु गुण गाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे विराजमान श्री पदमप्रभु जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आदिनाथ वेदी (पद्मप्रभु जिनालय)

श्रमण संस्कृति के परिचायक प्रथम देव श्री आदि जिनेश।
भोग भूमि में योग धारकर सिद्धालय में किया प्रवेश।।

दिव्य रूप की प्रतिमा लखकर अर्घ समर्पित करता हूं।
पुष्पगिरी के आदिनाथ को सुमिरन वंदन करता हूं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पदमप्रभु जिनालय मध्ये विराजमान श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्रप्रभु वेदी (पद्मप्रभु जिनालय)

स्वर्ग लोक से च्युत होकर के, नर भव अनुपम पाया है।
तीर्थंकर गुणधारी जिनवर, चन्द्रप्रभु मन भाया है।।
मेघ पटल का विघटन लखकर, वैरागी मन जाग गया।
चंद्र प्रभु के चरण कमल में, अर्घ चढ़ा भय भाग गया।।8।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पदमप्रभु जिनालय मध्ये विराजमान श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मप्रभु जिनालय सम्मुख मानस्तम्भ

अहंकार विगलित करके ये अर्हम दर्श कराता है।
समवशरण के अग्रभाग में जिन महिमा प्रगटाता है।।
यंत्र मंत्र भक्तामर गाथा आदिनाथ जय घोष करें।
मानस्तंभ जिन अर्घ चढ़ाऊँ ऋद्धि सिद्धि संतोष वरे।।9।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थ श्री पदमप्रभु जिनालय सम्मुख स्थापित मानस्तम्भ मध्ये विराजमान सर्व जिन प्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मुनिसुव्रत जिनालय

पीत वर्ण की आभा लेकर खडगासन में रहे विराज।
पाप विनाशक पुण्य विकासक जय हो मुनीसुव्रत जिनराज।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ सजाकर हर्षित हो अर्पित करता।
भव संताप मिटाओ स्वामी परम भाव अर्जित करता।।10।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे स्थापित श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूगर्भ नेमिनाथ जी (मुनिसुव्रत जिनालय)

धरती से प्रगटित जिनवर है नेमिनाथ अतिशय कारी।
श्याम वर्ण की मोहक मूरत दर्शन मन को सुखकारी॥
भूत भविष्यत वर्तमान के, ह्रीं चौबीसी को ध्याये।
पारस मल्ली वासु पद्म जिन, अर्घ चढ़ा मन हर्षाये॥11॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे मुनिसुव्रत जिनालय मध्ये विराजमान भू-गर्भ प्रगटित नेमिनाथ जिनेन्द्रादि सर्व जिनबिम्बेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वर्धमान पुष्पदन्त चन्द्रप्रभु जी (मुनिसुव्रत जिनालय)

अनेकांत के उद्घोषक हैं स्यादवाद मय दिव्य विचार।
वर्धमान जिन शासन नायक हरते सारे कर्म विकार॥
पुष्पदंत अरु चंद्रप्रभु की जिन मूरत शुभ फलदाई।
अर्घ चढ़ाकर करूं वंदना त्रय मूरत मन सुखदाई॥12॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे मुनिसुव्रत जिनालय मध्ये विराजमान श्री चन्द्रप्रभु, पुष्पदन्त श्री वर्धमान जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषि मंडल

हृदय कमल में परमेष्ठी पद, रत्नत्रय धारण करता।
ऋषि मंडल तीर्थंकर चौबीस, ध्यान लगा नित दुखहर्ता॥
रजत पत्र में बीज मंत्र से, युक्त ह्रीं का ध्यान करूं।
भेद ज्ञान का आश्रय लेकर, अर्घ चढ़ा सम्मान करूं॥13॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे मुनिसुव्रत जिनालय मध्ये स्थापित श्री ऋषि मंडल यंत्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत स्कंध अर्घ (मुनिसुव्रत जिनालय)

दिव्य ध्वनि का सार बताती, द्वादशांग मय जिनवाणी।
अक्षर संख्या पद दर्शाती, रजत यंत्र श्रुत वरदानी।।
अंग पूर्व का ज्ञान प्रकट हो, शुद्ध ज्ञान वर्षा कर दो।
अर्घ चढ़ाऊँ बोधि पाऊं, मरण समाधि का वर दो।।14।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे द्वादशांगमय श्रुतस्कंध यन्त्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मुनिसुव्रत जिनालय सम्मुख मानस्तम्भ

कलशा ऊपर तीन लोक का, दर्श कराता है आकार।
शतक आठ जिन बिम्ब विराजे, महिमा जिसकी अपरम्पार।।
शासन नायक वर्धमान की, कीर्ति पताका फहराये।
पुष्पगिरी में दर्शन कर लो, दिव्य नाद नित गुंजाये।।15।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे मुनिसुव्रत जिनालय सम्मुख स्थापित मानस्तम्भ मध्ये विराजमान सर्व जिन प्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पद्मप्रभु भगवान (त्रय मंजिल भवन)

नील गगन के नीचे सुंदर, पर्वत ऊपर मनहारी।
दिव्य पद्म पर पद्मासन में, पदमप्रभु प्रतिमा प्यारी।।
कर्म बेड़ियां तड़ तड़ टूटे, दर्शन कर श्रद्धान करूं।
पुष्पगिरी के पदम प्रभु को, अर्घ चढ़ा गुणगान करूं।।16।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पर्वतोपरी सर्वोतंग विराजित पद्मप्रभु जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पुष्पदन्त भगवान

जल भीतर रहकर जब सीपी मोती को विकसित करता।
रंग-बिरंगे चमचम दाने हार जाप या नग बनता।।

सीपी मंदिर मोती प्रतिमा लखकर अर्घ चढ़ाता हूं।
पुष्पगिरी के मध्य भाग के पुष्पदंत जिन ध्याता हूं॥17॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थो सीप मंदिर मध्ये विराजमान पुष्पदन्त जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पर्वत पर स्थापित पार्श्वनाथ भगवान

चिन्तामणी इच्छित फल देकर, मोह भाव विस्तार करें।
पारस जिनवर का स्पर्शन, मोक्ष भाव साकार करें॥
अर्घ चढ़ाकर करूं वंदना, तव पथ चलकर कर्म तजूं।
पुष्पगिरी के पारस जिनवर, भक्तिमय निज धर्म भजूं॥18॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पर्वतोपरी विराजमान श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्मुखी जिन प्रतिमा

चतुर्मुखी जिनराज विराजे चउदिश मंगलकारी है।
आदिनाथ महावीर प्रभु जी तीर्थंकर हितकारी है॥
चंद्रप्रभु चंचलता मेटे शांतिनाथ कल्याण करें।
अर्घ चढ़ाकर करूं वंदना चतुर्गति अवसान करें॥19॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे पर्वतोपरि विराजमान श्री आदिनाथ, चन्द्रप्रभु, शान्तिनाथ, महावीर स्वामी चतुर्मुखी जिन प्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तलघर स्थापित चौबीसी

जग वर्धन पापों से होता, तीर्थंकर ने बतलाया।
आत्म विहारी ध्यान लगाकर, निज जिनत्व को प्रगटाया॥
तलघर मन्दिर चौबीसी जिन, बारम्बार जपूं सुखकार।
अर्घ चढ़ाऊँ बालयति जिन, पाने संयम का उपहार॥20॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे तलघर स्थित चौबीसी जिनप्रतिमाभ्ये नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हरित मणिमय चौबीसी मानस्तम्भ

हरित वर्ण के चौबीसी का मानस्तंभ निराला है।
संशय विभ्रम मोह विनाशक देता ज्ञान उजाला है।।
श्रद्धा पूर्वक अर्घ चढ़ाकर सम्यक दर्शन पाऊंगा।
जिन मारग पर कदम बढ़ाकर आठों कर्म नशाऊंगा।।21।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे विराजमान रत्नमयी हरित मणिमय चौबीसी जिनबिम्बेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शास्त्र मंदिर अर्घ

अरहन्त देव की दिव्य ध्वनि से, जो भी निकली है वाणी,
स्याद्वाद अनेकान्तमयी वह, कहलाती है जिनवाणी।
नय निक्षेप तत्व पदार्थ का, इसमें पूर्ण विवेचन है,
भव तरने की बात इसी में, संशय इसमें लेश न है।।22।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे स्थित शास्त्र मंदिर मध्ये स्थापित संपूर्ण द्वादशांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शांतिनाथ जी (शास्त्र मंदिर)

कामदेव चक्री तीर्थंकर, ऐरानंदन शांति जिनेश।
अतिशय कारी भू प्रगटित हैं, नाम जाप हरता दुख क्लेश।।
शांत छवि शांति बरसाती, धर्म मार्ग बतलाती है।
अर्घ चढ़ाकर वंदन करता, शांत भाव प्रगटाती है।।23।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे शास्त्र मंदिर मध्ये विराजमान श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर स्वामी (शास्त्र मंदिर)

जिनशासन के दिव्य सूर्य हैं, वर्धमान महावीर महान।
अंतिम शासन नायक वीरा, सन्मति का देते वरदान।।

मिथ्या भाव हटाकर भव का, सारे पाप मिटाते हैं।
अर्घ चढ़ाकर करूं वंदना, निज गुण मन प्रगटाते हैं।।24।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे शास्त्र मंदिर मध्ये विराजमान श्री महावीर स्वामी जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाहुबली (सीढ़ी ऊपर)

मुक्ति के सोपान बने हैं, दृढ़ सन्यासी बाहुबली।
एक वर्ष तक खडगासन में, ध्यान लगाये कर्मदली।।
शांत सौम्य स्वरूप निरखते, मदनजीत योगी मुनिराज।
अर्घ चढ़ाकर करूं वंदना, काम विजेता श्री जिनराज।।25।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे विराजमान श्री बाहुबली स्वामिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सन्त निवास मंदिर

पंच शिखर का संत भवन है, रत्नमयी चैत्यालय हैं।
भू प्रगटित श्री पार्श्वनाथ की, लघु प्रतिमा जिन आलय है।।
मुनि आर्यिका नित वन्दन कर, निज चर्या को जाते हैं।
वैरागी मेरा जीवन हो, भाव अर्घ चढ़ाते हैं।।26।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे सन्त निवास मध्ये भू-गर्भ प्रगटित श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्रादि सर्व रत्नमयी जिन प्रतिमाभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विमल सागर जी

परम प्रभावक तीर्थ विकासक, महाऋषि समता धारी।
विमल सागर गुरुदेव हृदय से, वात्सल्य करते भारी।।
पुष्पगिरी कलशा मंदिर में, आप विराजे कृपा निधान।
अर्घ चढ़ाऊं विमल भाव से, पंचम युग के हैं भगवान।।27।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे श्री विमल सागर गुरु चरण कमलेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्ण अर्घ

पुष्पगिरी का तीरथ अनुपम, पुष्पदन्त की छाँव है।
जिन आगम गुरु दर्शन का यह, सिद्धालय सा गाँव है।।
पाप कषाय से मुक्त रहूँ मैं, समताधर संयम धारूँ।
महाअर्घ तीरथ में अर्पित, निज जीवन को श्रृंगारूँ।।28।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थे विराजमान सर्व जिन प्रतिमाभ्यो नमः पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्ष यक्षिणी

कुमुल यक्ष मनोवेगा देवी, पद्मप्रभु के सम्मुख हैं।
पद्मावती धरणेन्द्र देव भी, पार्श्व प्रभु के रक्षक हैं।।
क्षेत्रपाल कुष्मांडिनी देवी, पर्वत पर पहरा देते।
सम्यक दृष्टि देव देवियां, श्रद्धा को गहरा देते।।29।।

ॐ आँ क्रौं पुष्पगिरी तीर्थे स्थित सर्व अधिष्ठा यक्ष यक्षि, क्षेत्रपालादि दैव्ये फल पुष्पं मोदके ग्रहाण ग्रहाण समर्पयामि।

न्याय से रहित नेता, विनय से रहित शिष्य, शील से रहित वेशधारी, प्रशम गुण से रहित साधु, जीव से रहित शरीर, पुण्य रहित प्राणी और धन से रहित गृहस्थ कुछ भी नहीं है।

जयमाला

दोहा

पार्श्वनाथ वंदन करूं, हृदय पद्म खिल जाए।
शांतिनाथ जयघोष कर, नेमिनाथ सिरनाय।।

शांत निराकुल पार्श्वनाथ की, प्रतिमा अतिशयकारी है।
पंद्रह शतक पुरानी प्रतिमा, कष्ट क्लेश दुख हारी है।।

माता वामा अश्वसेन घर, नगर बनारस जन्म लिया।
खुशियों की सौगात लुटाकर, नर देवों को धन्य किया।।

जलते नाग नागिनी लखकर, णमोकार उच्चार लिया।
बाल ब्रह्मचारी दीक्षा ले, निज आतम उद्धार किया।।

अहिक्षेत्र की धरा धाम में, घाती कर्म नशाया है।
कमठासुर का मान भस्म कर, केवल दीप जलाया है।।

शत वर्षों की आयु पाकर, तीर्थराज सम्मेद गए।
शेष अघाती कर्म विनाशे, सिद्धालय जा बैठ गए।।

तीर्थ काल सबसे छोटा पर, यशो काल है बृहद विशाल।
जहां-जहां प्रतिमाएं होती, भक्तजनों को करे निहाल।।

पुष्पगिरी के तीरर्थ नायक, पार्श्वनाथ महिमा न्यारी।
परिक्रमा में चौबीस जिनवर, दर्शन वंदन सुखकारी।।

गुरु पुष्प को स्वप्न दिखाकर, पुष्पगिरी में आई है।
सर्प बिच्छू का जहर चढ़े ना, अतिशय खूब दिखाई है।।

जब से पारस पर्वत पर आ, पुष्पगिरी में विराजित हैं।
पुष्पगिरी नित विकसित होता, भारत भर में शोभित हैं।।

पुष्पदंत गुरुदेव भावना, स्वप्न सभी साकार हुआ।
सेवा शिक्षा संस्कृति का, तीर्थ बड़ा विस्तार हुआ॥

पदम प्रभु का मंदिर सुंदर, पुष्प गुरु के इष्ट जिनेश।
मनमोहक जिन प्रतिमा भीतर, शांत विराजे कष्ट हरेश॥

अष्टधातु की खडगासन श्री, मुनिसुव्रत की प्रतिमा है।
द्वादशांग अरु ऋषिमंडल के, रजत यंत्र की महिमा है॥

सहस वर्ष प्राचीन मूर्ति जो, नेमीनाथ की शोभ रही।
रत्नमयी त्रिकाल चौबीसी, भक्तों का मन मोह रही॥

वासुपूज्य और पदम प्रभु की, मंगल प्रतिमा का वंदन।
पार्श्व मल्ली जिन हरित बिम्ब है, चरणों का नित अभिनंदन॥

नवग्रह जिनदेवों की प्रतिमा, नवग्रह के सब कष्ट हरे।
संत भवन का रत्न जिनालय, हर मन में संतोष भरे॥

जिनवाणी आकार लिए इक, बृहद शास्त्र का मंदिर है।
गिरनारी अरु ग्रंथ लिपि की, प्रति कृति भी अंदर है॥

णमोकार मय षट्खण्डागम, पुष्पदंत की रचना है।
सुंदर जिन आगम का संग्रह, इस मंदिर की गरिमा है॥

भक्त सदा श्रुत मंदिर आकर, अपना ज्ञान बढ़ाते हैं।
देव शास्त्र गुरु दर्शन पाकर, फूले नहीं समाते हैं॥

बाहर बाहुबली विराजे, ध्यान मग्न खड़गासन है।
चतुर्मुखी जिनबिम्ब अनुपम, नमन करें मन पावन है॥

मध्य भाग में तीर्थंकर श्री, पुष्पदंत जी रहे विराज।
सीपी में मोती सम चमके, त्रिभुवन नायक श्री जिनराज॥

पार्श्वनाथ को वंदन करके, त्रय मंजिल चढ़ते जाये।
दिव्य पद्म पर पद्मासन में, पदम प्रभु दर्शन पाए॥

हाथ जोड़कर नयन खोलकर, जिन मूरत को देख रहे।
संत समाधि छत्री भवना, वृद्धाश्रम उल्लेख करें॥

गौशाला स्कुल दिखे दो, कलशा त्रय शुभ द्वार दिखे।
तीनों मानस्तंभ नमे हम, गौतम सा उद्धार मिले॥

मल्ली नेमी पारस वीरा, वासुपूज्य है बालयति।
भू प्रगटित खड्गासन प्रतिमा, नमन करूँ मैं शुद्ध मती॥

पदम प्रभु के कमल चिन्ह सा, खिलता तीरथ प्यारा है।
सेवा शिक्षा धर्मध्यान का, भाव जगे यह नारा है॥

अल्प समय में वृहद कार्य ले, दिन प्रतिदिन बढ़ता जाए।
प्राणी मात्र को सम्यक पथ दे, तीर्थ सूर्य चढ़ता जाए॥

भक्तों की भक्ति का साधन, सभी जगह में चमक रहा।
सोलह कारण के साधन से, पुष्पगिरी भी पनप रहा॥

पुष्प गिरी के जिन मंदिर में, जितनी प्रतिमा शोभित हैं।
चरण वंदना अर्घ समर्पित, जयमाला मनमोदित है॥

दोहा- **पुष्पगिरी की अर्चना, सर्व पाप विनशाय।**
"सौरभ सागर" भक्ति कर, आत्मिक सुख भी पाए॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पगिरी तीर्थ स्थित समस्त जिनालयस्थ सर्व जिनबिम्बेभ्यो नमः अनर्घ्यपद प्राप्ताय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्तिनाथ, कुन्थुनाथ, अरहनाथ जिन पूजन

स्थापना

कर्म विनाशी शिवपुर वासी, शान्तिनाथ की जय जय कार।
त्रिपदधारी कुन्थु अरह जिन, नमन करूँ मैं बारम्बार।।
भक्तिभाव से आज पुकारूँ, शान्ति कुन्थु अरह जिनराज।
स्थापन मम निकट पधारो-ज्ञाता दृष्टा हे जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

जल

क्षायिक सम्यक दर्शन सा जल, प्रभु पूजन में ले आऊँ।
चरण अग्र त्रय धारा देकर, त्रय दोषों को विनशाऊँ।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
जन्म जरा मृत नाश करो प्रभु, भक्ति भाव से पूजित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन

अनुकंपा का भाव लिए प्रभु, केसर चंदन संग लिया।
चरण कमल की अर्चा करता, क्रोध क्षमा मय रंग किया।।

त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
भव संताप मिटाने हेतु, चंदन द्रव्य समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह भव आताप विनाशनाय चंदनम् निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

त्रय योगों से वंदन करता, अक्षत आर्जव भाव लिए।
त्रय शल्यों से पार करो प्रभु, भव अर्णव में नाव लिए।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
अक्षय पद की करूँ कामना, अक्षत द्रव्य समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह अक्षय पद प्राप्तये अक्षतम् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

भंवरे गुंजित पुष्प सुगंधित, पौधे पर इतराते हैं।
भोर शाम तक जीवन जीते, कामी सम मुस्काते हैं।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
काम भाव विध्वंस करो प्रभु, द्रव्य पुष्प समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह कामबाण विनाशनाय पुष्पम् निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

अन्न कीट यह तन सारा है, नाना विध पकवान चहें।
जितना देंवे ज्यादा चाहे, कभी नहीं इंकार करें।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
क्षुधा रोग विनशाने वाले, नेवेज द्रव्य समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

अंतर ज्योति दिव्य दीप्ति मय, केवल ज्ञान मयी परकाश।
जगमग दीपक भक्ति ज्ञान का, अर्पित है अज्ञान विनाश।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
मोह तिमिर सारे छट जाये, दीप द्रव्य समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह मोह अन्धकार विनाशनाय दीपम् निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

अग्नि ताप से धूप जले पर, धूम सुवासित है देता।
तप अग्नि में तन मन जलता, कर्म निकाचित हर लेता।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
अष्ट कर्म विनशाने वाले, द्रव्य धूप समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह अष्ट कर्म दहनाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

फल

उत्तम फल जिन अग्र चढ़ाऊँ, व्यग्र भाव निस्तार करूँ।
दर्शन ज्ञान मई चेतन का, अनुभव फल बिस्तार करूँ।।
त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
मोक्ष महाफल फले आत्म में, द्रव्य फल समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह मोक्ष फल प्राप्तये फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ

वारि चंदन तन्दुल पुष्पम्, नेवज दीप सजाया है।
धूपम् और फलम् लेकर के, चरणन अर्घ चढ़ाया है।।

त्रय पदधारी शांति कुंथू अर, गुण रत्नों से भूषित है।
है अनर्घ पद पाने अर्घम्, अष्ट द्रव्य समर्पित है।।

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरहनाथ त्रय पद धारी जिन समूह अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

शांति नाथ जय शांति प्रदाता, भव्य जीव के तारणहार।
तीर्थंकर चक्री पदधारी, कामदेव सौंदर्य अपार।।1।।
चरम शरीरी इंद्रिय सुख को, चरम शिखर तक पाया है।
पाप विकाशक जाना मन से, क्षणभर में ठुकराया है।।
सुप्त धर्म को जागृत करके, धर्म ध्वजा फहराया है।
षट खंडो के स्वामी होकर, षट कर्तव्य सिखाया है।।
बाह्य चक्र से सर्वशत्रु को, क्षण भर में भयभीत किया।
मोह चक्र को ध्यान चक्र से, सहज भाव से जीत लिया।।
वीतराग पथ अपना करके, आत्मिक शांति प्रगटाया।
शांतिनाथ जिन जय हो तेरी, सिद्ध निरामय सुख पाया।।
कुंथुनाथ जी निर्मल मन पा करुणरस बरसाते हैं।
पद वैभव सत्ता शक्ति सब, पुण्य योग से पाते है।।
अहमिंद्र पद तजकर प्रभु ने, नर भव उत्तम पाया है।
इंद्रिय सुख अग्नि ज्वाला सम, तज सिद्धालय पाया है।।
अरिहवंसी श्री सप्तम चक्री, अरहनाथ गुणवान मुनि।
मेघ पटल परिवर्तन लखकर, सिद्धालय की राह चुनी।।
अरहनाथ के चरणों में रह, सर्व जीव पर रहम करूं।
अविनाशी जगनायक जिनवर, विषयों के सुख वहम हरु।।
नरभव उत्तम सार्थक करने, जिन मुद्रा को धारा है।
अरहनाथ अरिकुल के नाशक, अर्हत पद को पाया है।।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर, कल्याणक के धारी है।

भक्ति भाव से चरण वंदना, तीर्थंकर हितकारी है॥
पाप विनाशक संकटहर्ता, विघ्नों के संहारक है।
अमल आत्मा अचल विराजित, भव अर्णव के तारक है॥
रत्नत्रय पथ गमन करने प्रभु, ऐसी शक्ति मन भरदों।
कर्म दासता झर छँट जायें, ध्यान लगाऊँ नित वरदो॥
शांति कुंथु अर चरण पूजकर, कर्म कलंक मिटाऊँगा।
निजपद पाने जिन पद पूजा, अन्तिम क्षण तक गाऊंगा॥

ॐ ह्रीं श्रीं शांति कुंथु अरनाथ जिन समूह अनर्घ पद प्राप्तये जयमाला पूर्ण अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घत्ता

जय जय तीर्थंकर, सर्वहितंकर, कर्म क्षयंकर, ध्यानधरुं।
नत सौरभ सागर पूजा गाकर, शान्ति निलय में वास करूँ॥

इत्याशीर्वाद पुष्पांजलि क्षिपेत्

शांति शांति धारा

गुरु ही विधाता है,
गुरु ही दाता है,
गुरु ही स्वकीय बन्धु है,
गुरु ही गुणरुपी रत्नों के सागर हैं,
गुरु ही शिक्षक हैं,
गुरु ही पिता हैं और कर्म समूह को
नष्ट करने वाले गुरु ही मोक्ष हैं।
निर्ग्रन्थ गुरुदेव को नमस्कार हो।

11. आचार्य परमेष्ठी विधान
(गणाचार्य पुष्पदन्तसागर विधान)

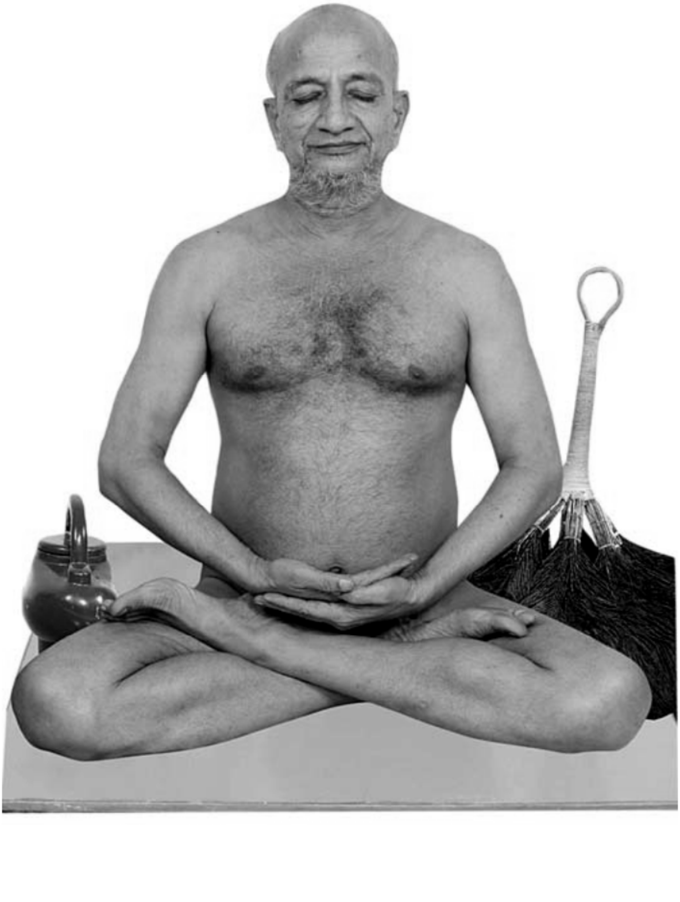

रचयिता

दिगम्बर जैनाचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी

11. आचार्य परमेष्ठी विधान

माण्डला

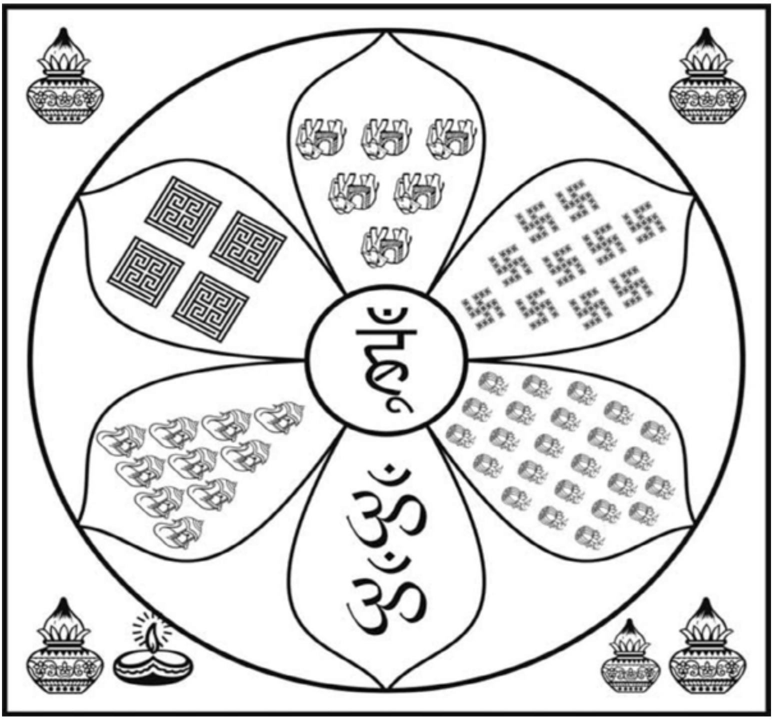

कुल अर्घ्य 56 : प्रथम वलय में 2, द्वितीय वलय में 10, तृतीय वलय में 4, चतुर्थ वलय में 6, पंचम वलय में 10, षष्ठम वलय में 24

आचार्य परमेष्ठी व्रत विधि

व्रतारम्भ : किसी भी माह की अष्टमी या चतुर्दशी से प्रारम्भ

अवधि : 2 वर्ष से 4 वर्ष

व्रत पूजा : आचार्य परमेष्ठी विधान आदि

जाप : ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं पुष्पदन्त सागर गुरुवे नमः (1 या 36 जाप)

व्रत विधि : 36 उपवास या एकासन या रस परित्याग पूर्वक

गणाचार्य श्री 108 पुष्पदंत सागर जी का जीवन परिचय एवं संस्कृति विकास की एक झलक

जन्म	:	01 जनवरी 1954
स्थान	:	गोंदिया, महाराष्ट्र
बचपन का नाम	:	सुशील जैन
पिता का नाम	:	श्री कोमल चन्द जी जैन
माता का नाम	:	श्रीमती मुथरा देवी जी जैन
क्षुल्लक दीक्षा	:	02 नवम्बर 1978 (सिद्धक्षेत्र नैनागिरी जी)
ऐलक दीक्षा	:	14 जनवरी 1980 (सिद्धक्षेत्र नैनागिरी जी)
मुनि दीक्षा	:	31 जनवरी 1980 (बाला बेहट, उ.प्र.)
दीक्षा गुरु	:	आचार्य श्री 108 विमलसागर जी महाराज
आचार्य पद	:	21 मार्च 1986 (गोम्मटगिरी, इंदौर)

दर्शन एवं विचार के जगत में वर्तमान श्रमण संतों की परम्परा में गणाचार्य श्री 108 पुष्पदंत सागर जी महाराज अपनी विलक्षणता, दूरदर्शिता एवं दार्शनिकता के लिए अनूठा स्थान रखते हैं। आपकी तर्कपूर्ण अभिव्यक्ति एवं बोधगम्य समाधान शैली स्वस्थ एवं सुगम मार्ग प्रदान करने का अद्भुत कौशल रखते हैं।

आप अप्रकंप संकल्प के धनी दृढ़ निश्चयी, महामनस्वी, कृतज्ञता की प्रतिमूर्ति, इष्ट के प्रति समर्पित स्वयं अनुशासित एवं अनुशासन के सजग प्रहरी हैं, प्रबल तर्कबल मनोबल से सम्पन्न हैं, आप मूल गुणानुरूप पञ्चाचार, त्रिगुप्ति, दशधर्म, बारह तप, षट्आवश्यक, बाइस परिषह, पंचमहाव्रत, समिति, इन्द्रिय निरोध, सप्त शेष गुणों को साधना का आधार मानकर सदैव संयमानुरागी बनकर चलते हैं। आपका छोटा कद-छरहरा बदन, गौर वर्ण, अधरों पर खिलती मुस्कान, निर्द्वन्द मुख-मण्डल, सहज ओजस्वी चेहरा वशीकरण मंत्र है। आप बाल संघ के नायक हैं आप समताभावी, चमत्कारी, कृपालु, अद्वितीय अविभावक सन्त हैं। आप अनंतगुण विभूषित, प्रवचन वाचस्पति, निर्भीक, परोपकारी, प्रखर प्रवक्ता, तेजस्वी, महाकवि, लेखक, भक्तोद्धारक, प्रज्ञा एवं प्रतिभा के प्रचण्ड सूर्य, सन्त श्रृंखला के ध्रुव तारे,

अन्तश्चेतना के संवाहक, भक्तों के सिरमोर आँखों के तारे, पुष्पगिरी प्रणेता, श्रद्धा लोक के देवता, कलयुग के महावीर आचार्य परमेष्ठी हैं। आपकी चर्चा एवं चर्या छल रहित स्वाभाविक है। आप निन्दक से डरते नहीं मगर निन्दा कभी करते नहीं, सत्य का स्वागत करते हैं आप दुख हर्ता हैं, सुख कर्ता हैं, समदृष्टा हैं, अतिशय योगी हैं, पतितोद्धारक हैं, बुद्धिमान हैं, शास्त्रज्ञ हैं, लोक व्यवहार कुशल हैं, आप सरस्वती के वरद पुत्र, महावीर के लघुनन्दन हैं। आप संघर्ष में हर्ष, उपसर्ग को उपहार मानकर निस्पृह वृत्ति से जीते हैं। आप अपने भाग्य के निर्माता हैं, आपको बीसवीं सदी के ऋषि परम्परा के पंचम पट्ट के आचार्य पद पर प्रतिष्ठापित दीक्षित करने का गौरव प्राप्त है। आप वात्सल्य दिवाकर हैं, आप पंथानुरागी नहीं महावीर के पथानुरागी हैं। आपका चुम्बकीय व्यक्तित्व, प्रभावी वाणी, चिन्तन की गहराई, संयम की ऊँचाई, कोमल हृदय से बहती करुणा की निर्झरणी, अद्भुत वात्सल्य बरसाती है। आपके रग-रग में "जीओ और जीने दो" की भावना समाहित है, आपकी प्रत्येक वाणी में "परस्परोपग्रहो जीवानाम्" की एक अनुगूँज है, आपकी प्रत्येक चर्या में "तरो और तारो" की एक झलक है। आपकी प्रत्येक मुस्कुराहट में "हंसों और हंसाओ" की प्रेरणा है, आपकी प्रत्येक उठती निगाहों में "उठो और उठाओ" की सद्भावना है, आपके प्रत्येक आशीष में "सँभलो और सँभालो" का दिव्य उद्घोष है, आपके मन में मानव उत्थान की एक यथार्थ कल्पना है आपने तर्क रहित मैत्री, स्वार्थ रहित सेवा, तनाव रहित परिवार, विवाद रहित गाँव, युद्ध रहित विश्व की भावना लेकर पुष्पगिरी तीर्थ को केन्द्र बनाया है आप परिवार में सहनशील, समाज में कर्मशील, जीवन में धर्मशील बनने की सतत प्रेरणा देते हैं। आप अतीत के जानकार, भविष्य के दृष्टा होते हुए भी वर्तमान में धैर्य समता समय का इंतजार करने में माहिर हैं। आप जानते हैं 'इन्तजार करने और अधीर हो उठने में' जरा-सा अन्तर है। इन्तजार में शान्तिपूर्ण प्रगति है, अधीरता में तनावपूर्ण सफलता का रहस्य समाया है। जिसने आपका शिष्यत्व पाया वह धन्य है। गुरुदेव की आराधना में यह "गणाचार्य पुष्पदंतसागर विधान" उनके चरणों में अर्घ्यावली है भक्तों के लिए श्रद्धावली है। आचार्य परमेष्ठी की पूजांजलि है।

गणाचार्य पुष्पदंत सागर जी विधान प्रारंभ

स्थापना

मंगल मूरत दिव्य स्वरूपी, भव्यों के मनहारी हैं।
राग तजें वैराग भजें, गुरु पुष्पदंत उपकारी हैं॥
जीवन को जीवन्त बनाने, मोक्ष मार्ग स्वीकार किया।
महातपस्वी ज्ञान मनीषी, मम जीवन उद्धार किया॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य पुष्पदंत सागर गुरुवर! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्। ॐ ह्रूं गणाचार्य पुष्पदंत सागर गुरुवर! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रूं गणाचार्य पुष्पदंत सागर गुरुवर! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

जल स्वभाव से निर्मल नीचे, बहता प्यास बुझाता है।
पुष्पदंत गुरु विनय शील बन, सबका भाग्य जगाता है॥
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

तप से सुरभित तन पावन है, चन्दन सम वाणी तेरी।
मन संताप मिटाने वाली, अपनापन जय हो तेरी॥
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: संसार-ताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

द्वादशांग का ज्ञान भरा जो, अक्षय रूप से बाँट रहे।
मन वच तन को अक्षत करके, कर्म कालिमा छाँट रहे॥

मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: अक्षय-पद-प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

मुख-मण्डल पुष्पों-सा कोमल, खिला खिला-सा रहता है।
भक्तों का मन रूप निरखकर, आनन्दित हो कहता है॥
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

तन वाहन भोजन से चलता, अल्प रूप में ग्रहण करें।
श्रावक श्रद्धा से चर्या कर, अपने भव का भ्रमण हरे॥
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: क्षुधा-रोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

ज्ञानामृत की दिव्य ज्योत से, मन का दीपक जला रहे।
मन अंधियारा दूर हटाकर, मोक्ष मार्ग पर चला रहे॥
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

अग्नि मे जलकर धूपं तो, महक बिखेरा करता है।
गुरुवर तेरा वात्सल्य तो, चहक उकेरा करता है॥

मन श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदन्त गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वंदना करता मम मन हितकारी।।

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

डाली से संबंधित फल ज्यों, बढ़ता पकता फलता है।
गुरुवर तेरे चरण वंद्य से, मोक्ष मार्ग मम चलता है।।
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी।।

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्पों की, शुभ सामग्री पावन है।
दीप धूप नैवेद्य फलों से, अर्घ बना मन भावन है।।
मम श्रद्धा के देव आप हो, पुष्पदंत गुरु अविकारी।
भक्ति भाव से चरण वन्दना, करता मम मन हितकारी।।

ॐ ह्रूं गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-चरण-कमलेभ्यो: अनर्घ पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

पुष्पदंत जयवन्त हो, धारें पद अरहन्त।
गाऊँ जयमाला गुरु, पाने पद निर्ग्रन्थ।।

जयमाला

दिव्य त्याग से अपने मन को, साध लिया गुणवन्त मुनि।
पंच महाव्रत धारण करके, महावीर की राह चुनी।।

जीवन की सार्थकता पाने, व्यर्थ राग को छोड़ दिया।
वीतरागता अपना करके, निज से नाता जोड़ लिया।।

जन्म गोंदिया गोद में आए, माता मथुरा हर्षाई।
कोमल चन्द पिता साया पा, छत्तरपुर शिक्षा पाई॥
शांत विनोदी किलकोटी कर, सबके मन को भाते थे।
धर्म साधना सन्त वन्दना, करने में शरमाते थे॥
एक दिवस मुनि संग विहार में, पीछे-पीछे जाते हैं।
क्षुल्लक जी से वार्ता करके, अपने भाव जगाते हैं॥
रात्रि भोजन जमीकंद तज, पदत्राण को छोड़ा था।
घर में वैरागी सम रहकर, निज से नाता जोड़ा था॥
भीतर की प्रज्ञा जागी, शुभ त्याग मार्ग अपनाया है।
माह अठारह अणुव्रती बन, राग द्वेष घटाया है॥
बाला वेहट में इस युग के, महासन्त का दर्श मिला।
वात्सल्य से परिपूरित हो, विमल हस्त स्पर्श मिला॥
तत्क्षण सब माया छोड़ी और, भेष दिगम्बर धार लिया।
पुष्पदंत शुभ नाम पुकारा, सबने जय जयकार किया॥
चुम्बक सम आकर्षण तेरा, महाप्रभावी वाणी है।
चिन्तन की गहराई अद्भुत, संयम जग कल्याणी है॥
करुणा की निर्झरनी झर झर, पुष्पगिरि में बहती है।
हँसमुख जीवन आगम मंथन, जीवन गाथा कहती है॥
दृढ़ संन्यासी अन्तेवासी, धर्म ध्यान विकसित करते।
भक्तों में वात्सल्य लुटाकर, हर मन को प्रमुदित करते॥
मैं चरणों का सेवक गुरुवर, आठों द्रव्य चढ़ाऊँगा।
तेरी अनुपम कृपा दृष्टि से, संयम 'सौरभ' पाऊँगा॥

दोहा

पुष्पदंत गुरुदेव का, पाऊँ आशीर्वाद।
लौकिक सब झंझट मिटे, करूँ यही फरियाद॥

ॐ ह्रूं गणाचार्य-श्री-पुष्पदंत-सागर-गुरुवे नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विधान अर्घ्यावली

प्रथम वलय

जैन सन्त आचार्य जी, पाले पंचाचार।
धर्म गुप्ति तप आवश्यक, करें आत्म उद्धार।।

ॐ ह्रूं छत्तीस-मूलगुण-धारक-आचार्य-परमेष्ठी-गुरुभ्यो नमः मण्डलस्योपरि-पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

पञ्चाचार

दर्शन ज्ञान चरण तप शक्ति, पंचाचार कहाते हैं।
आचारज गुरु पुष्पदंत जी, श्रद्धा से अपनाते हैं।।
जिन श्रद्धा आगम के ज्ञाता, मुनि चर्या को पाल रहे।
तप अपनाकर शक्ति पाकर, सारे कर्म निकाल रहे।।1।।

ॐ ह्रूं दर्शन-ज्ञान-चारित्र-तप-वीर्याचार-गुणसहित-श्री-पुष्पदंतसागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

त्रिगुप्ति अर्घ्य

ध्यान लगाकर मन को रोके, मौन रहे हितमित बोले।
खड्गासन या पद्मासन में, आलस तज बंधन खोले।।
त्रय गुप्ति संयुक्त मुनिश्वर, पुष्पदंत गुरुराज कहे।
मन वच तन चंचलता मेटों, अर्घ चढ़ा निज साध रहे।।2।।

ॐ ह्रूं मन-वचन-काय-गुप्ति-गुणसहितपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय वलय

दशधर्म गुणार्घ्य

क्रोध रहित हो क्षमा धारकर, शान्त छवि को अपनाया।
समता रस को पीकर गुरुवर, अंतर मन को महकाया।।

क्षमाधर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ चढ़ाकर भजते हैं॥1॥

ॐ ह्रूं उत्तमक्षमा-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहंकार का निरसन करके, मार्दव मन निर्मल पाया।
विनय मोक्ष का द्वार कहा, जो कोमल मन को दर्शाया॥
मार्दव धर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ चढ़ाकर भजते हैं॥2॥

ॐ ह्रूं उत्तममार्दव-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन की वृत्ति सहज सरल है, भीतर बाहर भेद नहीं।
देवें धोखा या ठग लेवें, किन्चित मन में खेद नहीं॥
आर्जव धर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ चढ़ाकर भजते हैं॥3॥

ॐ ह्रूं उत्तमआर्जव-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्लोभी निर्मोही गुरुवर, अपने हित कुछ ना चाहें।
धर्म बढ़े संताप घटे नित, पर का हित नित ही चाहे॥
शौच धर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥4॥

ॐ ह्रूं उत्तमशौच-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म के धारक गुरुवर, हित मित प्रिय वाणी बोलें।
जन मन को आकर्षित करके, मोक्ष मार्ग ताला खोलें॥
सत्य धर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥5॥

ॐ ह्रूं उत्तमसत्य-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम धारण कर जीओ और, जीने दो जग प्राणी को।
इन्द्रिय मन को वश में करके, धर्म करें नित ज्ञानी हो॥
संयम धर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥6॥

ॐ ह्रूं उत्तमसंयम-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सांसारिक इच्छाएँ नाशी, तन मन तप में लगा रहे।
अंतर बाहर बारह तप धर, कर्म कालिमा घटा रहे॥
उत्तम तप का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥7॥

ॐ ह्रूं उत्तम तप धर्म समन्वित श्री पुष्पदंत सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राग सदा दुखकारी माने, त्याग मार्ग को अपनावें।
जितना छोड़े उतना पावे, जैनधर्म ये बतलावे॥
त्याग धर्म का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥8॥

ॐ ह्रूं उत्तमत्याग-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरा तेरा भाव मिटाकर, आसक्ति को छोड़ दिया।
निज स्वभाव में रमते गुरुवर, आतम से मन जोड़ लिया॥
आकिञ्चन का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥9॥

ॐ ह्रूं उत्तमआकिञ्चन्य-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बाल ब्रह्मचारी गुरुवर हैं, निज आतम उद्धार करें।
स्वानुभूति के आस्वादी बन, निराकार स्वीकार करें॥
ब्रह्मचर्य का मुकुट लगाकर, गुरुवर सुन्दर लगते हैं।
अंतर मन से आराधन कर, अर्घ समर्पित करते हैं॥10॥

ॐ ह्रूं उत्तमब्रह्मचर्य-धर्म-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

दश धर्मों को धारकर, धीर बने गंभीर।
आत्म ध्यान में लीन हों, काटे जग जंजीर॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादि-दशधर्म-धारक-गणाचार्य-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तृतीय वलय

बारह तप के अर्घ्य

अनशन ऊनोदर कर गुरु ने, अपने मन को बाँधा है।
व्रत परिसंख्यान गुणों से अपने, किस्मत को भी साधा है॥
तप से तन का तेज निखरता, मन से कर्म हटाता है।
पुष्पदंत आचार्य श्री का, तपसी जीवन भाता है॥1॥

ॐ ह्रूं अनशनऊनोदर-व्रतपरिसंख्यान-गुण-समन्वित श्रीपुष्पदंत सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान ध्यान का अमृत रस पी, षट्रस से ना राग करें।
विविक्त शय्यासन तन क्लेश, तप से कर्मन काट रहे॥
तप से तन का तेज निखरता, मन से कर्म हटाता है।
पुष्पदंत आचार्य श्री का, तपसी जीवन भाता है॥2॥

ॐ ह्रूं रसपरित्यागविविक्तशय्यासन कायक्लेश तपसमन्वित श्रीपुष्पदंतसागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोष लगे तो प्रायश्चित कर, चार विनय को धारा है।
वैय्यावृत्ति सेवा करके, निज आतम श्रृंगारा है॥
तप से तन का तेज निखरता, मन से कर्म हटाता है।
पुष्पदंत आचार्य श्री का, तपसी जीवन भाता है॥3॥

ॐ ह्रूं प्रायश्चित-विनय-वैय्यावृत-तप-समन्वित श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आतम का अध्ययन करके, व्यूत्सर्ग स्वीकार करे।
ध्यान मग्न हो चेतन लखकर, आतम के विकार हरे॥

तप से तन का तेज निखरता, मन से कर्म हटाता है।
पुष्पदंत आचार्य श्री का, तपसी जीवन भाता है।।4।।

ॐ ह्रूं स्वाध्याय व्यूत्सर्ग ध्यान गुण समन्वित श्री पुष्पदंत सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

तपधारी गुरुराज का, जीवन पावन धाम।
कर्म निर्जरा कर रहें, पाने चिर विश्राम।।

ॐ ह्रूं द्वादश-तप-धारक-गणाचार्य-पुष्पदंत-सागराय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चतुर्थ वलय

षट् आवश्यक के अर्घ्य

सुख दुख या बैरी बन्धु हो, साम्य भाव से स्वीकारें।
समता धारे निज को निखारे, सामायिक को विस्तारे।।
पुष्पदंत आचार्य श्री जी, आवश्यक गुण के धारी।
भक्ति भाव से अर्घ समर्पित, वन्दन हो त्रय बार हमारी।।1।।

ॐ ह्रूं समता-आवश्यक-गुण-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु वन्दन कर जन्म मरण के, दुक्खों का क्षय करते हैं।
जिनवर के गुण पाने को ही, नित अभिवन्दन करते हैं।।
पुष्पदन्त आचार्य श्री जी, आवश्यक गुण के धारी।।
भक्ति भाव से अर्घ समर्पित, वन्दन हो त्रय बार हमारी ।।2।।

ॐ ह्रूं वन्दना-आवश्यक-गुण-समन्वित-श्रीपुष्पदन्त-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वयं स्वयंभू तीर्थंकर के, चरणों का आराधन है।
चौबीसों जिनराज हमारे, भव तरने के साधन हैं।।

पुष्पदंत आचार्य श्री जी, आवश्यक गुण के धारी।
भक्ति भाव से अर्घ समर्पित, वन्दन हो त्रय बार हमारी॥3॥

ॐ ह्रूं स्तुति-आवश्यक-गुण-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मन वच तन की चंचलता से, कर्म बंध हो जाता है।
निज आलोचन प्रतिक्रमण कर, कर्म दोष धुल जाता है॥
पुष्पदंत आचार्य श्री जी, आवश्यक गुण के धारी।
भक्ति भाव से अर्घ समर्पित, वन्दन हो त्रय बार हमारी॥4॥

ॐ ह्रूं प्रतिक्रमण-आवश्यक-गुण-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आगामी दोषों से बचने, प्रत्याख्यान करे स्वीकार।
पाप भीरू मुनिवर जी प्यारे, सदा करें नित त्याग विचार॥
पुष्पदंत आचार्य श्री जी, आवश्यक गुण के धारी।
भक्ति भाव से अर्घ समर्पित, वन्दन हो त्रय बार हमारी॥5॥

ॐ ह्रूं प्रत्याख्यान-आवश्यक-गुण-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म निर्जरा संवर हेतु, कायोत्सर्ग अपनाते हैं।
काया से रागांश घटाकर, धर्म ध्वजा फहराते हैं॥
पुष्पदंत आचार्य श्री जी, आवश्यक गुण के धारी।
भक्ति भाव से अर्घ समर्पित, वन्दन हो त्रय बार हमारी॥6॥

ॐ ह्रूं कायोत्सर्ग-आवश्यक-गुण-समन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

समता वन्दना स्तुति, प्रतिक्रमण गुणखान।
प्रत्याख्यान करे सदा, कायोत्सर्ग महान्॥

ॐ ह्रूं षटावश्यक-गुण-धारक-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम वलय

बाईस परिषह के अर्घ्य

क्षुधा तृषा अरुँ शीत उष्ण, की बाधाएँ नित आती हैं।
आतम ध्यानी भेद, विज्ञानी, का भी मन भटकाती हैं॥
फिर भी परिषह जयते सहते, पुष्पदंत मुनिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर भक्ति कर लूँ, करने मैं भी निज कल्याण॥1॥

ॐ ह्रूं क्षुधा-तृषा-शीत-उष्ण-परिषहजयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जहरीले है कीट पतंगे, डंक मारकर कष्ट दिए।
नग्न मुद्रा से कर्ज चुकाकर, समता धारक इष्ट लिए।
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत मुनिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥2॥

ॐ ह्रूं दशमशक-नाग्नय-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साम्य भाव रख द्वेष भाव तज, परिषह अरति जयते हैं।
मेरू सा मन अडिग बनाकर, स्त्री परिषह सहते हैं॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत मुनिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥3॥

ॐ ह्रूं अरति-स्त्री-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टि नीचे चार हाथ लख, गमन करे चर्या धारी।
आसन थान तजे ना गुरुवर, चाहे बाधा हो भारी॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत यतिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥4॥

ॐ ह्रूं चर्या-निषद्या-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काष्ट फलक भूमि करवट ले, निद्रा लेते धनुषाकार।
दुर्जन के दुर्वचनों को सुन, क्रोध करे ना समताधार॥

परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत यतिराज महान।
अर्घ्यं चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥5॥

ॐ ह्रूं शय्या-आक्रोश-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मारे बाँधे आग लगावें, घानी पेरे वध कर दे।
अन्न पान औषध आदि को, ना माँगे मन सध करके॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत ऋषिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥6॥

ॐ ह्रूं वध-याचना-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक बार आहार करे पर, विधि मिले ना पूर्णाहार।
रोगों ने तन घेर लिया पर, समता धारे तत्त्व विचार॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत ऋषिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥7॥

ॐ ह्रूं अलाभ-रोग-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद यात्रा में पदत्राण ना, काँटे कंकड़ चुभते हैं।
वस्त्र हीन तन धूल पसीना, का शृंगार ही करते हैं॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत गुरुराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥8॥

ॐ ह्रूं तृण-स्पर्श-मल-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानी तपसी गुण भण्डारी, विनय नहीं कोई करता।
प्रज्ञा धारी मुनिवर को लख, ईर्ष्या से कोई भरता॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत गुरुराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥9॥

ॐ ह्रूं सत्कार-पुरस्कार-प्रज्ञा-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संन्यासी बन वर्षों बीते, ज्ञान नहीं है बढ़ पाया।
तप कष्टों का दाता केवल, भाव नहीं मन में आया॥
परिषह जयते सहते मुनिवर, पुष्पदंत मुनिराज महान।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, करने निज आतम कल्याण॥10॥

ॐ ह्रूं अज्ञान-अदर्शन-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

परिषह जयते सन्त जन, चारों ओर से रोज।
निखरे जीवन साधना, भागे कर्मन फौज॥

ॐ ह्रूं द्वाविंशति-परिषह-जयी-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

षष्टम वलय
(गुणानुवाद अर्घ्यावली)
बाल संघ नायक सन्त

गुण मणियों से विरचित तन है, धर्म ध्यान से मन पावन।
चारों अनुयोगों से पूरित, वाणी तेरी मन भावन॥
दर्शन ज्ञान चरण तप विकसित, अप्रमाद के धारी हो।
बालसंघ के नायक गुरुवर, पुण्य पुञ्ज अवतारी हो॥1॥

ॐ ह्रूं त्रियोग-वशकारी-अप्रमादी-पुण्य-पुञ्ज-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समताभावी सन्त

बुद्धिमान शास्त्रों के ज्ञाता, लोक व्यवहार को जान रहे।
प्रतिभाशाली समता भावी, प्रश्नोत्तर का दान करें॥
प्रश्न सहे मन हरने वाले, निन्दा से वे दूर रहे।
मधुरिम वक्ता गुणधारी गुरु, आचारज भरपूर कहे॥2॥

ॐ ह्रूं आचार्य-परमेष्ठि-गुण-संयुक्ताय-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चमत्कारी सन्त

छत्तीसगढ़ में धूम मचाकर, जसपुर में प्रवास किया।
धर्म ज्ञान अपनापन देकर, श्रद्धा का विकास किया॥
जिनवाणी का पर्व पंचमी, भक्त झूला झुला रहे।
बौद्ध भिक्षु ने हाथ लगाया, तत्क्षण लकवा मिटा रहे॥3॥

ॐ ह्रूं बौद्ध भिक्षु-कर-पक्षाघात-रहित-करण-समर्थकाय-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृपालु सन्त

महावीर के जिन मन्दिर में, शान्तिनाथ विधान हुआ।
बौद्ध भिक्षु का माँस छुड़ाया, गर्दन लकवा नाश हुआ॥
वीर चरण की करो वन्दना, रोग दूर हो जाएगा।
जैन धर्म की शक्ति अनुपम, भव सागर तर जाएगा॥4॥

ॐ ह्रूं जिनधर्म-अहिंसा-भाव-प्रगटाय-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अद्वितीय संत

पुष्पदंत आचार्य संघ का, सुन्दर वृक्ष विशाल है।
सम्यक दर्शन जड़ मजबूती, ज्ञान स्कन्ध मिशाल है॥
शाखाएँ चारित्र की फैलीं, दीक्षित मुनि संस्कार भरे।
धर्मामृत का फल देकर के, भक्तों का उद्धार करें॥5॥

ॐ ह्रूं आचार्य-परमेष्ठि-गुण-विशाल-वृक्ष-समूह-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वतोभद्र विहारी सन्त

छोटा कद अरुँ गौर वर्ण की, सुन्दर काया मनहारी।
लम्बी नासा करतल लम्बी, तीक्ष्ण बुद्धि जग हितकारी॥
छोटे कदमों से गुरुवर ने, 'सर्वतोभद्र विहार' किया।
पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, चलकर जग उद्धार किया॥6॥

ॐ ह्रूं सर्वतोभद्र-विहारी श्रीपुष्पदन्तसागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अविभावक सन्त

अद्भुत क्षमता ममता धारी, अविभावक गुरुराज कहो।
छोटे-छोटे बाल शिष्य के, विस्तारक गुरुराज अहो॥
पूर्ण प्रेम शिक्षा दीक्षा दे, जीवन में वैराग्य भरा।
महाप्रभावक शिष्य बनाकर, जैनधर्म अनुराग करा॥7॥

ॐ ह्रूं अविभावक-सम-श्रेष्ठ सन्त-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य पद

गोम्मटगिरी इन्दौर नगर में, पंचकल्याणक बड़ा हुआ।
विमल सिन्धु गुरुदेव चरण में, शिष्य समर्पित खड़ा हुआ॥
चर्या है निर्दोष तुम्हारी, बाल शिष्य बहु प्यारे हैं।
आचारज की पदवी देता, ये शुभ भाव हमारे हैं॥8॥

ॐ ह्रूं आचार्य-पद-प्रतिष्ठापित-श्रीपुष्पदंत-गुरुवे नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नामगुण धारी सन्त

तरुण तपस्वी प्रज्ञा धारी, नित प्रसन्न अरुँणाभ लिए।
व्रताचरण की सौरभ से मन, पुलकित होकर साध लिए॥
दुखहर्ता सुख कर्ता गुरुवर, समदृष्टा अतिशय योगी।
महातपस्वी पतितोद्धारक, युग प्रमुख जिन अनुरागी॥9॥

ॐ ह्रूं अनेक-गुण-विभूषित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रवचन वाचस्पति

मधुरिम वाणी जन कल्याणी, दिव्य ध्वनि-सी खिरती है।
चिन्तन का आकाश लगे पर, गंगा जल सम गिरती है॥
वाणी सुनकर विमल सिन्धु ने, प्रवचन वाचस्पति कहा।
अर्घ चढ़ाकर करूँ वन्दना, पाने को शुभ मति यहाँ॥10॥

ॐ ह्रूं प्रवचन-वाचस्पति-पद-विभूषित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रद्धा लोक के देवता

भरी जवानी दीक्षा लेकर, नगर नगर विहार किया।
मुनि चर्या जिनवाणी चर्चा, करके जग उद्धार किया॥
उमड़ घुमड़ कर भक्त ये सारे, श्री चरणों में आते हैं।
श्रद्धा लोक के देव आप हो, कहकर अर्घ चढ़ाते हैं॥11॥

ॐ ह्रूं श्रद्धा-लोक-देवता-पद-विराजिता-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्भीक सन्त

शान्तिसागर मुनिराज की, पट्टावली क्रम से आई।
वीर कहो शिव धर्म कहो या, अजित सागर क्रम मन भाई॥
गुरु पत्र को पाकर गुरु ने, पारसोला विहार किया।
वर्धमान को पंचम पट्ट का, दीक्षा दे अधिकार दिया॥12॥

ॐ ह्रूं शान्तिसागर-परम्पराया-वर्धमान-सागर-पंचम-पट्टपदावसरे उत्कृष्ट-निर्भीक-सन्त-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परोपकारी सन्त

शान्त मूर्ति निर्ग्रन्थ दिगम्बर, करुणा धारी गुरु महान।
जन जन के हितकारी गुरुवर, सेवाभावी दे वरदान॥
बाल सुलभ ऋजुता शुचिता से, सौम्य सुधारस बरस रहा।
भक्त सदा गुरु कृपा दृष्टि को, चातक बनकर तरस रहा॥13॥

ॐ ह्रूं श्रेष्ठ-परोपकारी-सन्त-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वात्सल्य दिवाकर

हँसमुख है स्वभाव आपका, वात्सल्य से भरा हुआ।
पंथ वाद की बेड़ी तोड़े, जिनवाणी से खरा हुआ॥
पच्चीसों मुनि आचारज ने, दिल्ली में सम्मान दिया।
वात्सल्य दिवाकर पदवी देकर, गुरुवर का गुण गान किया॥14॥

ॐ ह्रूं वात्सल्य-दिवाकर-पद-विभूषित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रखर प्रवक्ता सन्त

प्रखर प्रवक्ता निराबाध हो, एक विषय घण्टों बोलें।
वाणी का लालित्य अनुपम, मन की गांठे सब खोलें॥
प्रश्नों का उत्तर अनुपम है, संशय तिमिर मिटाते हैं।
अद्भुत ओजस्वी वक्ता हो, प्रवचन कला सिखाते हैं॥5॥

ॐ ह्रूं प्रखर-प्रवक्ता-गुण-संमन्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नैसर्गिक प्रवचनकार

नैसर्गिक प्रवचन शैली है, अद्भुत चिन्तन सरस रहा।
न्याय तर्क और सिद्धान्तों से, श्रोताओं में बरस रहा॥
बड़े-बड़े वक्ता कवि लेखक, विस्मय से भर जाते हैं।
श्रद्धा से वे अभिभूत हो, नत मस्तक हो जाते हैं॥16॥

ॐ ह्रूं नैसर्गिक-वक्तव्य-गुण-सम्पन्न-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाकवि सन्त

अन्तरमन की चिन्तन धारा, कविता बनकर फूट रही।
शब्द छन्द लय ताल अनुपम, नित्य प्रशंसा लूट रही॥
शब्दांकन मनरंजन कविता, गूँगी व्यथा एक काव्य विशाल।
महाकवि गुरु पुष्पदंत की, काव्याञ्जलि पा हुए निहाल॥17॥

ॐ ह्रूं कवित्व-प्रतिभा-सम्पन्न-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लेखक सन्त

अल्प काल में शतक पुस्तकें, गुरुवर ने रच डाली हैं।
संबोधन संस्कार जगाता, होता ज्ञान उजाला है॥
उपदेशामृत पढ़कर कई ने, प्रवचन देना सीखा है।
अन्तरमन का कर प्रक्षालन, धर्म दयामय जीना है॥18॥

ॐ ह्रूं लेखन-प्रतिभा-सम्पन्न-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वचनसिद्धि धारक मुनिराज

जिनशासन सागर वर्धन को, चन्द्र कान्ति सम मुनि महान।
प्रतिवादी के तिमिर हरण को, सूर्य प्रभा सम तेज़ महान॥
नूतन नूतन संदर्भों की, चर्चा करते ज्ञानी है।
पुष्पदन्त गुरुराज पूजता, वचन सिद्धि के स्वामी है।19॥

ॐ ह्रूं वचनसिद्धि-धारक-जिनशासन-प्रभावक-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषिपरम्परा के गौरव

प्रज्ञा एवं प्रतिभा के तुम, प्रचण्ड सूर्य कहलाते हो।
संत शृंखला के ध्रुव तारे, जग में पूजे जाते हो॥
अन्तश्चेतना के संवाहक, पंथ वाद से दूर रहे।
भक्तों के सिर मोर गुरुवर, जन नयनों के नूर कहे॥20॥

ॐ ह्रूं ऋषि-परम्परा-गौरवान्वित-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तेजस्वी सन्त

यश की ऊँचाई को पाकर, जैन धर्म विस्तार किया।
कुछ निन्दक बन गुरु गरीमा को, वचनों से संहार किया॥
मैं साधक हूँ निन्दा बाधक, नहीं सत्य छिप सकता है।
तेजस्वी के सम्मुख आकर, चरण वन्दना करता है॥21॥

ॐ ह्रूं तेजस्वी सन्त परमन परिवर्तन समर्थकाय श्रीपुष्पदंत सागराचार्य परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भक्तोद्धारक सन्त

विमल सागर के विमल बाग में, पुष्पदंत सा फूल खिला।
भक्तो का है तारण हारा, दिव्य सन्त अनमोल मिला॥
सरस्वती के वरद पुत्र, अरुँ महावीर के लघु नन्दन।
पूजन वन्दन से मिट जाता, जीवन का सब आक्रन्दन॥22॥

ॐ ह्रूं विमल-सागरस्य-शिष्य-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पगिरि प्रणेता सन्त

महावीर के उपदेशों को, जन जन में फैलाया है।
सेवा शिक्षा संस्कृति का, सबको पाठ पढ़ाया है।।
भावों की उज्ज्वलतम धारा, पुष्पगिरि का पुष्प खिला।
भारत की धरती पर अनुपम, जैनों को पहचान मिला।।23।।

ॐ ह्रूं पुष्पगिरि-तीर्थ-प्रणेता-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कलयुग के महावीर

धन्य धन्य गुरु पुष्पदंत जी, कलयुग में दर्शन पाया।
महावीर की दिव्य ध्वनि को, तव वाणी से सुन पाया।।
चर्चा चर्या तेरी अनुपम, हर मन को भा जाती है।
प्रथम दरश में तेरे होकर, जीवन धन्य बनाती है।।24।।

ॐ ह्रूं कलिकाले-महावीरवत्-श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जाप- ॐ ह्रूं पुष्पदंत सागर गुरुवे नमः

दोहा

पुष्पदंत गुरुदेव को, वन्दन बारम्बार।
जयमाला गुणगान कर, करूँ आत्म उद्धार।।

जयमाला

जय पुष्पदंत गुरु सन्त आप, जय धर्म मार्ग के सूर्य आप।
जय पर उपकारी दिव्य रूप, जय करुणाधारी गुण अनूप।।1।।
जय श्रमण संस्कृति के नेता, जय त्याग रूप इन्द्रिय जेता।
जय रत्नत्रय धारी महान, जय धर्म धुरंधर ज्ञानवान।।2।।
जय जय जय जय गुरु पुष्पदंत, जय हो जय हो जय जैन सन्त।
जय जय जय जय गुरु पुष्पदंत, जय हो जय हो जय जैन सन्त।3।।

है कोमल पितु मथुरा माता, पर उनसे ना तेरा नाता।
जब उमर हुई छब्बीस साल, मुनि दीक्षा ले निज को सँभाल॥4॥
गुरु विमल सिन्धु ने दी दीक्षा, अपनी क्षमता से ली शिक्षा॥
फिर नगर नगर विहार किया, जैनागम को विस्तार दिया।5॥
गुरु जय हो जय हो जय तेरी, गुरु मेटो भव भव की फेरी॥
गुरु जय हो जय हो जय तेरी, गुरु मेटो भव भव की फेरी॥6॥
गुरु भारत भर में भ्रमण किया, सबने धर्मामृत श्रवण किया।
गुरु भवोदधि के तारक हो, गुरु भक्तों के उद्धारक हो॥7॥
गुरु दीर्घ तपस्वी तीरथ हो, तप त्याग की अद्‌भुत मूरत हो।
गुरु भ्रम के जाल हटाते हो, गुरु मोक्ष मार्ग प्रगटाते हो॥8॥
गुरु पुष्पदंत की जय बोलो, जय बोलो हिय के पट खोलो।
गुरु पुष्पदंत की जय बोलो, जय बोलो हिय के पट खोलो॥9॥
तुम पंच महाव्रत धारी हो, तुम क्षमा शील अवतारी हो॥
तुम संघर्षों में हँसते हो, तुम उपसर्गों को सहते हो॥10॥
तुम निस्पृह योगी ज्ञाता हो, तुम अपने भाग्य विधाता हो॥
तुम अद्‌भुत हो तुम अनुपम हो, तुम मम जीवन के दर्पण हो॥11॥
जय हो जय हो जय गुणवन्त, जय हो जय हो जय निर्ग्रन्थ॥
जय हो जय हो जय गुणवन्त, जय हो जय हो जय निर्ग्रन्थ॥12॥
जो भव्य निकट आ भक्ति करे, वह दिव्य ज्योति से शक्ति वरे।
मैं हूँ तेरा छोटा बालक, गुरु आप कृपा सिन्धु पालक॥13॥
गुरु तेरी पूजा करता हूँ, अपने दुर्गुण को तजता हूँ।
गुरु वरद हस्त सिरपर रख दो, मुझको निज संयम से भर दो॥14॥
जय संयमधारी ज्ञानवन्त, जय वर्तमान के श्रेष्ठ सन्त।
जय संयमधारी ज्ञानवन्त, जय वर्तमान के श्रेष्ठ सन्त।15॥
मैं अर्घ चढ़ा विनती करता, तेरे पथ चलकर ही तरता।
मैं शक्ति हीन अनुरागी हूँ, तुम शक्तिवान वैरागी हो॥16॥
मम अन्तर मन प्रक्षाल करो, मम जीवन को खुशहाल करो।
गुरु जयकारा तेरी करता, 'सौरभ' सुरभित हो भव तरता॥17॥

जय कृपा निधान दिव्य संत, जय जय गुरुवर श्री पुष्पदंत।।
जय कृपा निधान दिव्य संत, जय जय गुरुवर श्री पुष्पदंत।।18।।

दोहा

महाश्रमण महावीर के, प्रतिनिधी हो आप।
'सौरभ सागर' नित नमें, हरने जग संताप।।

ऊँ ह्रूं श्रीपुष्पदंत-सागराचार्य-परमेष्ठिने नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी का अर्घ्य

अरमानों की थाली जोयी, नयनों में जल भर लाया।
सुनहिल भावों की केशर ले, शब्द पुष्प तन्दुल लाया।।
तन नैवेद्य बना मन दीपक, मद यौवन की धूप बना।
तव पद में अर्पित सिर फल, पूजन का यह अर्घ बना।

दोहा

तन मन धन अर्पण किया, रहा न कुछ भी शेष।
अष्ट द्रव्य से पूज कर, पाऊँ जिनका भेष।।

ॐ ह्रूं श्री 108 गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-जी-महाराज-अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा।

आचार्यश्री 108 सौरभ सागर जी का अर्घ्य

जल से धुलते कर्म हमारे, चन्दन से मिलती शीतलता।
पुँज चढ़े जब गुरु चरणों में, पुष्प सुगन्धित है देता।।
नैवेद्य चढ़ाकर क्षुधा नशाऊँ, निज ज्ञान का दीप जलाऊँ मैं।
धूप चढ़ाकर कर्म जलाऊँ, फल से मोक्ष फल पाऊँ मै।।।
आठों द्रव्यों को एक मिलाकर, गुरुवर के गुण गाऊँ मैं।
भव भव के सब पाप नशें, अरिहंत अवस्था पाऊँ मैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार-प्रणेता-ज्ञानयोगी-आचार्यश्री-सौरभसागर-जी गुरुदेव-चरणकमलेभ्यो अनर्घ्य पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु पुष्पदंत चालीसा

दोहा

चरण कमल मस्तक नवा, गुरु को करता याद।
चालीसा आंरभ करूँ, सुनो गुरु फरियाद॥
भटक चुका संसार में, आया तेरे पास।
तड़पन इस संसार की, कर दो गुरुवर नाश॥

चौपाई

जय श्री पुष्पदंत गुरुदेवा, तुमरे इष्ट पद्मप्रभु देवा।
हम सब भक्त तुम्हें हैं ध्याते, तुम भक्तों के कष्ट मिटाते॥
जन्म लिया है जिला भण्डारा, ग्राम गोंदिया उसमें प्यारा।
माँ मथुरा के राज दुलारे, कोमल पितु के हो सुकुमारे॥
एक जनवरी जन्मतिथि है, तेईस वर्ष में प्रज्ञा जगी है।
ब्रह्मचर्य व्रत धार लिया है निज आतम उद्धार किया है॥
क्षुल्लक एलक की ली दीक्षा, माह अठारह पाई शिक्षा।
गर जग से छुटकारा चाहो, भेष दिगम्बर को अपनाओ॥
वाक्य सुना जब तुमने इतना, सोचा जल्दी दीक्षा लेना।
भाव उमड़कर बाहर आये, विमल सागर के दर्शन पायें॥
विमल सिन्धु ने जैसे देखा, दीक्षा का संदेशा भेजा।
झट बोले गुरु दीक्षा दे दो, मेरी नैया तुम ही खेदो॥
निमित्त ज्ञान से इनको लखकर, बना दिया तुमको दीगम्बर।
जैसे ही मुनि दीक्षा पाई, स्वानुभूति की अलख जगाई॥
अनुभूति के होते गुरुवर, पहुँचे ज्ञान के उच्च शिखर पर।
तुमने ज्ञान प्रचार किया है, शुद्ध शास्त्र आधार लिया है॥
अंजुलि भर गुरुवर तुम लेते, दरिया भर कर हमको देते।
रसना का तुमने स्वाद है छोड़ा, ज्ञान ध्यान से नाता जोड़ा॥
प्रवचन वाचस्पति कहलाए, विमल सिन्धु से मान है पाए।
अन्तस चेतना के संवाहक, श्रमण संस्कृति के उत्थापक॥

युवा वर्ग गुरु तुमको चाहे, तुम्हरे पीछे हरदम भागे।
जय जय नाद से गगन गुँजावे, तेरे गुण गौरव को गावे॥
प्रज्ञश्री को जन्म दिया है, जपने मंत्रित जाप्य दिया है।
पद्म प्रभु का नाम जपाते, भूत-प्रेत को दूर भगाते॥
ऋषिमण्डल का जाप लिया है, कई मंत्रों को सिद्ध किया है।
मंत्रों के ज्ञाता ज्योतिषी, समाधान के ज्ञान मनीषी॥
बाल संघ के हो तुम नायक, जिन आगम के हो तुम ज्ञायक।
पुष्प गिरी का तीर्थ बनाये-सबमें सेवा भाव जगायें॥
हो गुरुवर तुम अतिशयकारी, तुम दुःख के भंजन अधिकारी।
एक दिवस की बात बताता, पुष्पदंत महिमा मैं गाता॥
छत्तीसगढ़ में किया प्रवेश, हुई प्रभावना जहाँ विशेष।
सुन्दरग्राम है जसपुर नगरी, पहुँचे तुम ले ज्ञान की गगरी॥
बड़े-बड़े अधिकारी आकर, प्रवचन सुनते ध्यान लगाकर।
बौद्ध भिक्षु को लाये एस.पी., लकवा का था भारी रोगी॥
किसी तरह दर्शन को आया, तन में इक झटका-सा पाया।
गुरु आज्ञा से झूला झुलाया, रोग हाथ का दूर भगाया॥
कण्ठ रोग भी दूर किया है, जब तुमने आशीष दिया है।
शान्तिनाथ विधान कराया, लकवा हाथ का शीघ्र पलाया॥
यह अतिशय गुरु तेरा ही था, तव चरणन झुकता मम माथा।
चालीसे को हम सब गायें, पुष्प गुरु को शीश झुकायें॥

दोहा

नित इकतीसहि बार, पाठ करें इकतीस दिन।
खेय सुगन्ध अपार, ध्यान हृदय में लाय के॥
रोग शोक सब दूर हों, पास पाप आवें नहीं।
जीवन में घुल जाय, 'सौरभ' की सुरभि गुरु॥

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रूं पुष्पदंत गुरुवे नमः

गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी की आरती

ओम जय पुष्पदंत स्वामी, स्वामी जय पुष्पदंत स्वामी
तुम हो पाप निवारक-2, पुण्य वृद्धि दानी,
ओम जय पुष्पदंत स्वामी॥1॥
गोंदिया नगर में जन्म लिए थे, हो करुणाधारी,
स्वामी हो करुणाधारी,
हमको पार करो तुम-2, तव गुण है भारी,
ओम जय पुष्पदंत स्वामी॥2॥
विमल सागर से दीक्षा पाई, विद्या ज्ञान दिया,
स्वामी विद्या ज्ञान दिया,
गुरु द्वय चरण में रहकर-2, सेवा खूब किया,
ओम जय पुष्पदंत स्वामी॥3॥
गुरु तुम दीपक हम हैं बाती, धरम की ज्योति जले,
स्वामी धरम की ज्योति जले,
श्रद्धा घृत को लेकर-2, आरती तेरी करें,
ओम जय पुष्पदंत स्वामी॥4॥
पंच महाव्रत धार के तुमने, जग से मुख फेरा
स्वामी जग से मुख फेरा,
राजा हो या भिखारी-2 सब पर प्रेम, तेरा
ओम जय पुष्पदंत स्वामी॥5॥
आरती करते तेरी, दूर करो तम को,
स्वामी दूर करो तम को दूर,
'सौरभ' सेवक तेरा-2, पार करो उसको
ओम जय पुष्पदंत स्वामी॥6॥

श्री ऋषिमण्डल स्तोत्र

हृदय कमल में अर्हत पद का स्थापन जो है करना,
कार्मन काठ जलावन कारण अग्नि ज्वाला है बनना।
निर्मल है वह निर्मल करता अर्हत पद का दाता,
बारम्बार नमूँ मैं उनको, पाऊँ अक्षय साता।
हृदय कमल की आठ पँखुड़ी उनमें क्रम से रखना,
अर्हत, सिद्ध आचार्य उपाध्याय, साधु सर्व विचरना।
सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र उचरना,
ऐसे आठों पूज्यनीय को, चित में फिर फिर धरना।
ऊँ बीजाक्षर प्रथम उचारै, नमः पल्लव करिये,
ध्यान धरै इन आठों पद का, आनन्द उर में भरिये।
अरहंत पद का ध्यान किये से, सिर की रक्षा होवे,
सिद्ध समूह जपन करने से, मस्तक रक्षित होवे।
सूरि सुगुण मन में ध्याने से, नेत्र सुरक्षित होवे,
चौथे पद के गुण चिंतन से, घ्राण सुरक्षित होवे।
मुख की रक्षा करे साधुगण, दर्शन गर्दन रक्षै,
नाभि रक्षे सप्तम पद, जो सम्यग्ज्ञान सुदक्षै।
सम्यक्चारित्र सर्व अंग को, पाद पर्यन्त सुरक्षे,
ऐसे सकलीकरण करन से, होवे पूजक अक्षै।
ऋषि मण्डल यह पूजन भारी, इसको विधि से करिये,
विघ्नविनाश करें सुखदाता, श्री ब्रह्मचारी उचरियें।

सब द्वीपों के मध्य जम्बूद्वीप बसे,
उसकी है आठ दिशा पूरब आदि लसे।
अर्हतादि पद आठ उनमें राजत हैं,
करिये उनका ध्यान पाप पलावत है।
मध्य सुदर्शन मेरु कंचनमय सोहे,
उपरि सिंहासन माहि अक्षर ह्रीं मोहे।

उनमें चौबीस जिनेश उनके गुण भारी,
अक्षय निर्मल शांत ताप जाड्य हारी।
निरहंकार निरीह सार, सार गुण सोहे,
सौम्य शुद्ध शुभ रूप तीन लोक मोहे।
तीन लोक के स्वामी यातें राजस है,
कर्म घातिया चूरे यातैं तामस है।
सदगुण से भरपूर सात्विक सोहत है,
ज्ञान तेज से सूर्य भ्रमतम खोवत है।
रूपगंध रस वर्ण इनसे दूर रहे,
तो भी है साकार समरस पूर रहे।
पर को दिया त्याग निज रस में पागे,
परमौदायिक देह आतम गुण जागे।
चूरे है सब कर्म तन को है छोड़ा,
निज रस पी संतुष्ट पर से मुँह मोड़ा।
करी कालिमा दूर आकांक्षा पूरी,
संशय रहा न लेश सब आशा पूरी।
ईश्वर ब्रह्मा बुद्ध ज्योति रूप खड़े,
शाश्वत सिद्ध स्वरूप सब में देव बड़े।
लोकालोक प्रकाश करते नाहि थके,
ऐसे श्री ह्रीं देव मेरे मन में धरे।
एक वर्ण दो वर्ण तीन वर्ण धारी,
चार पाँच हैं वर्ण सब के अधिकारी।
ऋषभादिक चौबीस तीर्थंकर सब ही,
ध्याओ उनको नित्य जैसे निम्न कही।
अर्ध चंद्र आकार ह्रीं का नाद कहा,
उसका वर्ण है श्वेत जैसे चन्द्र महा।
उसमें ध्याओ देव श्वेत वर्ण वाले,
चन्द्रप्रभु पुष्पदंत सब के रखवाले।
श्याम वर्ण की देह बिंदी की कीजै,

उसमें लिखिये नेमि मुनिसुव्रत कीजै।
मस्तक ऊपर भाग लाल वर्ण सोहे,
पद्मप्रभु वासुपूज्य अरुँण वर्ण मोहे।
शिर संलीन ईकार नीलम वर्ण कहा,
सुपार्श्व पार्श्व महाराज थापूँ पूज्य महा।
सोलह श्रीजिन देव कंचनमय देहा,
वे-ह-र मध्य लिखेय होवे सुखगेहा।
रागद्वेष मद मोह जीते इन सबने,
मायालीन में ये राजत हैं सब रे।
इनका सदा ध्यान किये जो ज्वाला निकले,
उनमें वेष्ठित देह मेरी जो उजले
तब नाही विषधर जाति मेरा निष्ट करे,
सेवक होकर वेग मेरे पाँव परे।
श्री ऋषिमण्डल मध्य ह्रीं का परिकर है,
उसमें रक्षित देह मेरी सुखकर है।
तब नाहिं नागिन जाति मेरा निष्ट करे,
सेवक होकर वेग मेरे पाँव परे।
सर्वऋद्धि के ईश अर्हत गणधर हैं,
उनके तेज से लोग वेग सब ही व्याप्त है।
उनका ध्यान किये परम सौख्य होगा,
विलय जायेंगे दुःख मेरे अति वेगा।
पाताल, लौकिक देव, मध्य लोकवासी,
निर्जर ऊरध लोक सब विमानवासी।
तुम सब ही जिन भक्त साधर्मी भाई,
करना मेरी सहाय सुनिये मनलाई।
मुनिवर है जगमाहिं अवधि श्रुतधारी,
विक्रिया चारण आदि सब ही ऋद्धिधारी।
मुझ पर कीजै कृपा तुम रक्षक सबके,
अतएव पूजूँ पायें विघ्न हरो जनके।

आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी की पूजा

स्थापना

सौरभ सागर गुरु को, नमन हो बारम्बार।
श्रद्धा पुष्प चढ़ा रहे, करना तुम उद्धार।।
हृदय कमल पर आ तिष्ठो, सौरभ सागर महाराज।
जिह्वा गुण गाती रहे, हो मुनिवर सरताज।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज अत्र अवतर-अवतर संवौष्ट आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल

रगड़ रगड़ कर ये तन धोया, मन का मैल ना धो पाए।
इसीलिए तो गुरुवर क्षीरोदधि, से जल लेकर आए।।
निर्मल जल अर्पित करते हैं, जन्म जरामृत नष्ट करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन

तरह तरह के लेप किए पर, तन संताप ना दूर हुआ।
जितना इसका शमन किया यह, उतना ही फिर और बढ़ा।।
मलयागिर चन्दन अर्पित तुमको, भव संताप को नष्ट करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में भवताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत

संसार दुःखों से भरा हुआ, नहीं मिलता मुझे किनारा है।
मोह माया से जकड़ा जीवन, पर ना कोई सहारा है।।

उज्जवल अक्षत अर्पित तुमको, इनको तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अक्षय पद प्राप्ताये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प

काम वेग से घिरे हुए हैं, कैसे बन्धन तोड़े हम।
तरह तरह के इत्र लगाए, इन्द्रीय दास बने हैं हम॥
कोमल पुष्प समर्पित तुमको, काम बाण को नष्ट करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नैवेद्य

नाना मिष्ट पकवान डकारे, फिर भी क्षुधा ना शान्त हुई।
जिव्हा के वश होकर मैंने, भक्ष अभक्ष की सुधि खोई॥
सरस नैवेद्य अर्पित तुमको, क्षुधा रोग को ध्वस्त करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में क्षुधा रोग विनाशनाय-नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप

अज्ञान तिमिर ने हमको घेरा, कैसे मंजिल पाएंगे।
तेरे ज्ञान की ज्योति पाकर, सहज पार हो जाएंगे॥
ज्ञान से ज्ञान की ज्योति जलती, दीपक तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप

अष्ट कर्म की दलदल में हम, हरदम फंसते जाते हैं।
पाप कर्म हम करते रहते, फल से नहीं घबराते हैं॥

धूप समर्पित तव चरणों में, अष्टकर्म का दहन करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल

लौंग बादाम और किशमिश लेकर, तेरे द्वारे आए हैं।
मोक्ष के फल का स्वाद बता दो, इच्छा मन में लाए हैं॥
फल अर्पित है चरण तुम्हारे, मुक्ति रमा का वरण करूँ।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में मोक्ष फल प्राप्ताये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद्य, दीप धूप फल ले आए।
तब चरणों में अर्घ चढ़ा के, अष्टम वसुधा पा जाए॥
हम अर्घ समर्पित करते हैं, गुरुवर तुम स्वीकार करो।
मेरे सौरभ सागर गुरुवर, मम कष्टों को दूर करो॥

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अनर्घ-पद-प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **भव भव से भटके फिरे, कोई ना तारनहार।**
सौरभ सागर गुरु मेरे, तुम ही करो उद्धार॥

जयमाला

लय (दे दी हमें आजादी....)

सौरभ सागर जी देव, गुरुदेव हमारे।
करते हैं भव से पार, गुरुदेव हमारे॥
माँ चन्द्रप्रभा कोख में, जब आप थे आए।
शुभ स्वप्न देख माता भी, फूली ना समाए॥

गज, सर्प, आग, सूर्य भी, देख लिया था।
अद्वितीय पुत्र जन्मेगा, ये जान लिया था।।1।।

जसपुर में गुरुदेव, तुमने, जन्म लिया था।
जसपुर की माटी को भी, तूने धन्य किया था।।
गुरू पुष्पदंत संघ, जसपुर में पधारे।
बालक सुरेन्द्र पुष्प संग, चल दिया प्यारे।।2।।

तपअग्नि में बारह वर्ष, गुरूदेव तपाया।
मैं भी बनूँ तब सम, गुरु ये मन में है भाया।।
आचार्य गुरुदेव ने, सौरभ बना दिया।
मुनिबाने से गुरुदेव ने, तुमको सजा दिया।।3।।

बाली उमर से सौरभ जी, अमृत पिला रहे।
आहत भी राहत पाके, आशीष पा रहे।।
संस्कार अलख देव, जन जन में जगाए।
संस्कार प्रणेता तभी, गुरुदेव कहलाए।।4।।

सृजन किया गुरुदेव ने, रचना कई लिखी।
सिद्धान्त शतक एक है, नायाब नव कृति।।
जिसने भी गुरुदेव का, साहित्य पढ़ा है।
जैनत्व बोध करके, उसका पाप कटा है।।5।।

बच्चों व शिक्षकों को, चमड़ा मुक्त किया है।
सौरभाँचल तीर्थ का, उपहार दिया है।।
हिसार की नसिया का, भी उद्धार है किया।
मनहर पारस क्षेत्र नाम, उसको दे दिया।।6।।

भू गर्भ में दबे थे, आदि पार्श्व अर वीरा।
अपने ज्ञान योग से, तुम जान लिया था।।
ज्ञान योगी देव गुरूदेव कहाए।
गुरूदेव के जयकार से गगन गुंजाए।।7।।

झज्जर के ग्राम झाडली में वीर थे प्रकटे।
ना देगे वीर मूर्त, ग्रामवासी अड़ गए।।
भक्ति की शक्ति से, महावीर बुलाए।
मंशा पूर्ण वीर, महावीर कहलाए।।8।।

पुष्पगिरी तीर्थ अप्रैल दश महा।
मेला लगा दृश्य अनुपम रहा महा।।
चारों दिशाएं गुंज उठी नमस्कार से।
आचार्य पद प्रतिष्ठा हुई जयजयकार से।।9।।

हम भी तो तेरे दर पे, अरदास लाए हैं।
दर्शन तिहारे मिलते रहे, प्यास लाए हैं।।
जीवन में मेरे 'आशा' की, तुम ज्योत जगा दो।
सुना है तेरा नाम, मेरी बिगड़ी बना दो।।10।।

ॐ ह्रूं आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज के चरणों में अनर्घ पद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **सौरभ सागर गुरु का, करूँ हमेशा ध्यान।**
भक्त की हर श्वास में, सौरभ सागर नाम।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

आचार्य श्री सौरभ सागरजी का अर्घ

पिच्छी लेकर नग्न रहे, और केश लोंच जो करते हैं।
तन श्रृंगार रहित वह होकर, बाईस परिषह सहते हैं।।
स्व आत्म कल्याण करे, और पर को मार्ग बताते हैं।
सुलझाते हैं जो मन की ग्रंथियाँ सौरभ सागर जी कहलाते हैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार-प्रणेता-आचार्यश्री 108 सौरभ-सागर-जी गुरुदेव-चरण कमलेभ्यो अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी
आचार्य श्री 108 सौरभ सागर चालीसा

मनमंदिर में आन बसे, सौरभ सागर महाराज।
धर्म की राह दिखा दई, और सँवारे काज॥
ऐसे गुरु का यदि रहे, भक्त के सिर पर हाथ।
रोग शोक सब दूर रहे, सुख की हो बरसात॥

सौरभ सागर गुरु हमारे, भक्तों के सब कष्ट निवारे।
ये गुरुवर है अन्तर्यामी, मन की सारी बाते जानी॥
मनमोहक मुस्कान तुम्हारी, छवि तुम्हारी है मनहारी।
चन्द्रप्रभा जी की कोख में आए, शुभ लक्षण उनको दर्शाए॥
उगता हुआ इक सूरज देखा, सर्पो का एक जोड़ा देखा।
इक जंगल में आग भी देखी, हाथी की इक जोड़ी देखी॥
श्री पाल जी को स्वप्न बताए, फल जाना तो बहु हरषाए।
पुत्र रत्न इक घर आएगा, दावानल सा यश पाएगा॥
मस्त हस्ती सम भ्रमण करेगा, सूरज सम जग में चमकेगा।
बाबा की आँखों का तारा, सुरेन्द्र नाम लगता था प्यारा॥
गुरु पुष्प संघ जसपुर आया, इस बालक का भाग जगाया।
अद्भुत प्रतिभा देखी तुझमें, ज्ञानयोगी इक छिपा था तुझमें॥
पिता से तुमको मांग लिया था, मात पिता ने सहर्ष दिया था।
तप अग्नि में तुम्हें तपाया, बारह बरस का समय बिताया॥
क्षमावाणी का शुभ दिन आया, दीक्षा धारूँ ये था भाया।
21 सितम्बर दिन पुण्यशाली, होती गुरु की दीक्षा दिवाली॥
चहुँ दिशि अम्बर बने तुम्हारे, वीतरागी मुद्रा जब धारे।
वाणी तेरी शीतल चन्दन, शीघ्र मिटाती मन का क्रन्दन॥
जिस नगरी भी कदम बढ़ाए, अतिशय अपने खूब दिखाए।
धर्म की ऐसी अलख जगाई, 'संस्कार प्रणेता' उपमा पाई॥
जेल में जो उपदेश सुनाए, मद्य माँस से लोग छुड़ाए।
जब बच्चे उपदेश हैं सुनते, शहद ब्रैड व चमड़ा तजते॥
जिस नगरी भी किया चौमासा, भक्तों के मन भर दी आशा।

निर्बल तुझसे बल पा जाए, वीराने हरियाली पाए।।
जंगल में मंगल करते हो, संकट सारे तुम हरते हो।
जिस पर होती कृपा तुम्हारी, उसकी तो किस्मत है सँवारी।।
एक प्रेरणा तुमसे पाई सौरभाँचल की नींव धराई।
सौरभाँचल एक तीरथ प्यारा, नव जिनग्रह का देख नजारा।।
वृहद आदि पद्मासन प्रतिमा, नीलाम्बर का लगा चँदोवा।
श्रुत स्कन्ध मंदिर बनवाया, द्वादशांग का मान बढ़ाया।।
रत्न चौबीसी मन को भाए, देख देख के हिय हरषाए।
सूनी थी हिसार की नशिया, पर भू भीतर दबी थी निधिया।।
अपने ज्ञान ध्यान से जाना, त्रय जिनदेवा भीतर जाना।
हाथों से मिट्टी खुदवाई 'पार्श्व' 'आदि' 'वीरा' छवि पाई।।
जयकारों से गगन गुँजाए, ज्ञानयोगी गुरुदेव कहाए।
'मनहर पारस क्षेत्र' कहाया, सहस्त्र कलश से न्हवन कराया।।
मंशापूर्ण श्री महावीरा, सेवा भाव जगावे धीरा।
जीवन आशा नाम पुकारा, विकलांगों का बने सहारा।।
ज्ञानी मन चिंतन करता है, हर पल काव्य ग्रन्थ लिखता है।
धर्म गगन में करे विहारा, "सिद्धांत शतक" आगम है प्यारा।।
सब शूलों की सेज उठाते, जैनत्वो का बोध कराते।
पापों के दहकते अंगारे, प्रेरक प्रवचन बुझाते सारे।।
फैशन एक अभिशाप बताया, गर्भपात से सबको बचाया।
जैन विधान सदा करवाते, भक्तों के शुभ भाव जगाते।।
ख्याति लाभ की नहीं कामना, पूजा की भी नहीं चाहना।
विज्ञापन से दूर ही रहते, चर्या सावचेत हो करते।।
आगम के रत्नाकर गुरुवर, शान्त सौम्य छवि सुन्दर गुरुवर।
आशीर्वाद गुरु का फलता, जीवन सहज सरल हो चलता।।
तीर्थराज सम्मेद शिखर है, श्री सौरभांचल का परिसर है।
सहस्र वर्ष प्राचीन है प्रतिमा, अतिशयकारी पारस महिमा।।
10 अप्रैल का शुभ दिन आया, पुष्पगिरी में उत्सव छाया।
रवि पुष्य नक्षत्र कहाया, पुष्पदन्त ने सूरी बनाया।।
देश विदेश से यात्री आये, दृश्य देखकर अति हर्षाये।

सौरभ गुरु को शीश नवाया, धन्य धन्य सौभाग्य जगाया।।
जिस धरती पर कदम बढ़ाए, वो माटी चन्दन बन जाए।
घर घर ज्ञान के दीप जलाए, अज्ञान तिमिर मन का हट जाए।।
दर्शन पा मन पुष्प खिला है, वर्द्धमान का दर्श मिला है।
जब से तेरा साथ मिला है, 'हम-सब' को भगवान मिला है।।

दोहा– **सौरभ सागर चालीसा, मन से जो भी ध्याय।**
त्याग धर्म बढ़ता रहे, गुरु अनुकंपा पाए।।
गुरुवर तेरे चरण में, नमन हो बारम्बार
पापों का क्षय हो मेरा, भव से हो जाऊँ पार

(9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें)

जाप्य मंत्र– ॐ ह्रूं सौरभ सागर गुरुवे नमः।

आरती आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी की

(लय - तन डोले, मन डोले ...)
सौरभ सागर की, गुण आगर की
शुभ कंचन दीप सजाय के, आज उतारूँ आरतिया
माता चन्द्रप्रभा जी के जाये, श्रीपाल जी के सुत कहलाये
पुष्पदंत जी की बगिया से, ये कोमल पुष्प है आये
सुगन्धित कोमल पुष्प है आये
गुरु की सुरभि से सुरभित होकर कंचन दीप सजाय के ...
गुरु की छवि है इतनी निराली मन को बहुत लुभाती
महिमा गुरुवर के वचनों की जन-जन को हर्षाती
जय गुरुवर जन-जन को हर्षाती
इनके चरणन शत् शत् वन्दन शुभ कंचन दीप सजाय के...
जो भी इनकी शरण में आए, सब संकट कट जाये
हम भी भटके हैं जन्मों से हमको भी पार लगाये
हो जय गुरूवर, हमें भी पार लगाये
यह विनती करें तोसें अरज करें शुभ कंचन दीप ...

अर्घ्यावली

समुच्चय अर्घ

अष्ट द्रव्य का अर्घ थाल लें, श्रद्धा से अर्पित करता।
है अनर्घ पद पावन तेरा, पाने मन उलसित होता।।
परमेष्ठी अरुँ माँ जिनवाणी, विद्यमान बीसों मुनिराज।
तीस चौबीसी सिद्ध भूमि नम, पूजूँ अकृत्रिम जिनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठी समूह द्वादशांगमय जिनवाणी समूह-विद्यमान बीस तीर्थंकर समूह-तीर्थंकर मुनिराज की अढ़ाई द्वीप सम्बन्धी मोक्ष भूमि समूह तीस चौबीसी तीर्थंकर अकृत्रिम जिनबिम्ब समूह अनर्घ्य पद प्राप्ताय **अर्घम्** निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीसी अर्घ्य

ऋजु भावों का शुभ जल लेकर, समता का चन्दन लाया।
ध्यान अवस्था के अक्षत ले, भक्ति पुष्प मन खिलवाया।।
चाहत की नैवेद्य चढ़ाकर, श्रद्धा दीप जलाऊँगा।
अष्ट मदों की धूप समर्पित, निराकार फल पाऊँगा।।
अष्ट द्रव्य का अर्घ बनाकर, चरणों में अर्पित करता।
चौबीसी की पूजा करके, अन्तर मन हर्षित होता।।

ॐ ह्रीं ऋषभादि-महावीरपर्यन्त-चतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ भगवान का अर्घ्य

आदिनाथ प्रथमेश जिन, धर्म कर्म दातार।
भव वारिधी से पार कर, मेटो मम संसार।।

ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अनर्घपद प्राप्ताये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथ भगवान का अर्घ्य

धर्मधुरा धारी प्रभु, धर्म बढ़ावें रोज।
अजितनाथ भगवान के बन्दूँ चरण सरोज।।

ॐ ह्रीं श्री-अजितनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री संभवनाथ भगवान का अर्घ्य

संभव सम भव अन्त हो, पाऊँ सिद्ध स्वभाव।
भावों में समभाव हो, तजूँ विकारी भाव।।

ॐ ह्रीं श्री-संभवनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अभिनन्दननाथ भगवान का अर्घ्य

अभिनन्दन वन्दन करूँ, क्रन्दन कर्म नशाय।
जग बन्धन को तोड़कर, सिद्धालय को पाय।।

ॐ ह्रीं श्री-अभिनन्दननाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुमतिनाथ भगवान का अर्घ्य

मिथ्यावाद को दूर कर, स्याद्वाद प्रगटाय।
दुर्बुद्धि दुर्ध्यान तज, सुमतिनाथ शिर नाय।।

ॐ ह्रीं श्री-सुमतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पद्मप्रभ भगवान का अर्घ्य

पद्मासन बैठे प्रभू, आतम पद्म खिलाय।
पद्म खिले निज ध्यान का, पद्म प्रभु सिर नाय।।

ॐ ह्रीं श्री-पद्मप्रभु-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

वीतराग निज ज्ञान में, झलके तीनों लोक।
तत्व प्रकाशक महामुनि, चरण सुपारस धोक।।

ॐ ह्रीं श्री-सुपार्श्वनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभु भगवान का अर्घ्य

अखिलेश्वर हे महाव्रती, तीर्थ प्रवर्तक आप।
धवल वर्ण तन आत्मा, चन्द्र प्रभु निष्पाप।।

ॐ ह्रीं श्री-चन्द्रप्रभु-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पुष्पदन्त भगवान का अर्घ्य

भव भंजक भगवान हैं, पुष्पदंत शुभ नाम।
मगर चिह्न तन श्वेत है, शत शत करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री-पुष्पदन्त-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शीतलनाथ भगवान का अर्घ्य

धर्मामृत का दान दे, शीतल शिवपद पाय।
मम आतम शीतल करे, छोड़े विषय कषाय।।

ॐ ह्रीं श्री-शीतलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री श्रेयांसनाथ भगवान का अर्घ्य

जय जय श्रेयांशम तव गुण पासं, कर्म विनाशं भक्ति करम्।
पावन पद बन्दों जय जिन चन्दों, कृपा करिंदो शान्ति प्रदम्।।

ॐ ह्रीं श्री-श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वासुपूज्य भगवान का अर्घ्य

पाँचों कल्याणक महा, चम्पापुर में पाय।
बाल ब्रह्मचारी प्रथम, वासुपूज्य जिनराय।।

ॐ ह्रीं श्री-वासुपूज्य-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विमलनाथ भगवान का अर्घ्य

बाहर भीतर स्वच्छता, विमल अमल गुणवन्त।
अर्घ चढ़ाकर पूजता, पाने पद अरहन्त।।

ॐ ह्रीं श्री-विमलनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अनन्तनाथ भगवान का अर्घ्य

सुख अनन्त पाया प्रभु, कर कर कर्मन अन्त।
अर्घ चढ़ा वन्दन करूँ, अनन्तनाथ भगवन्त।।

ॐ ह्रीं श्री-अनन्तनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री धर्मनाथ भगवान का अर्घ्य

ध्वनि सुनि ध्रुवधाम की, धैर्य धर्म प्रगटाय।
ध्याता बन निज ध्येय को, धर्मनाथ सम ध्याय।।

ॐ ह्रीं श्री-धर्मनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शांतिनाथ भगवान का अर्घ्य

जय त्रिभुवन नायक आतम ज्ञायक, कर्म विनाशक शान्ति नमो।
जय शिवपुरवासी ज्ञान प्रकाशी, धर्म विकासी शान्ति नमों।।

ॐ ह्रीं श्री-शांतिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री कुंथुनाथ भगवान का अर्घ्य

कर्म जहर निज आत्मा, मरण देय भटकाय।
भक्ति कुन्थुनाथ की, सर्व जहर विनशाय।।

ॐ ह्रीं श्री-कुन्थुनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अरहनाथ भगवान का अर्घ्य

दर्पण में मुख रूप लख, भूला आत्म स्वरूप।
अरहनाथ सर्व दर्प हर, पाया चिन्मय रूप।।

ॐ ह्रीं श्री-अरहनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मल्लिनाथ भगवान का अर्घ्य

हे लेश्या तीता भव्या मीता, परम पुनीता मल्लि जिनेश।
जय आत्म विहारी बाल ब्रह्मचारी, आरती उतारी भक्ति विशेष।।

ॐ ह्रीं श्री-मल्लिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान का अर्घ्य

शत इन्द्रों ने भक्ति कर, नाशा भव भटकाव।
मुनिसुव्रत की अर्चना, देवे निज स्वभाव॥
ॐ ह्रीं श्री-मुनिसुव्रतनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नमिनाथ भगवान का अर्घ्य

नमिनाथ नमता रहूँ, नम्र भाव मन धार।
अहंकार सब मेट कर, धारूँ शुद्ध विचार॥
ॐ ह्रीं श्री-नमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नेमिनाथ भगवान का अर्घ्य

पशु बन्धन को देखकर, धार लिया वैराग्य।
सर्वदर्शी नेमी प्रभु, नमन जगावे भाग्य॥
ॐ ह्रीं श्री-नेमिनाथ-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

क्षायिक नव लब्धि महा, योग निरोध कर पाय।
पार्श्व प्रभु की वन्दना, पाऊँ निज स्वभाव॥
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर स्वामी का अर्घ्य

शासन नायक वीर जिन, अनेकान्त सरताज।
समवशरण सन्देश दे, पाया मुक्ति राज॥
ॐ ह्रीं श्री-महावीर-जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मंशापूर्ण महावीर स्वामी का अर्घ्य

श्रद्धा का जल कर में लेकर भक्ति का चन्दन लाया।
अक्षत कुसुम चरुवर पावन दीप धूप वन्दन भाया॥

सिद्ध शिला फल चाह लिये प्रभु आठों द्रव्य चढ़ाऊँगा।
श्री मंशापूरण महावीर की पूजा कर सुख पाऊँगा।।

ॐ ह्रीं श्रीमंशापूर्ण महावीर जिनेन्द्राय अनर्घ्य-पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस निर्वाण भूमि अर्घ्य

तीरथ है सम्मेद शिखर जी, बीस पधारे श्री निर्वाण।
आदिनाथ कैलाशगिरी से, वासुपूज्य चम्पापुर धाम।।
नेमिनाथ गिरनार शिखर से, निराकार पद पाया है।
पावापुर महावीर प्रभु ने, आठों कर्म नशाया है।।
तीर्थंकर चौबीसो जिनवर, परम धाम को पाये हैं।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाकर श्रद्धा शीश झुकाये हैं।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-निर्वाणस्थली श्रीसम्मेदशिखर-गिरनार-कैलाशगिरि चम्पापुर-पावापुर-निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माँ जिनवाणी अर्घ

दिव्य ध्वनि का निर्मल जल ले, तत्वों का चन्दन लाया।
अंग पूर्व का अक्षत लेकर, धर्म पुष्प मन खिलवाया।।
नय निक्षेप का नेवज लेकर, गुणस्थान का दीप जला।
अष्ट कर्म का धूम उड़ाया, निराकार फल मोक्ष मिला।।
चारों अनुयोगों से पूरित, जिन आगम को जान रहे।
अष्ट द्रव्य मय अर्घ्य चढ़ाकर, जिनवाणी सम्मान करें।।

ॐ ह्रीं श्री जिनसर्वांगोद्भव-गणधर-ग्रहीत-द्वादशांग-मय-श्रुत-देवतायै: अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन कम नौ करोड़ मुनिराजों का अर्घ्य

तीन घटाकर नौ करोड़ की, संख्या मुनिवर की जानो।
धरती पर जीवन्त जिनेश्वर, उन पर श्रद्धा हित मानो।।

तपसी जल से भिन्न कमल वत्, जीवन अपना जीते हैं।
ढाई द्वीप के मुनिराज को, अर्घ समर्पित करते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं अढाईद्वीप-मध्ये-तीन-कम-नौ-करोड़-मुनिवरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणाचार्य श्री पुष्पदंत सागर जी का अर्घ्य

अरमानों की थाली जोयी, नयनों में जल भर लाया।
सुनहिल भावों की केशर ले, शब्द पुष्प तन्दुल लाया।।
तन नैवेद्य बना मन दीपक, मद यौवन की धूप बना।
तव पद में अर्पित सिर फल, पूजन का यह अर्घ बना।

दोहा

तन मन धन अर्पण किया, रहा न कुछ भी शेष।
अष्ट द्रव्य से पूज कर, पाऊँ जिनका भेष।।

ॐ ह्रूं श्री 108 गणाचार्य-पुष्पदंत-सागर-जी-महाराज-अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपमीति स्वाहा।

आचार्य श्री सौरभ सागर जी का अर्घ्य

पिच्छी लेकर नग्न रहे, और केश लोंच जो करते हैं।
तन श्रृंगार रहित वह होकर, बाईस परिषह सहते हैं।।
स्व आत्म कल्याण करे, और पर को मार्ग बताते हैं।
सुलझाते हैं जो मन की ग्रंथियाँ सौरभ सागर जी कहलाते हैं।।

ॐ ह्रूं संस्कार-प्रणेता-आचार्यश्री 108 सौरभ-सागर-जी गुरुदेव-चरण कमलेभ्यो अनर्घ-पद-प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महार्घ्य

(गीता छंद)

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चावसों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भावसों।।1।।
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रचे गणी।
पूजूँ दिगम्बर-गुरुचरण शिव हेतु सब आशा हनी।।2।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म-दशविधि दया-मय पूजूँ सदा।
जजुँ भावना षोडश-रत्नत्रय जा बिना शिव नहिं कदा।।3।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय जजूँ।
पन मेरु नंदीश्वर, जिनालय खचर, सुर, पूजित भजूँ।।4।।
कैलाश श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा।।5।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस वसु जपि होय पति शिवगेह के।।6।।

दोहा

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहुविधि भक्ति बढ़ाय।।7।।

ॐ ह्रीं भावपूजा भाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकालवंदना करे करावे भावना भावे श्री अरहंतजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पंच परमेष्ठिभ्यो नमः, प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यनुयोगेभ्यो नमः, दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो नमः, उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः, जल के विषैं थल के विषैं आकाश के विषैं गुफा के विषैं पहाड़ के विषैं नगर नगरी विषैं ऊर्ध्वलोक मध्यलोक पाताललोक विषैं विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यालय जिनबिम्बेभ्यो नमः। विदेहक्षेत्रे विद्यमान बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः, पाँच भरत पाँच ऐरावत दशक्षेत्र संबंधी तीस चौबीसी के सातसौ बीस जिनराजेभ्यो नमः, नन्दीश्वरद्वीप संबंधी बावन जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः, पंचमेरुसंबंधी अस्सी जिनचैत्यालयस्थ-जिनबिम्बेभ्यो नमः, सम्मेदशिखर कैलाश चंपापुर पावापुर गिरनार सोनागिर मथुरा तारंगा आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः, जैनबद्री मूडबिद्री देवगढ़ चन्देरी पपौरा हस्तिनापुर अयोध्या राजगृही चमत्कार जी श्रीमहावीरजी

पद्मपुरी तिजारा बड़ागाँव पुष्पगिरी, सौरभांचल, मंशापूर्ण महावीर आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः, श्री चारणऋद्धिधारी सप्तपरमर्षिभ्यो नमः, ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपावन्तं श्रीवृषभादि महावीरपर्यन्तं चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे............नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे........... मासे............शुभे............पक्षे शुभ............तिथौ..... ....वासरे मुनि आर्यिकानां श्रावक श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं (जलधारा) अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्यं सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांति पाठ (हिन्दी)

शांतिनाथ! मुख शशि उनहारी, शील गुण व्रत, संयमधारी।
लखन एक सौ आठ विराजैं, निरखत नयन कमल दल लाजें॥1॥

पंचम चक्रवर्ती पदधारी, सोलम तीर्थंकर सुखकारी।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिननायक, नमौं शांतिहित शांतिविधायक॥2॥

दिव्य विटप पहुपन की वरषा, दुंदुभि आसन वाणी सरसा।
छत्र चमर भामंडल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी॥3॥

शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगत् पूज्य पूजौं सिरनाई।
परम शांति दीजे हम सबको, पढ़ें तिन्हें पुनि चार संघ को॥4॥

पूजें जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके, इंद्रादिदेव अरुँ पूज्य पदाब्ज जाके।
सो शांतिनाथ वर वंश जगत् प्रदीप, मेरे लिए करहु शांति सदा अनूप॥5॥

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीन को औ यतिनायकों को।
राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले, कीजे सुखी हे जिन! शांति को दे॥6॥

होवे सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समय पै, तिलभर न रहे व्याधियों का अंदेशा।

होवे चोरी न जारी, सुसमय वरषे हो न दुष्काल मारी।
सारे ही देश धारें, जिनवर वृष को जो सदा सौख्यकारी॥7॥

घाति कर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज।
शांति करें सब जगत् में, वृषभादिक जिनराज॥8॥

शास्त्रों का हो, पठन सुखदा, लाभ सत्संगती का।
सद्वृत्तों का, सुजस कहके, दोष ढाँकू सभी का॥9॥

बोलूँ प्यारे, वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ।
तौ लौ सेऊँ, चरण जिन के मोक्ष जौ लौ न पाऊँ।।10।।

तव पद मेरे हिय में, मम हिय तेरे पुनीत चरणों में।
तबलौं लीन रहे प्रभु, जबलौं पाया न मुक्ति पद मैंने।।11।।

अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुड़ाहु भवदुःख से।।12।।

हे जगबंधु जिनेश्वर! पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मों का क्षय सुबोध सुखकारी।।13।।

विसर्जन पाठ (हिन्दी)

बिन जाने या जान के, रही टूट जो कोय।
तुम प्रसाद तैं परम गुरु, सो सब पूरन होय।।
पूजन विधि जानूँ नहीं, नहिं जानूँ आह्वान।
और विसर्जन भी नहीं, क्षमा करो भगवान्।।
मंत्र हीन धन हीन हूँ, क्रिया हीन जिनदेव।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव।।
श्रद्धा से आराध्य पद, पूजे भक्ति प्रमाण।
पूजा विसर्जन मैं करूँ, सदा करो कल्याण।।
आए जो जो देवगण, पूजे भक्ति प्रमाण।
ते अब जावहु कृपा कर, अपने अपने थान।।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि

(इसके पश्चात् खड़े होकर आरती करें)

आसिका लेने का पद

श्री जिनवर जी की आसिका, लीजे शीश चढ़ाए।
भव-भव के पातक कटें, दुःख दूर हो जाए।।

(स्तुति या भजन आदि बोलते हुए वेदी सहित प्रतिमाजी की तीन प्रदक्षिणा देकर धोक देनी चाहिए)

।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

कुछ विशेष जाप

1. ॐ ह्रीं नमो अर्हते रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा।
2. ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं असिआउसा अप्रतिहत-शक्ति भवतु ह्रीं नमः।
3. ॐ श्रीं ह्रीं अर्हं श्री नमः।
4. ॐ ह्रीं श्रीं पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय सर्वसौख्यं कुरु कुरु नमः।
5. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असिआउसा अनाहत-विद्यायै णमो अरिहंताणं मम सर्व विघ्न शान्तिं कुरु कुरु स्वाहा।
6. ॐ ह्रीं श्रीं वद् वद् वाग्वादिनी ह्रीं नमः।
7. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्टबुद्धिणं।
8. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयं बुद्धाणं।
9. ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं श्रीं क्लीं ब्लूं क्रौं ॐ ह्रीं नमः।
10. ॐ ह्रीं ऐं क्लीं ह्रौं नमः।
11. ॐ ह्रीं ऐं क्लीं ब्लूं ऐं अर्हं महालक्ष्म्यै नमः।
12. ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं ऐं अर्हं मम इष्ट कार्य सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।
13. ॐ ह्रीं श्रीं मंशापूर्ण महावीर जिनेद्राय नमः रक्ष-रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा।
14. ॐ ह्रीं णमो भगवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स जस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जूए वा विवादे वा रणंगणे वा थंभणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपराजिदो भवदु मे रक्ख रक्ख स्वाहा वर्धमान-मन्त्रेण सर्वरक्षा भवतु स्वाहा।

जीवन परिचय

आचार्य श्री 108 सौरभ सागर जी महाराज

जन्म	: कार्तिक कृष्णपक्ष अष्टमी (गुरुवार) 22 अक्टूबर, 1970 जसपुरनगर (छत्तीसगढ़)
बचपन का नाम	: सुरेन्द्र कुमार
पिता का नाम	: श्री श्रीपाल जैन
माता का नाम	: श्रीमती चन्द्रप्रभा जैन
गृहत्याग	: शुक्रवार, 08 अप्रैल, 1983
क्षुल्लक दीक्षा	: शुक्रवार, 17 जनवरी, 1986 छत्तरपुर (म.प्र.)
ऐलक दीक्षा	: सोमवार, 27 जून, 1988 अंदेश्वर पार्श्वनाथ (राज.)
मुनि दीक्षा	: 21 सितम्बर, 1994 इटावा (उत्तर प्रदेश)
दीक्षा गुरु	: पुष्पगिरि प्रणेता गणाचार्य श्री पुष्पदंतसागरजी महाराज
आचार्य पद	: 10 अप्रैल, 2022 (पुष्पगिरि)
राजकीय अतिथि	: झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश एवं उत्तराखंड

:: विशेष कृति ::

1. सिद्धान्त शतक
2. जैनत्व का बोध
3. धर्म गगन में करें विहार
4. प्रेरक प्रवचन
5. फैशन एक अभिशाप
6. शूलों की सेज
7. दहकते अँगारे
8. आओ लौट चलें
9. पत्थर की मानवाकृति
10. प्रतिमा से प्रतिभा जगे
11. सृजन के द्वार पर
12. हे इन्सान! मत बन तू शैतान
13. जैन शिक्षा भाग-1, 2, 3, 4
14. आराध्य आराधना
15. मंगलं पुष्पदन्ताद्यो
16. जैनाचार संहिता
17. श्रावकाचार संहिता
18. श्रमणाचार संहिता
19. भक्ति-सौरभ
20. अर्हत् चरण सपर्या (जिन-देवार्चना)

विधान

21. श्री भक्तामर स्तोत्र
22. श्री कल्याण मन्दिर
23. स्वयंभू चौबीसी
24. श्री मंशापूर्ण महावीर
25. चौंसठ ऋद्धि सिद्धि
26. आचार्य पुष्पदन्तसागर
27. श्री सम्मेदशिखर
28. माँ जिनवाणी
29. कर्मदहन
30. श्री नवग्रह जिनदेव
31. पुष्पगिरी तीर्थ
32. जैन विधान संग्रह

:: पुण्यार्जक ::

मनोज कुमार जैन, ललित जैन, अतिशय जैन, अर्पण जैन
मै. पारसनाथ पोली बटन, दिल्ली-110031 मो.: 9810056286

मुकेश जैन सौरभ जैन (सौरभसागर फैब्रिक्स)
बिहारी कॉलोनी, दिल्ली

श्री शिवसेन जैन, पंकज जैन, धीरज जैन
बलबीर नगर, दिल्ली

श्री संजय जैन श्रीमती रेणु जैन
108 "सौरभांचल" पुष्पांजलि, दिल्ली

विपुल जैन पारस जैन (चिलकाना वाले)
आजाद नगर, दिल्ली

श्री सुभाष चन्द जैन, अचिन जैन, अंकित जैन (उमरपुर वाले)
बलबीर नगर, दिल्ली

प्रवीण जैन दीपक जैन अक्षत जैन (खेकड़ा वाले)
बलबीर नगर, दिल्ली

पवन जैन गौरव जैन निक्षेप जैन (शामली वाले)
महावीर ओवरसीज, दिल्ली

सतीश जैन देवेश जैन (ककडीपुर वाले)
लक्ष्मी नगर, दिल्ली

उमेश जैन सीमा जैन
कृष्णा नगर, दिल्ली

सचिन जैन, विकास जैन, गौरव जैन
ए-37, सूरजमल विहार, दिल्ली

विकास जैन निधि जैन
कृष्णा नगर, दिल्ली

श्रीमती सुदेश जैन धर्मपत्नी स्व. श्री अनिल कुमार जैन
गौरव जैन, खुशबू जैन
अंसारी रोड़, दरियागंज, दिल्ली

नीलू जैन, श्रीमती कल्पना जैन, श्री रवि कुमार जैन
नया बाजार, ग्वालियर

प्रदीप कुमार जैन, मंजू जैन, अक्षय जैन,
आरुषि जैन, अवन्या जैन
सूर्य नगर, दिल्ली

सुधीर कुमार जैन (पप्पू पान वाले), मोनू जैन,
गुणिका जैन, निष्ठा जैन,
(राजगढ़ कॉलोनी) दिल्ली

मुकेश जैन, प्रीति जैन, दर्शित जैन, सुन्ह जैन
भोलानाथ नगर, दिल्ली

पवित्र जैन (जय पारस गोल्डटच सेन्टर)
कृष्णा नगर, दिल्ली

श्री संजीव जैन (पम्मी), श्रीमती संगीता जैन
गुलमोहर ग्रीन, मोहन नगर, साहिबाबाद, गाजियाबाद

पलक जैन
गुलमोहर ग्रीन, मोहन नगर, साहिबाबाद, गाजियाबाद

अक्षत जैन
गुलमोहर ग्रीन, मोहन नगर, साहिबाबाद, गाजियाबाद

श्रीमती मीना जैन धर्मपत्नी स्व. श्री ओमप्रकाश जैन (बट्टनलाल)
श्री मनोज जैन श्रीमती मंजू जैन, मनीष जैन
बलबीर नगर, दिल्ली

विधान पुस्तक प्राप्ति स्थल

सौरभांचल प्रकाशन

गणधर गारमेन्टस
IX/842, प्रेम गली नं. 3-सी,
मुलतानी मौहल्ला, सुभाष रोड,
गांधी नगर, दिल्ली-110031

मनोज कुमार जैन
E-17/9, कृष्णा नगर,
दिल्ली-110051
मो. : 9810056286

सौरभांचल प्रकाशन

साहित्य प्रकाशन में ऑन लाईन सहयोग करने के लिए

Scan & Pay

UPI ID : 8448677688@ibl

A/c No.	: 45922900000921
A/c Name	: SAURBHANCHAL PRAKASHAN
Bank	: DCB BANK LIMITED
IFSC Code	: DCBL0000459

8448677688

कृपया इस नम्बर पर (व्हाटसअप)
जमा राशि का स्क्रीन शाट भेजकर रसीद प्राप्त करें।

संस्कार प्रणेता ज्ञानयोगी
जीवन आशा हॉस्पिटल प्रेरणा स्रोत
आचार्य श्री 108 सौरभसागर जी
महाराज